

इतिहास-दर्पण

[भारतवर्ष का इतिहास]

भाग २

B.N. Varma लेखक
प्रोफेसर बी० एन० वर्मा, एम० ए०, एल-एल० बी०
इतिहास विभाग, आगरा कालेज, आगरा

प्रकाशक
रामप्रसाद एण्ड ब्रदर्स
आगरा

द्वितीयवार] १९३५ [मूल्य १)

Printed by RAMZAN ALI SHAH
at the National Press,
Allahabad.

विषय-सूची

अध्याय १

योरोपीय जातियों का आगमन

पुर्तगाल निवासियों का आना—प्राचीन काल में दक्षिण के राज्यों का व्यापार लालसागर द्वारा पश्चिमी देशों से होता था। परन्तु जब अरब के मुसलमानों ने फ़ारस और मिश्र आदि देशों पर अपना अधिकार कर लिया तो भारत का व्यापार भी उन्हीं के हाथों में चला गया। भारत के व्यापार से मुसलमानों की उन्नति देख कर योरोप की जातियों को भी भारत से व्यापार करने की इच्छा हुई। वे भारत में आने का कोई नया मार्ग ढूँढ़ने लगीं। १४९८ ई० में एक पुर्तगाल देश का निवासी, जिसका नाम वास्को डी गामा था, अपने तीन छोटे छोटे जहाज़ों सहित कालीकट आ पहुँचा। वह अफ्रीका के दक्षिण में उत्तमाशा अन्तरीप (केप आफ़ गुड होप) होता हुआ आया था। उसने कालीकट के राजा ज़मोरिन से भेंट की। राजा ने उसका बड़ा आदर-सत्कार किया। एक वर्ष बाद वह अपने देश को वापस चला गया। वहाँ पहुँच कर उसने भारत की धन-सम्पत्ति का हाल अपने देश-वासियों को सुनाया। इससे पुर्तगाल के लोगों के हृदय में भारत से व्यापार करने की इच्छा और भी प्रबल हो उठी।



ज़मोरिन के दरबार में वास्को डी गामा

नये जल-मार्ग का पता लग जाने पर भारत में पुर्तगाल देश से कई व्यापारी आये। इन्होंने कालीकट, कोचिन और कनानोर में अपनी दूकानें खोल लीं। धीरे धीरे इनकी शक्ति बढ़ने लगी और १५१० ई० में अलबुकर्क ने जो पूर्व के प्रान्तों का गवर्नर था, गोआ पर अधिकार कर लिया। वह भारत में पुर्तगाली साम्राज्य की नींव डालना चाहता था। हिन्दुओं के प्रति उसका व्यवहार अच्छा था। उनको उसने अपने दफ़्तरों में रक्खा। उसने उनकी शिक्षा आदि का भी उचित प्रबन्ध किया; परन्तु मुसलमानों से वह बहुत चिढ़ा हुआ था। उसने उनके साथ कठोर व्यवहार करना शुरू किया। उन्हें किसी पद पर नियुक्त न किया। उनकी विधवाओं को ईसाई हो जाने के लिए बाध्य किया। उनके व्यापार को भी वह छीन लेना चाहता था। मलका का द्वीप, जो मसाले के व्यापार के लिए प्रसिद्ध था, उसने जीत लिया। उसने फ़ारस की खाड़ी में उरमुज़ पर पुर्तगाल का झंडा फहरा दिया।

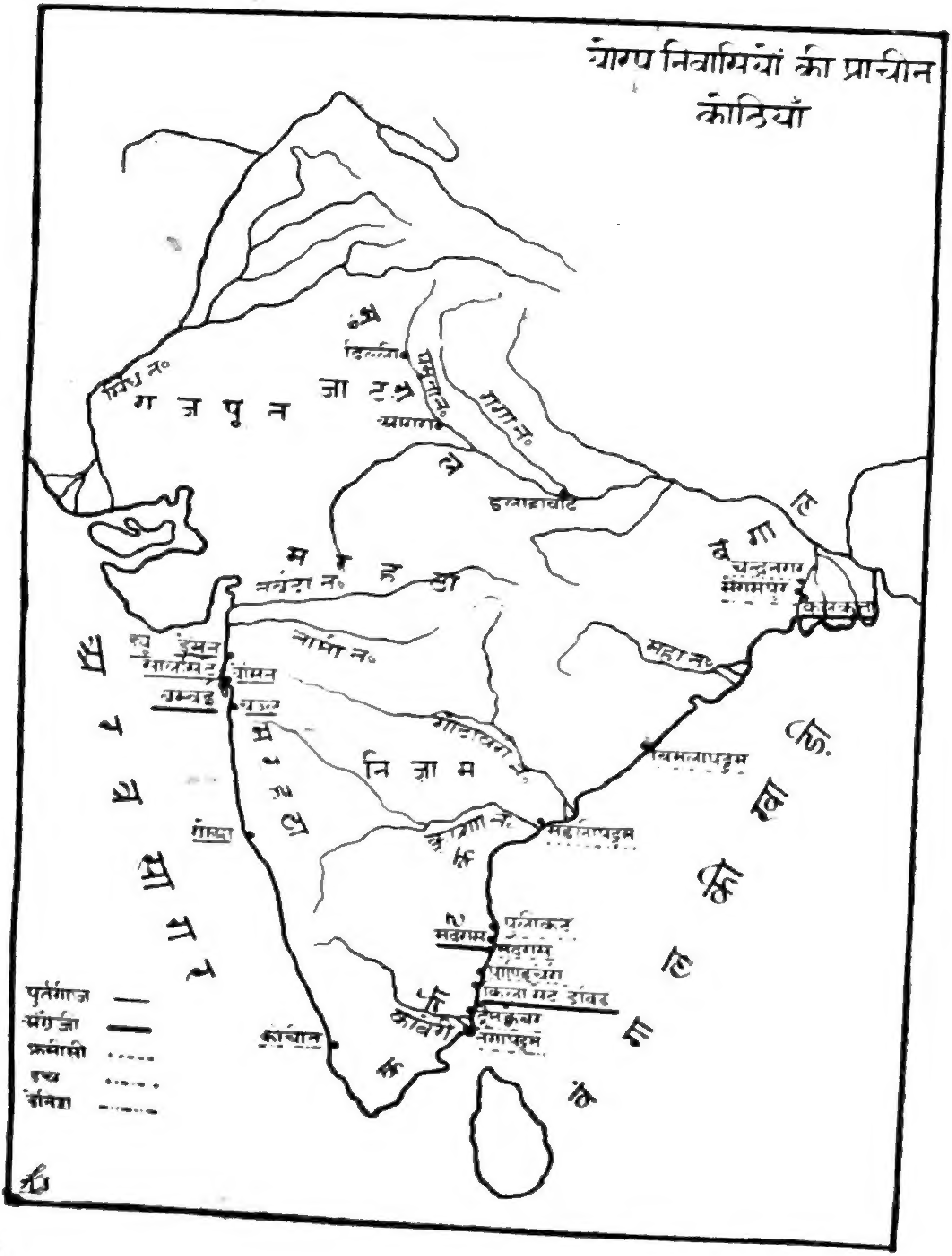


अलबुकर्क

अलबुकर्क के बाद उसकी नीति का पालन न हो सका। १५६० ई० में धार्मिक अत्याचार बहुत बढ़ गये। मुसलमान लोग तो पहले ही से बिगड़े हुए थे। अब धार्मिक अत्याचार के कारण हिन्दू भी चिढ़ गये। इधर पुर्तगाल की सरकार की आर्थिक अवस्था भी खराब हो चली। इस समय योरोप की सभी जातियाँ उन्नति कर रही थीं। अतः पुर्तगाल से जातीय द्वेष के कारण भी झगड़े होने लगे। धीरे धीरे पुर्तगाल के हाथ से सभी कोठियाँ छिन गईं। उनके पास गोआ, डेमन और ड्यू के अतिरिक्त और कुछ न रहा।

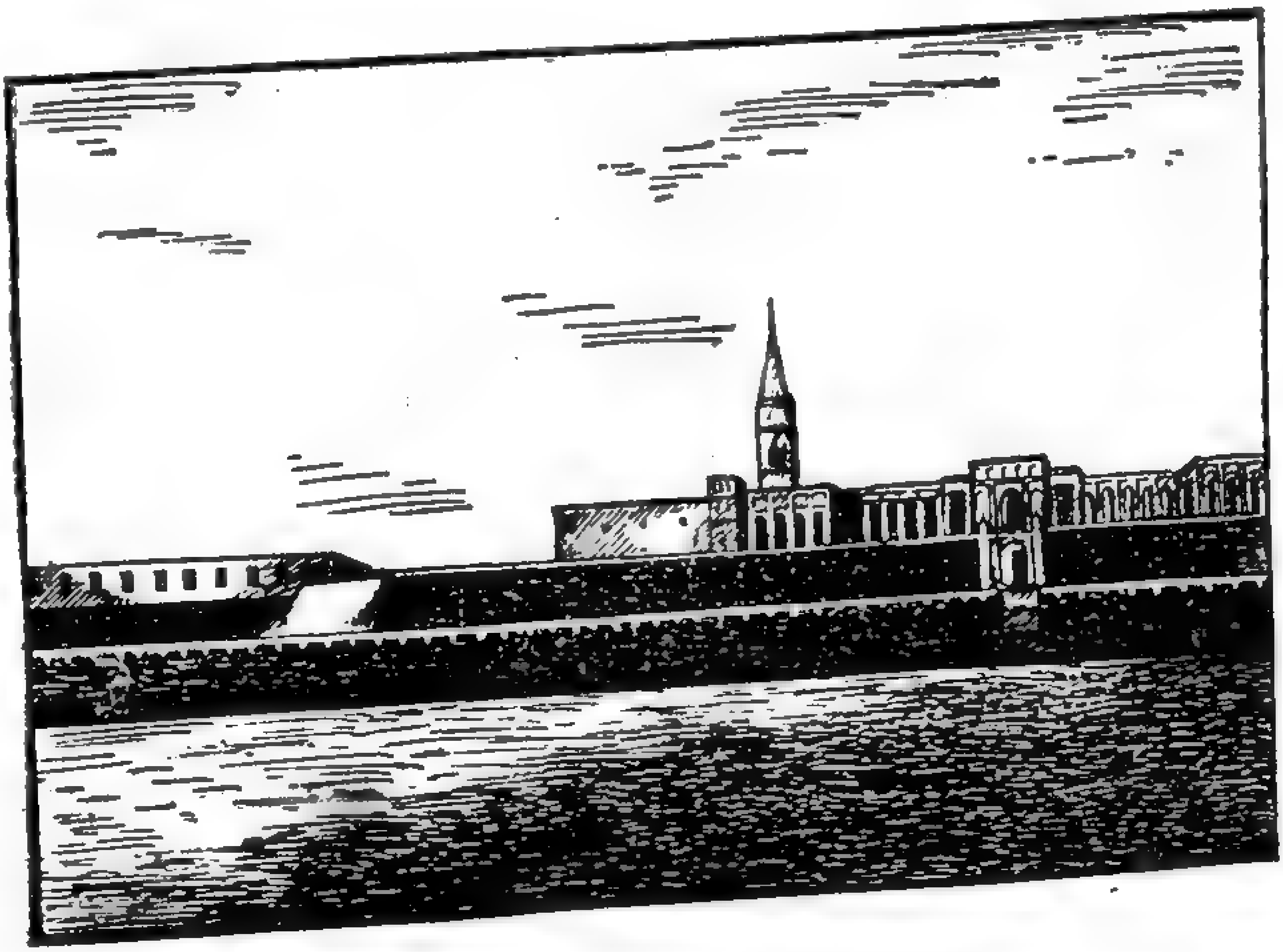
डच लोगों का आगमन—पुर्तगाल को भारत के व्यापार से लाभ उठाते देखकर हालैण्ड के डच लोगों का भी मन ललचाया। उन्होंने मद्रास में नगम-पट्टम पर अधिकार कर लिया और मलक्का तथा सीलोन भी जीत लिया; परन्तु उनका विचार साम्राज्य स्थापित करने का न था। वे केवल व्यापार ही करना चाहते थे। इसलिए वे भारत में न बसे, मलय द्वीप समूह में ही रहे। भारत में उनकी बस्तियाँ अधिकतर मलाबार और कारोमंडल तट पर थीं। पहिले तो उनकी बड़ी उन्नति हुई; परन्तु अँग्रेजों के आने पर लड़ाई-झगड़े शुरू हो गये और अँग्रेजों ने उनको भारत से निकाल दिया।

डेन्मार्क के निवासी—डेन्मार्क के रहने वाले डेन्स लोगों ने भी ईस्ट इंडिया नाम की एक कम्पनी बनाई। वे १६२० ई० में ट्रेन्कोबार में एक कोठी बना कर व्यापार करने लगे। [illegible]६ ई० में उन्होंने सीरामपुर में भी एक कोठी बनाली; परन्तु इन लोगों ने


योरप निवासियों की प्राचीन
कोठियाँ
दिल्ली
आगरा
इलाहाबाद
नर्मदा न०
निज़ाम
चन्द्रनगर
कलकत्ता
बम्बई
गोआ
कावेरी
मद्रास
पुलीकट
किला सेंट डेविड
पुर्तगाल
अंग्रेज़
फ्रांसीसी
डच
डेनिश

कोई विशेष उन्नति नहीं की और १८४५ ई० में अपनी सब कोठियाँ अँग्रेजों के हाथ बेच दीं।

अँग्रेजों की ईस्ट इन्डिया कम्पनी–१५८८ ई० में अँग्रेजों ने स्पेन के एक बड़े जहाजी बेड़ा अरमाड़ा को हरा दिया। इस जीत से उनके मन में राष्ट्रीयता के भाव की बड़ी वृद्धि हुई और १६०० ई० में उन्होंने भारत से व्यापार करने के लिए एक कम्पनी बनाई। १६०८ ई० में कप्तान हाकिन्स मुग़ल सम्राट् जहाँगीर के दर्बार में गया और उसने कोठी खोलने की आज्ञा माँगी। जहाँगीर ने उसको प्रार्थना स्वीकार कर ली। कुछ समय बाद पुर्तगालियों की चालाकी से यह आज्ञा वापस ले ली गई।



कलकत्ता की कोठी फोर्ट विलियम

१६१५ ई० में सर टामस रो भारत में आया और उसने अपनी बुद्धिमानी से जहाँगीर से सूरत में कोठी बनाने की आज्ञा ले ली। सूरत में अँग्रेजों की कोठी खुल गई और धीरे धीरे उन्होंने भारत के और भी मुख्य स्थानों में कम्पनी की शाखाएँ खोल दीं।

१६२५ ई० के लगभग बंगाल की खाड़ी की ओर भी कम्पनी ने पैर फैलाया और मछली पटम तथा अरगाँव में कोठियाँ खोल लीं। १६३६ में अँग्रेज़ों ने दक्षिण के पूर्वी तट पर कुछ जमीन खरीद कर मद्रास की नींव डाली। १६६८ ई० में बम्बई भी कम्पनी को मिल गया। १६९० ई० में उन्होंने एक कोठी कलकत्ता में खोली। इस प्रकार मुख्य बन्दरगाहों पर अधिकार हो जाने से कम्पनी का व्यापार खूब बढ़ा। फल यह हुआ कि कम्पनी का स्वरूप ही बदलता चला गया और अन्त में अँग्रेज़ों का साम्राज्य भारत में स्थापित हो गया।

फ़्रांसीसियों की कम्पनी—योरोप की जातियों में फ़्रांसीसी लोग सब से पीछे भारत में तिजारत करने आये। १६४२ ई० में फ्रांस के मंत्री रिशलू के उद्योग से एक कम्पनी बनाई गई; परन्तु कुछ सफलता प्राप्त न हुई और शीघ्र ही वह कम्पनी बैठ गई। इसके बाद १६६४ ई० में एक कम्पनी फिर बनी। इसने १६६८ में सूरत में अपनी कोठी खोल ली। १६७४ ई० में फ़्रांसीसियों ने पांडिचरी की नींव डाली और कुछ वर्ष बाद बंगाल में चन्द्रनगर ले लिया। धीरे धीरे उन्होंने दो एक और स्थानों पर भी अधिकार कर लिया और खूब व्यापार में उन्नति की। फ्रांस वाले भी भारत में अपना साम्राज्य स्थापित करना चाहते थे;

परन्तु वे अँग्रेजों का सामना न कर सके। न तो उनकी आर्थिक स्थिति ही अच्छी थी और न वे अँग्रेजों से व्यापार करने में ही अधिक कुशल थे। हाँ राज्यशक्ति का भरपूर सहारा होने के कारण उनकी सैनिक शक्ति अवश्य अच्छी थी और इसलिए कुछ काल तक वे अँग्रेजों के सामने ठहर सके। अन्त में अँग्रेजों की ही विजय हुई और पांडिचरी, कारीकल, माही और चन्द्रनगर को छोड़ कर उनके पास भारत में कोई भी स्थान न रहा।

प्रश्न

१—योरोप की कौन कौन सी जातियाँ भारतवर्ष में तिजारत करने आईं? और उन्होंने कहाँ कोठियाँ खोलीं? संक्षेप में लिखो।

२—पुर्तगाल के निवासी भारत में साम्राज्य स्थापित करने में क्यों असफल रहे?

३—अँग्रेज़ लोग भारत में कब आये? इनका उद्देश्य क्या था? और ये उस उद्देश्य में कहाँ तक सफल हुए? संक्षेप में लिखो।

४—सत्तरहवीं शताब्दी में योरोप निवासियों की कोठियाँ भारत में कहाँ कहाँ थीं? नक़शा खींच कर दिखलाओ।

अध्याय २

दक्षिण में अँग्रेज़ और फ़्रांसीसी

भारत में जितनी भी योरोपीय जातियाँ तिजारत करने आईं, उन में अँग्रेज़ और फ़्रांसीसी ही अधिक शक्तिशाली थे। दोनों ने मालाबार और कारोमंडल के तट पर पास पास अपनी अपनी कोठियाँ खोलीं और दोनों ही भारत के व्यापार से अधिक से अधिक लाभ उठाना चाहते थे। इसलिए यह असम्भव था कि इनमें आपस में ईर्ष्या-द्वेष न होता और न खटकती। आरम्भ में इनमें परस्पर मित्रता थी। दोनों ही की शक्ति भारत में कमज़ोर थी, और दोनों ही समझते थे कि लड़ाई-झगड़ा करने से दोनों के व्यापार को बड़ी हानि पहुँचेगी। इनको यह भी डर था कि आपस में झगड़ा करने से दक्षिण का सूबेदार न बिगड़ जाय और इनको भारत से निकाल दे। १८ वीं सदी के आरम्भ में जब योरोप में अँग्रेज़ों और फ्रांसीसियों के बीच युद्ध हुआ तब भी भारत में इन लोगों ने मित्रता का ही व्यवहार रक्खा। यही नहीं बल्कि फ्रांसीसियों ने अँग्रेज़ों की कोठी में अपना बहुत सा माल असबाब भेज दिया। अँग्रेज़ों ने उसकी यथाशक्ति रक्षा की; परन्तु ज्यों ज्यों इन लोगों की तिजारत बढ़ती गई, आपस में ईर्ष्या-द्वेष भी बढ़ता ही गया। १७३६ ई० के लगभग इंगलैंड

से कम्पनी के संचालकों ने भारतीय अँग्रेज़ी गवर्नर को लिखा कि फ्रांसीसियों की चालों पर पूर्ण दृष्टि रखना। इससे पता चलता है कि उस समय तक व्यापारिक द्वेष बहुत बढ़ चुका था और अँग्रेज़ और फ्रांसीसी एक दूसरे का अविश्वास करते थे।

दक्षिण की दशा—मुग़ल बादशाहों के समय में दक्षिणी देशों पर शासन करने के लिए एक सूबेदार रहा करता था; परन्तु औरंगज़ेब की मृत्यु के बाद दक्षिण के सूबेदार आसफ़जाह निज़ामुल मुल्क ने हैदराबाद में अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया। कर्नाटिक भी उसके आधीन था और वहाँ का शासन एक नायब द्वारा होता था। त्रिचनापली और तंजोर में मरहठों का राज्य था। मैसूर में एक हिन्दू राजा राज्य करता था। इसके अतिरिक्त पोलीगार लोगों के छोटे छोटे कई राज्य थे। मालावार के तट पर मद्रास से लगभग ८५ मील दूर पांडिचरी में फ्रांसीसियों की एक बहुत बड़ी कोठी थी। यहाँ पर उन्होंने एक क़िला भी बना लिया था। मद्रास अँग्रेज़ों के पास था और उसी से सटा हुआ उनका सेन्ट डेविड का प्रसिद्ध क़िला था।

ड्यूमा—(१७३५-४१)—१७३५ ई० में ड्यूमा फ्रांसीसी उपनिवेशों का हाकिम नियुक्त होकर भारत में आया। उसने मरहठों को लड़ाई में हराया और कर्नाटिक के नवाब से मित्रता करके उसके द्वारा कारीकल पर अधिकार कर लिया। अब तो फ्रांसीसियों की भारत में धाक जम गई। दिल्ली सम्राट् ने भी ड्यूमा को नवाब की पदवी और ५०० का मनसब दिया।

डूप्ले—१७४१ ई० में डूप्ले गवर्नर हुआ। वह दक्षिण की दशा

से भली भाँति परिचित था। वह बड़ा बहादुर और दूरदर्शी था। उसने सोचा कि यदि अँग्रेज़ों को भारत से निकाल दिया जाय तो सब व्यापार फ़्रांसीसियों के हाथ में आ जायगा। फिर फ़्रांस का साम्राज्य भी स्थापित करना सुगम हो जायगा। परन्तु इस काम में सफलता प्राप्त करने के लिए कर्नाटिक के नवाब से मित्रता रखना भी अति आवश्यक था। डूप्ले इन्हीं विचारों में मग्न था कि योरोप में अँग्रेज़ों और फ़्रांसीसियों के बीच युद्ध छिड़ गया।

कर्नाटिक की पहली लड़ाई–(१७४४-४८) योरोप में लड़ाई छिड़ते ही भारत में भी अँग्रेज़ों और फ़्रांसीसियों के बीच युद्ध होने लगा। पहले तो डूप्ले कुछ झिझका क्योंकि न तो वह एक दम लड़ने के लिए तैयार ही था और न पांडिचरी का क़िला ही इतना मज़बूत था। परन्तु जब एक अँग्रेज़ी बेड़े ने व्यापार की वस्तुओं से लदे हुए एक फ़्रांसीसी बेड़े को जिसमें डूप्ले की आयु भर की सारी कमाई थी नष्ट कर डाला तब वह जल भुन गया। उसने फ़ौरन मारीशस द्वीप के फ़्रांसीसी हाकिम लाबोर्डने को मद्रास पर आक्रमण करने के लिए बुलाया। पर उसे यह भी भय था कि कर्नाटिक का नवाब अनवरुद्दीन उसके विरुद्ध न हो जाय, इस लिये उसने नवाब को मद्रास देने का लालच दिया, जिससे वह शान्त रहे। लाबोर्डने ने आते ही मद्रास पर अधिकार कर लिया। लाबोर्डने और डूप्ले दोनों ही मद्रास के व्यापारियों को लूटना चाहते थे। लाबोर्डने अँग्रेज़ों से बहुत सा रुपया लेकर और मद्रास वापस करने को वचन देकर मारिशश चला गया। अब डूप्ले की बारी आई। उसने मद्रास पर फिर

अधिकार कर लिया और खूब लूट-मार की। अरकाट के नवाब ने भी एक फौज डूप्ले से लड़ने को भेजी; परन्तु फ्रांसीसियों ने उसे मार भगाया। फिर फ्रांसीसियों ने सेन्ट डेविड पर आक्रमण किया; पर वे सफल न हुए। १७४७ ई० में एक अँग्रेज़ी बेड़ा आ पहुँचा और उसने पांडिचरी को घेर लिया; परन्तु इसमें अँग्रेज़ों को बड़ी हानि उठानी पड़ी। १७४८ ई० में योरोप में इंगलैंड और फ्रांस से सन्धि हो गई। इस लिए भारत में भी लड़ाई बन्द होगई। मद्रास अँग्रेज़ों को वापस मिल गया।

कर्नाटिक की दूसरी लड़ाई—(१७५०-५४)—१७४८ की सन्धि से डूप्ले सन्तुष्ट न हुआ। उसकी सब योजनायें विफल हो गई थीं; परन्तु कर्नाटिक की पहिली लड़ाई ने उसका साहस और भी बढ़ा दिया था। उसे यह भी अनुभव हो गया था कि योरोपीय सेना देशी फौजों से कहीं बढ़ कर है। वह अँग्रेज़ों से लड़ने का अवसर ढूँढ़ने लगा; परन्तु जब तक योरोप में दोनों जातियों में मेल था भारत में कैसे लड़ाई हो सकती थी। इसलिए उसने यही निश्चय किया कि देशी झगड़ों का सहारा लेकर ही अँग्रेज़ों से युद्ध करना चाहिए।

दक्षिण की दशा—१७४८ ई० में निज़ाम आसफ़जाह की मृत्यु होगई। उसका लड़का नासिरजंग गद्दी पर बैठा; परन्तु निज़ाम के पोते मुज़फ्फरजंग ने फ्रांसीसियों के बल पर उसका विरोध किया। डूप्ले इस अवसर पर कब चूक सकता था। उसने सोचा कि यदि किसी तरह कर्नाटिक और हैदराबाद पर फ्रांसीसियों की धाक जम जाय तो कुल दक्षिण हाथ में आ जायगा। उसने मुज़फ्फरजंग को सहायता देना स्वीकार कर

लिया और इधर कर्नाटिक के नवाब अनवरउद्दीन के विरुद्ध उसके दामाद चाँदा साहब को खड़ा कर दिया। मुज़फ्फ़रजंग और चाँदा साहब मिल गये। दोनों सेनाओं ने फ्रांसीसियों की सहायता से कर्नाटिक पर अधिकार कर लिया। अनवरुद्दीन मारा गया और उसका लड़का मुहम्मद अली त्रिचनापली भाग गया।

अब फ्रांसीसी लोग मुज़फ्फ़रजंग को नवाब बनाने का प्रयत्न करने लगे। उधर नासिरजंग ने अँग्रेज़ों से सहायता माँगी। अँग्रेज़ों ने मेजर लारेंस को एक सेना सहित भेज दिया। पहले तो नासिरजंग ने चाँदा साहब को हरा दिया और मुज़फ़्फ़रजंग को कैद कर लिया; परन्तु डूप्ले की चालों के सामने उसकी एक न चली। वह धोके से मार डाला गया और मुज़फ़्फ़रजंग १७५० ई० में हैदराबाद का निज़ाम बना दिया गया। डूप्ले ने जेनरल बूसी को हैदराबाद की रक्षा के लिए निज़ाम के पास छोड़ दिया। थोड़े दिन बाद मुज़फ़्फ़रजंग भी एक झगड़े में मार डाला गया और बूसी ने उसकी जगह सलाबतजंग को निज़ाम बना दिया।

अब दक्षिण में फ्रांसीसियों की धाक जम गई। हैदराबाद में सलाबतजंग और कर्नाटिक में चाँदा साहब दोनों उनके बनाये हुए ही राजा राज्य कर रहे थे। यह देख कर अँग्रेज़ लोग बहुत भयभीत हुए। वे सोचने लगे कि यदि फ्रांसीसी ऐसी ही उन्नति करते रहे तो एक दिन अवश्य ही वह उनको भारत से निकाल देंगे। इसलिए वे भी अपनी रक्षा का उपाय ढूँढ़ने लगे।

अर्काट की रक्षा १७५१—इस समय चाँदा साहब ने

त्रिचनापली में मुहम्मद अली को घेर रक्खा था। अँग्रेज़ों को यह चिन्ता हुई कि त्रिचनापली की रक्षा कैसे की जाय। ठीक इसी अवसर पर एक चतुर व्यक्ति ने उनकी इस चिन्ता को मिटा दिया और फ्रांसीसियों और अँग्रेज़ों के युद्ध का तख़्ता पलट दिया। उसका नाम राबर्ट क्लाइव था। उसने मद्रास के गवर्नर से कहा कि अर्काट में चाँदा साहब की सेना कम है; उस पर आक्रमण करना चाहिये। राजधानी को घिरा हुआ देख कर चाँदा साहब त्रिचनापली छोड़ कर चला आयगा और इस प्रकार मुहम्मद अली को छुटकारा मिल जायगा। गवर्नर ने यह बात मान ली और २०० योरोपीय और ३०० देशी सिपाही देकर क्लाइव को अर्काट पर चढ़ाई करने के लिए भेज दिया। इन सिपाहियों को उसने मार्ग में ही युद्ध विद्या सिखा कर कुशल कर दिया और अर्काट पहुँच कर आसानी से क़िला छीन लिया। क्लाइव का अनुमान ठीक निकला। चाँदा साहब ने अपने लड़के रज़ा साहब को क़िला लेने के लिये भेजा। इस अवसर पर क्लाइव ने बड़ी बहादुरी से ५० दिन तक क़िले की रक्षा की। अन्त में मद्रास से और फ़ौज आ गई। रज़ा साहब हार कर भाग गया। इस युद्ध से क्लाइव की प्रतिष्ठा बढ़ गई और अँग्रेज़ों का यश बहुत फैल गया।



मुहम्मद अली

त्रिचनापली पर चढ़ाई—अर्काट से निश्चिन्त होकर क्लाइव

ने मेजर लारेंस के साथ त्रिचनापली पर चढ़ाई की। फ्रांसीसी



क्लाइव

हार गये. चाँदा साहब तंजौर भाग गया और वहाँ मार डाला गया। अब अँग्रेज़ों के हाथ में मद्रास से तंजौर तक का प्रान्त आ गया। उन्होंने मुहम्मद अली को बे रोक-टोक कर्नाटिक का नवाब बना दिया। इस लड़ाई का परिणाम यह हुआ कि कर्नाटिक में अँग्रेज़ों का ज़ोर बढ़ गया और हैदराबाद में फ्रांसीसियों का। १७५२ ई० में क्लाइव छुट्टी लेकर इंगलैण्ड चला गया। वहाँ कम्पनी के संचालकों ने उसका बड़ा आदर किया और एक तलवार उसे भेंट की।

इंगलैण्ड अथवा फ्रांस किसी ने भी इन कम्पनियों को दक्षिण की लड़ाइयों में भाग लेने की आज्ञा न दी थी। इसलिए जब इनका खर्च बढ़ा तब उन्होंने इनको रोकने का यत्न किया। फ्रांस की सर्कार तो डूप्ले से बहुत अप्रसन्न हो गई और १७५४ ई० में उसने उसे भारत से वापस बुला लिया।

कर्नाटिक की तीसरी लड़ाई—१७५६ ई० में फिर योरोप में अँग्रेज़ों और फ्रांसीसियों के बीच लड़ाई छिड़ गई। फ्रांस की सर्कार ने इस बार काउन्ट डि लाली को भारत से अँग्रेज़ों को निकाल देने के लिए भेजा। लाली ने १७५८ ई० में मद्रास घेर लिया; परन्तु हार कर उसे हटना पड़ा। लाली ने एक और बड़ी भारी ग़लती कर डाली। उसने बुसी को हैदराबाद से बुला लिया। इसका परिणाम यह हुआ कि क्लाइव ने जो इस समय इंगलैंड से लौट आया था और बंगाल में था, कर्नल फोर्ड को भेज कर उत्तरी सर्कार पर अधिकार कर लिया। उत्तरी सर्कार निज़ाम ने फ्रांसीसियों को दे रक्खा था। इसकी ४० लाख सालाना की आमदनी थी और इसी से बूसी की सेना का खर्च चलता था। उधर निज़ाम ने भी फ्रांसीसियों का साथ छोड़ दिया। इस प्रकार उनकी हानि पर हानि होती गई। १७६० ई० में सर आयरकूट ने लाली को वांडवाश के पास बुरी तरह से हराया। लाली हार कर पांडिचरी भाग गया। अँग्रेज़ों ने उसे वहाँ जा घेरा। आखिर १७६१ ई० में पांडिचरी भी अँग्रेज़ों के हाथ में आ गया। लाली कैद करके इंगलैण्ड भेज दिया गया। अब फ्रांसीसियों के पास कर्नाटिक में पैर रखने की भी जगह न रह गई।

इसके बाद फ्रांसीसी लोगों की शक्ति बिल्कुल लोप हो गई। वे कभी सिर उठाने में समर्थ न हुए। १७६३ ई० में पेरिस की सन्धि से युद्ध समाप्त हो गया। इसलिए भारत में भी लड़ाई बन्द करनी पड़ी। पांडिचरी फ्रांसीसियों को लौटा दिया गया।

लाली जब १७६३ ई० में फ्रांस पहुँचा तब उसे पकड़ कर

बैस्टील के कैदखाने में डाल दिया गया और २½ साल बाद उसे फांसी दे दी गई। इसमें सन्देह नहीं कि लाली वीर और साहसी था ; परन्तु वह अदूरदर्शी और ज़िद्दी था। इस कारण से भारत में वह फ़्रांस के हित की रक्षा न कर सका।

प्रश्न

१—अठारहवीं सदी में अंग्रेज़ों और फ़्रांसीसियों का परस्पर कैसा व्यवहार था ? इनमें झगड़े क्यों शुरू हुए ?

२—दक्षिण में इस समय कौन कौन सी मुख्य रियासतें थीं ? नक़शा खींचकर दिखलाओ ?

३—अँग्रेज़ों और फ़्रांसीसियों की पहली लड़ाई क्यों हुई ? उसका क्या फल हुआ ?

४—कर्नाटिक की दूसरी लड़ाई क्यों हुई ? इस लड़ाई में क्लाइव ने क्या वीरता दिखलाई ? संक्षेप में लिखो।

५—कर्नाटिक की तीसरी लड़ाई का क्या कारण था ? इस लड़ाई का क्या फल हुआ ?

अध्याय ३

डूप्ले और उसकी नीति

डूप्ले का स्वभाव—इस में सन्देह नहीं कि डूप्ले बड़ा प्रभाव-शाली व्यक्ति था। वह महान शासक और उच्च कोटि का राजनीतिज्ञ ही नहीं था; वरन् संगठन करने में भी बड़ा चतुर था। रोबीला वह ऐसा था कि जिससे जो चाहता वही करा लेता। उसका उदार स्वभाव और अच्छा व्यवहार सब को प्रिय था। आप-त्तियों से वह कभी न घबड़ाता था। आपत्ति आने पर वह शान्त चित्त होकर उन पर



डूप्ले

विचार करता और उनसे बचने का कोई न कोई उपाय अवश्य ढूँढ निकालता था। उसे शान-शौकत बहुत पसन्द थी और यही उसमें सब से बड़ा अवगुण था। कर्नाटिक जीतने के बाद वह ६ महीने तक पांडिचरी में पड़ा पड़ा गुलछर्रे उड़ाता रहा। इसी समय में उसके शत्रुओं ने खूब तय्यारी करके अपनी शक्ति बढ़ा ली।

उसकी नीति—पांडिचरी का गवर्नर होने से पहले डूप्ले भारत में बहुत समय तक रह चुका था। वह यहाँ की दशा से भली भाँति परिचित था। बहुत सोच-समझ कर ही उसने अपनी नीति और अपना लक्ष्य स्थिर किया था। वह भारत में फ़्रांस का साम्राज्य स्थापित करना चाहता था। उसका कहना था कि जब तक भारत में कम्पनी को अपना खर्च चलाने के लिए कुछ ज़मीन न होगी तब तक कम्पनी का यहाँ टिकना मुश्किल है और न व्यापार ही उन्नत हो सकता है। उसे यह भी पता था कि अँग्रेज़ों की समुद्री-शक्ति फ़्रांस से कहीं अधिक है। इसलिए समुद्र पर तो फ़्रांसीसी उनसे पार नहीं पा सकते। ऐसी दशा में उनका व्यापार भी उन्नत नहीं हो सकता। फिर राज्य ही क्यों न जमाया जाय। इसी लिए उसने भारत से अँग्रेज़ों को निकाल देने का निश्चय कर लिया था। वह यह भी खूब समझता था कि देशी नरेशों की सेना योरोपीय ढंग के युद्ध में विजय नहीं पा सकती। उसने देशी सिपाहियों को योरोपीय ढंग की फ़ौजी शिक्षा दी। वही पहिला व्यक्ति था जिसने देश के भीतर इन सिपाहियों से ऐसा काम लिया। फिर भी वह असफल रहा। डूप्ले के भाग्य में ही सफलता नहीं थी। क्योंकि उसकी नीति का अनुसरण करके अँग्रेज़ लोगों ने सफलता प्राप्त की।

असफलता के कारण—डूप्ले अपनी योजनाओं में असफल हुआ, पर इसके लिए वही सर्वथा दोषी नहीं ठहराया जा सकता। उस समय फ़्रांस की स्थिति बहुत ख़राब थी। मंत्री और कर्मचारी लोग अदूरदर्शी और अयोग्य थे। रुपये-पैसे की कमी थी। कम्पनी पर भी बहुत ऋण था। फ़्रांसीसी सर्कार के लिये कम्पनी को सहायता करना असम्भव था। वे तो कम्पनी से ही बड़ी बड़ी आशाएँ लगाये हुए थे। डूप्ले की हार होते ही उनकी आशाओं पर पानी फिर गया। उन्होंने सहायता देने से बिलकुल इन्कार कर दिया। कम्पनी के संचालक लोग भी डूप्ले से अप्रसन्न हो गये। उसको उन्होंने वापस बुला लिया और उसकी नीति को बदल दिया जिससे उसका सारा उद्योग व्यर्थ हो गया।

इधर अँग्रेज़ों की कम्पनी सर्कार के आश्रित न थी। वह व्यापारियों के बल पर चल रही थी। उसे धन की कमी न थी। उसने व्यापार की ओर सदा ध्यान रक्खा। इसलिए लड़ाई-झगड़ों में पड़ कर भी उसकी सम्पत्ति बढ़ती रही; परन्तु फ़्रांसीसियों ने साम्राज्य की लालसा में व्यापार की ओर ध्यान न दिया। इसलिए वे आर्थिक संकट में पड़ गये।

फ़्रांस की समुद्री-शक्ति भी इस समय बहुत कुछ नष्ट हो चुकी थी। अँग्रेज़ों का सामना करना उसके लिए असम्भव था। जहाज़ी मार्ग के सभी बड़े बड़े स्थान अँग्रेज़ों के हाथ में थे। ऐसी दशा में यह असम्भव था कि बिना फ़्रांस से सम्बन्ध रक्खे ही फ़्रांसीसी लोग भारत में साम्राज्य स्थापित कर लें। डूप्ले ने इस ओर ध्यान ही न दिया। यह उसकी

बड़ी भारी भूल थी। इसके अतिरिक्त कंपनी के संचालक अधिक व्यय करना पसन्द नहीं करते थे। उनकी अप्रसन्नता को बचाने के लिए डूले सदा विजय की ही सूचना फ्रांस को भेजता रहा। फल यह हुआ कि वे भारत की स्थिति को बिल्कुल न जान सके। जब उन्होंने यह सुना कि कम्पनी की हार हो रही है और रुपया ख़र्च करने पर भी वे सफल नहीं हो रहे हैं तब उन्होंने एक दम डूले को बरख़ास्त कर दिया।

डूले को भारत में भी बहुत सी अड़चनें थीं। उसके सैनिक और सेनापति अधिक योग्य न थे। दूसरे फ़्रांसीसी अफ़सरों में आपस में द्वेष भाव बहुत था। सभी अपनी अपनी चलाना चाहते थे। इस फूट ने उनकी शक्ति को और भी कम कर दिया था। उधर अँग्रेज़ों में संगठन था। वे सदा मिल कर चलते थे और अपने नायक की आज्ञा का पालन बड़ी प्रसन्नता से करते थे। स्वार्थ का उनमें नाम तक न था। देश के लिए वे अपने प्राण तक न्योछावर करने को तैयार थे। इन्हीं कारणों से अँग्रेज़ लोगों ने भारत में फ़्रांसीसियों पर विजय पाई।

डूप्ले की महानता—फ़्रांसीसियों की असफलता में डूले का भी दोष था; फिर भी वह एक महान व्यक्ति था। उसने ही पहले पहल भारत में योरोप की जातियों को साम्राज्य स्थापित करने की नीति बताई। उसने ही फ़्रांसीसियों में एक नया जीवन फूँक दिया। यदि वह न होता तो फ़्रांसीसी भारत में अपने लिए इतना भी स्थान न बना सकते; परन्तु उसके देश वालों ने उसके साथ अच्छा व्यवहार नहीं किया। सच पूछो तो वे वीरों का आदर करना जानते ही न थे। फिर फ़्रांसीसी लोगों में

उत्साह कहाँ से आता? लाली को तो फाँसी पर ही लटका दिया गया। डूप्ले का भी इन्होंने केवल अनादर ही नहीं किया; बल्कि उसे दरिद्र कर दिया। उसका कम्पनी पर बहुत सा उधार था। वह सब कम्पनी ने मार लिया और उसकी फ्रांस की जागीर भी छीन ली। अन्तिम समय में डूप्ले बहुत दुखी था। १७५४ ई० में उसकी मृत्यु हुई। मरने के तीन दिन पहले उसने लिखा था—"मैंने अपनी युवावस्था, अपनी सम्पत्ति, अपना जीवन एशिया में अपनी जाति को समृद्धि-सम्पन्न बनाने के लिए न्योछावर कर दिया······पर मेरे साथ महा जंगली व्यक्ति की तरह से बर्ताव किया गया है"।

प्रश्न

१—डूप्ले कौन था? वह भारत में क्यों और किस ढंग से फ्रांसीसी साम्राज्य स्थापित करना चाहता था?

२—डूप्ले को भारत में सफलता क्यों नहीं प्राप्त हुई? उसने क्या भूल की?

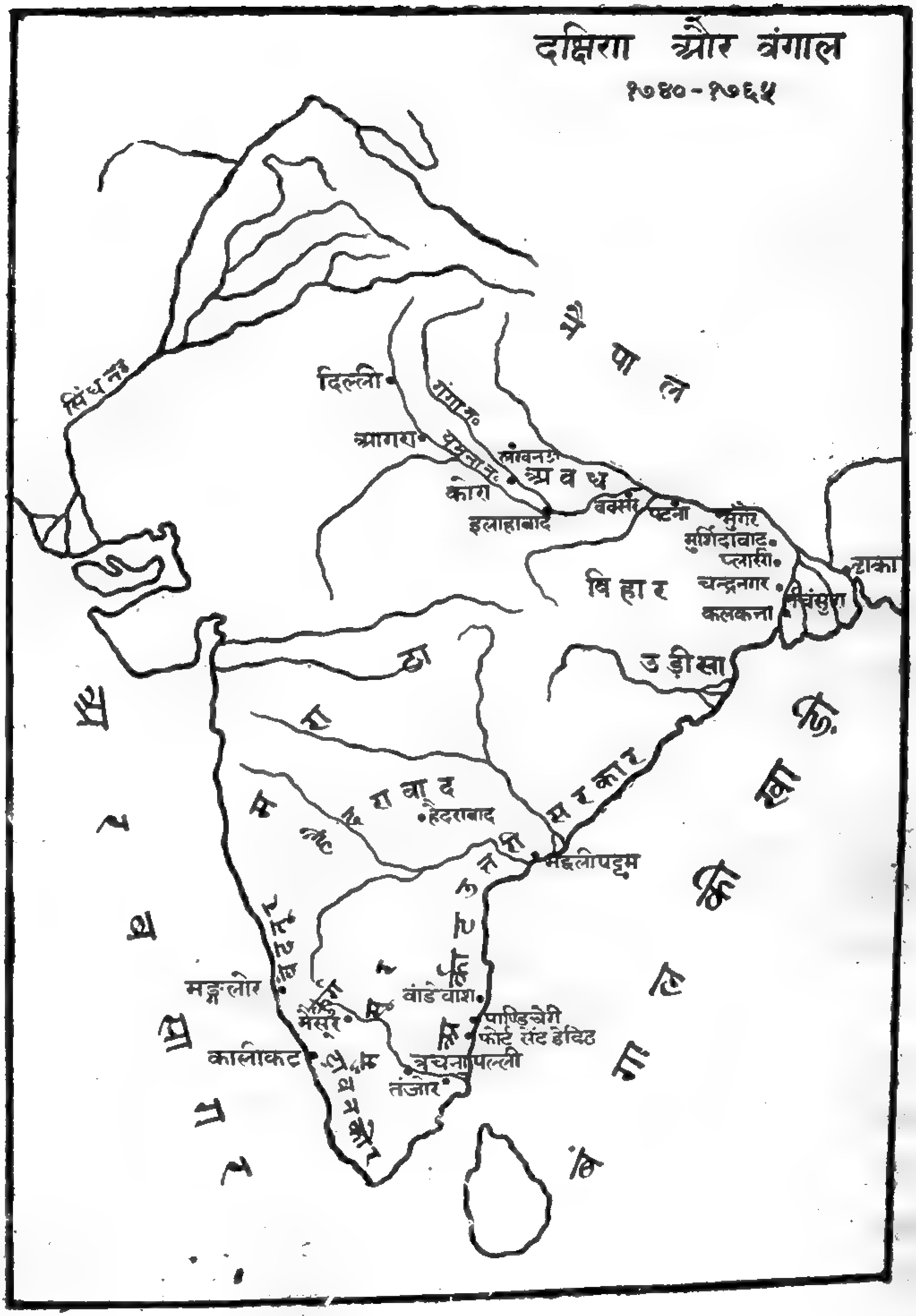
३—डूप्ले का चरित्र कैसा था? उसके देशवासियों ने उसके साथ कैसा व्यवहार किया?

४—डूप्ले ने अपने देश का क्या उपकार किया?

अध्याय ४

बंगाल में राज्य-विप्लव

बंगाल की दशा—बंगाल का सूबा बहुत बड़ा और उपजाऊ था। उसमें बिहार और उड़ीसा भी शामिल थे। तिजारत भी बहुत बढ़ी-चढ़ी थी। अँग्रेज़ों ने कलकत्ता और क़ासिम बाज़ार में बड़ी बड़ी कोठियाँ खोल रक्खी थीं। चन्द्रनगर में फ़्रांसीसियों की कोठी थी और चिंसुरा में डच लोगों की। बंगाल धन-धान्य से परिपूर्ण था। बाहरी आक्रमणों का इस पर कोई प्रभाव न पड़ा था और न यहाँ लूट-मार ही हुई थी। भारतवर्ष में इस समय इससे अधिक धन-सम्पन्न कोई भी प्रान्त न था। औरंगज़ेब की मृत्यु के बाद सारे भारतवर्ष में गड़बड़ी फैल गई थी; परन्तु बंगाल ही एक ऐसा प्रान्त था जिसे नवाबों ने अपने योग्य शासन से उपद्रवों से बचाया था। यहाँ का नवाब अलीवर्दी खाँ स्वतंत्र हो चुका था। उसके समय में मरहठों ने बंगाल पर आक्रमण किया और चौथ वसूल की। कटक भी उन्होंने छीन लिया; फिर भी अपनी योग्यता से वह बंगाल में शान्ति बनाये रक्खा। १७५६ ई० में उसकी मृत्यु हो गई और उसके बाद उसका पोता सिराजुद्दौला सिंहासन पर बैठा।


दक्षिण और बंगाल
१७४०-१७६५
सिंध नद
नेपाल
दिल्ली
गंगा न.
आगरा
यमुना न.
लखनऊ
अवध
कोरा
इलाहाबाद
बक्सर
पटना
मुंगेर
मुर्शिदाबाद
प्लासी
चन्द्रनगर
चिंसुरा
कलकत्ता
ढाका
बिहार
उड़ीसा
सरकार
हैदराबाद
मछलीपट्टम
मङ्गलोर
मैसूर
कालीकट
वांडेवाश
पाण्डिचेरी
फोर्ट सेंट डेविड
त्रिचनापल्ली
तंजोर

सिराजुद्दौला—सिराजुद्दौला की आयु इस समय २१ वर्ष की थी। वह बड़े लाड़-चाव में पाला गया था। सदा दुराचारियों और चापलूसों की संगति में रहा था। इसलिए उसकी आदतें बड़ी ख़राब हो गई थीं। वह हठी और लालची भी था। राज-कार्य से अनभिज्ञ था। वह देश में शान्ति स्थापित न कर सका। धन की उसे सदा आवश्यकता रहती थी। उसने व्यापारियों पर कर बढ़ा दिया। इससे वे लोग भी असन्तुष्ट हो गये। अब उसका कोई सहायक भी न रहा। फिर उसने एक और बहुत बड़ी भूल की कि अँग्रेज़ों से शत्रुता मोल ले ली। इन्हीं सब कारणों से उसको राज्य-सिंहासन छोड़ना पड़ा।



सिराजुद्दौला

अँग्रेज़ों से झगड़ा—इस समय योरोप में फ्रांस और इंगलैंड के बीच युद्ध छिड़ जाने की आशंका हो रही थी। इसलिए भारत में अँग्रेज़ों ने कलकत्ते के क़िले फ़ोर्ट विलियम को और मज़बूत बनवाना शुरू कर दिया। इस काम में नवाब की आज्ञा बिल्कुल नहीं ली गई। नवाब ने फ़ोर्ट विलियम का बनवाना रोक देने का आदेश किया। इस पर अँग्रेज़ों ने कुछ ध्यान नहीं दिया और वे अपना काम करते रहे। अँग्रेज़ों ने एक और भी अपराध किया। नवाब के शत्रु राजा दुर्लभदास के पुत्र

किशनदास को उन्होंने अपने यहाँ आश्रय दिया और वापस माँगने पर भी सिराजुद्दौला के आदमियों को दुत्कार दिया। इसके अतिरिक्त अँग्रेज़ व्यापारी बिना कर दिये ही व्यापार करते थे। नवाब के आदमियों के साथ भी उनका बर्ताव अच्छा न था। इन सब बातों से सिराजुद्दौला बहुत नाराज़ हो गया। उसने यह भी सुन रक्खा था कि कलकत्ते में अँग्रेज़ों की कोठी में बहुत धन है। इस धन को लेने की इच्छा से और अँग्रेज़ों को दण्ड देने के लिए उसने उन पर आक्रमण कर दिया। पहले उसने क़ासिम बाज़ार की कोठी पर अधिकार कर लिया। फिर एक बहुत बड़ी सेना लेकर कलकत्ते पर धावा कर दिया।

कलकत्ते की कालकोठरी—कलकत्ते के फ़ोर्ट विलियम में इस समय लगभग ३०० आदमी थे। क़िले की दशा भी अच्छी न थी। अँग्रेज़ों ने बहादुरी से सामना किया; परन्तु नवाब की सेना के सामने वे ठहर न सके। कलकत्ते पर नवाब ने अधिकार कर लिया। कुछ अँग्रेज़ तो नावों में बैठ कर भाग गये थे। १४६ जो बचे थे उनको सिराजुद्दौला के सिपाहियों ने क़ैद कर लिया और एक अँधेरी कोठरी में बन्द कर दिया। गर्मी की ऋतु थी। क़ैदी प्यास के मारे व्याकुल होने लगे। कोठरी बहुत तंग थी। क़ैदी घुट घुट कर मरने लगे। परन्तु निर्दयी पहरे वालों ने कुछ ध्यान न दिया। प्रातःकाल जब कोठरी खोली गई तब उसमें सिर्फ़ २३ व्यक्ति जीते हुए निकले। यह भीषण हत्याकाण्ड २० जून १७५६ ई० की रात को हुआ और कलकत्ते की कालकोठरी की घटना के नाम से प्रसिद्ध है।

नवाब से सन्धि—इस घटना की ख़बर ने मद्रास के अँग्रेज़ों में

बड़ी सनसनी फैला दी। वे आग बबूला हो गये। क्लाइव जो इस समय मद्रास में था तुरन्त एक सेना के साथ कलकत्ता चल दिया। वहाँ पहुँचते ही इस ने कलकत्ते और हुगली पर अधिकार कर लिया। नवाब ने सन्धि की प्रार्थना की और फ्रांसीसियों से सब सम्बन्ध तोड़ देने का वचन दिया। दोनों में सन्धि हो गई और नवाब ने कम्पनी को सिक्का चलाने की आज्ञा दे दी। यही नहीं बल्कि उसने यह भी वचन दिया कि कम्पनी की जो कुछ हानि हुई है वह भी पूरी कर दी जायगी। इस सन्धि-पत्र में कालकोठरी की दुर्घटना का नाम तक न आया और न जो लोग मारे गये थे उनके घरवालों को कुछ सहायता ही दिलाई गई। सम्भव है कि क्लाइव डरता हो कि कहीं फ्रांसीसी और नवाब दोनों मिल न जावें। इसलिए उसने जल्दी से नवाब से सन्धि कर ली। इसी समय योरोप में अँग्रेज़ों और फ्रांसीसियों से युद्ध छिड़ गया था। इसलिए क्लाइव ने चन्द्रनगर पर भी अधिकार कर लिया।

क्लाइव का षड्यन्त्र—यह सन्धि बहुत दिनों तक न रही। नवाब ने वचन दिया था कि फ्रांसीसियों से कोई सम्बन्ध न रक्खूँगा; परन्तु वह छिपे छिपे उनकी सहायता करने लगा। क्लाइव को एक तो फ्रांसीसियों से डर लगा हुआ था; दूसरे नवाब का भी कोई भरोसा न था। उसने एक षड्यन्त्र रचा। सिराजुद्दौला का सेनापति मीर जाफ़र उससे असंतुष्ट था और स्वयं नवाब बनना चाहता था। क्लाइव ने उसकी सहायता करने का वचन दिया। यह सब बातचीत एक व्यापारी के द्वारा हुई थी जिसका नाम अमीचन्द था। अमीचन्द ने क्लाइव को धमकाया कि यदि तुम सिराजुद्दौला के

ख़ज़ाने में से मुझे भी रुपया न दोगे जैसा कि तै हुआ है तो मैं सारा भंडा फोड़ दूँगा। क्लाइव अब उसे उसका हिस्सा देना नहीं चाहता था। इस लिये उसने बड़ी चाल चली। उसने दो शर्तनामें लिखे। एक लाल काग़ज़ पर और दूसरा सफ़ेद पर। लाल काग़ज़ वाला शर्तनामा नक़ली था। उसमें उसने अमीचन्द को दिखाने के लिए यह लिख दिया था कि उसे बहुत सा रुपया दिया जायेगा। नक़ली शर्तनामे पर वाट्सन ने दस्तख़त न किये। पर क्लाइव तो धोखा देने पर तुला ही हुआ था। उसने वाट्सन के नक़ली दस्तख़त बना दिये और शर्तनामा अमीचन्द को दिखला कर उसे सन्तुष्ट कर दिया।

पलासी का युद्ध—जब षड्यंत्र की सब शर्तें तै हो गईं तब क्लाइव ने नवाब को पत्र लिखा कि आपने सन्धि की शर्तें तोड़ डाली हैं। इस पत्र का उत्तर न मिलने पर उसने सेना लेकर पलासी की ओर कूच कर दिया। नवाब पहिले ही से वहाँ डटा हुआ था। २३ जून १७५७ ई० को युद्ध हुआ। सिराजुद्दौला मैदान छोड़ कर भाग गया और अँग्रेज़ों की जीत हुई। थोड़े दिन बाद सिराजुद्दौला पकड़ा गया और उसको मीर जाफ़र के लड़के मीरन ने क़त्ल कर डाला।

इस युद्ध में मीर जाफ़र ने किसी की सहायता न की। वह दूर से ही देखता रहा कि किस की विजय होती है; परन्तु फिर भी क्लाइव ने उसे नवाब बना दिया। उसने भी क्लाइव और उसके साथियों को बहुत सा धन दिया। कम्पनी को भी लगभग एक करोड़ रुपया हर्जे का दिया और कलकत्ता के पास चौबीस परगने का प्रान्त भी दे दिया। इसके अतिरिक्त

उसने २५ लाख रुपया सेना और बेड़े के खर्च के लिए कम्पनी को दिया।

युद्ध का परिणाम—स्मिथ साहब ने लिखा है कि पलासी के युद्ध ने केवल बंगाल ही के नहीं बल्कि सारे भारतवर्ष के भाग्य का फ़ैसला कर दिया। वास्तव में यह ठीक भी है क्योंकि इस जीत से अंग्रेज़ों के पैर बंगाल में अच्छी तरह जम गये और उनको एक साम्राज्य स्थापित करने की अभिलाषा और भी प्रबल हो उठी। बङ्गाल का शासक अब उन्हीं के हाथ की कठपुतली था। भारतवासियों पर अँग्रेज़ों का आतंक छा गया। इसके अतिरिक्त चौबीस परगना मिल जाने से कम्पनी की आर्थिक दशा भी बहुत कुछ सुधर गई और बंगाल के सब हरे भरे प्रान्त पर उसका अधिकार हो गया। बंगाल का कुल व्यापार भी कम्पनी के हाथ में आगया।

प्रश्न

१—सिराजुद्दौला कौन था ? उसका अंग्रेज़ों से क्यों झगड़ा हुआ ?

२—कलकत्ते की काल कोठरी के विषय में तुम क्या जानते हो ?

३—क्लाइव ने सिराजुद्दौला को गद्दी से उतारने के लिए क्या षड्यन्त्र रचा ? उसे इस काम में कहाँ तक सफलता प्राप्त हुई ?

अध्याय ५

मीर जाफ़र और मीर क़ासिम

मीर जाफ़र बड़ा अयोग्य शासक था। वह अफ़ीम खाता था और बड़ा आलसी था। उसके समय में क्लाइव के ही हाथ में सारा अधिकार था। कम्पनी के सदस्य अपना अपना व्यापार करने में लगे हुए थे और क्लाइव का अनुकरण करके खूब घूँस लेते थे। देशी हाकिमों का अत्याचार भी कुछ कम न था। सारे राज्य में गड़बड़ी फैली हुई थी।

शाहज़ादे का आक्रमण—बंगाल की गड़बड़ स्थिति देखकर मुग़ल शाहज़ादे अली गौहर ने अवध के नवाब शुजाउद्दौला को साथ लेकर विहार पर आक्रमण कर दिया। पटना का हिन्दू गवर्नर लड़ाई में हार गया और पटना पर मुग़लों का अधिकार हो गया। मीर जाफ़र इन लोगों से सन्धि करना चाहता था; पर क्लाइव इस पर राज़ी न हुआ। वह सेना



शुजाउद्दौला

लेकर उनको दमन करने के लिए चल पड़ा। उसकी रवानगी सुन कर मुग़ल सेना घबड़ा गयी। शुजाउद्दौला अवध को लौट गया। शाहज़ादे के साथ क्लाइव ने अच्छा व्यवहार किया और उसे ५०० मुहरें देकर बिदा किया। क्लाइव की इस सफलता से मीर जाफ़र बहुत प्रसन्न हुआ और उसने २४ परगना की जागीर उसको दे डाली।

डचों से युद्ध—अँग्रेज़ों की इस बढ़ती से चिनसुरा के डच लोगों के व्यापार को बड़ी हानि पहुँची। अब अँग्रेज़ उन लोगों की आँखों में खटकने लगे। मीर ज़ाफर भी क्लाइव के हाथ की कठपुतली बना रहना नहीं चाहता था। इसलिए मीर जाफ़र और डच लोगों ने अँग्रेज़ों को निकाल देने की गुप्त मंत्रणा की। डच लोगों ने जावा से और फ़ौज मँगा ली; अँग्रेज़ों की कोठियों में आग लगवा दी और उनकी नावें छीन लीं। क्लाइव को बहाना मिल गया। उसने कर्नल फ़ोर्ड की सहायता से १७५९ ई० में चिनसुरा घेर लिया। डच लोगों को सन्धि करनी पड़ी। उन्होंने अँग्रेज़ों की हानि पूरा करने का वचन दिया और फिर कभी अंग्रेज़ों के विरुद्ध सर न उठाया।

क्लाइव का लौटना—चार साल के कठिन परिश्रम से क्लाइव थक गया था। अतः १७६० ई० की फ़र्वरी में वह इंगलैण्ड लौट गया। इन्हीं चार सालों के अन्दर उसने कम्पनी की स्थिति में महान् परिवर्तन कर दिया था। कम्पनी की हैसियत अब मामूली व्यापारी की सी न थी। वह बङ्गाल में एक बहुत बड़ी शक्ति हो गई थी। बंगाल-विहार से लेकर अवध की सीमा तक उसका प्रभुत्व स्थापित हो चुका था।

देशी नरेश उससे डरते थे। अन्य योरोपीय जातियों की शक्ति नष्ट हो चुकी थी। पूर्व में अब उसका सामना करने वाला कोई न था।

बंगाल की दशा—क्लाइव के बाद वैन्सिटार्ट उसकी जगह बंगाल का गवर्नर हुआ। इस समय बङ्गाल की दशा बहुत ख़राब थी। कम्पनी के अफ़सर और कर्मचारी धन वसूल करने की चिन्ता में ही लगे रहते थे। नवाब बिल्कुल निकम्मा था। शासन की ओर कोई ध्यान न देता था। फिर कम्पनी के अधिकारी अपने को देश का स्वामी समझते थे। कभी कभी देशी हाकिमों से झगड़ा भी हो जाया करता था। घूस का बाज़ार गर्म हो रहा था। कम्पनी की आर्थिक दशा बहुत ख़राब थी। नवाब के ऊपर कम्पनी का बहुत सा ऋण था; पर उसके वसूल करने का कोई उपाय न दिखलाई पड़ता था। क्योंकि नवाब के ख़ज़ाने में बिल्कुल रुपया न था। वह अपनी सेना का वेतन भी न दे सकता था। इसी समय शाहज़ादे ने, जो शाहआलम द्वितीय के नाम से दिल्ली के तख़्त पर बैठ गया था, बङ्गाल पर फ़िर हमला कर दिया। जैसे तैसे उसको तो भगाया गया; परन्तु बंगाल की दशा और भी बिगड़ गई।

मीर जाफ़र का गद्दी से उतारा जाना—वैन्सिटार्ट ने इस समय पीछे रहना ठीक न समझा। उसकी कौंसिल वाले भी चाहते थे कि क्लाइव की तरह कोई तदबीर निकाल कर धन कमाया जाय। आख़िर उन्हें एक ऐसा व्यक्ति मिल ही गया। इसका नाम मीर क़ासिम था और यह मीर जाफ़र का दामाद

था। मीर क़ासिम बंगाल का शासक होना चाहता था। उसने कम्पनी को बहुत सा रुपया देने का वचन दिया। कम्पनी ने मीर जाफ़र को गद्दी से उतार कर और उसकी जगह मीर क़ासिम को नवाब बना दिया। नवाब होने पर मीर क़ासिम ने कम्पनी के अफ़सरों को बहुत सा रुपया दिया। इसके अलावे कम्पनी को बर्दवान, मिदनापुर और चिटागाँव के परगने दे दिये। वैन्सिटार्ट को भी बहुत सा धन मिला।

मीर क़ासिम—मीर क़ासिम बड़ा योग्य शासक था। वह मीर जाफ़र की तरह अँग्रेज़ों के हाथ की कठपुतली बन कर नहीं रहना चाहता था। उनके हाथ से निकलने के लिए उसने अपनी राजधानी मुर्शिदाबाद से हटा कर मुंगेर बना ली। उसने सेना का भी सङ्गठन किया। उसकी आर्थिक दशा बहुत शोचनीय थी। उसने कम्पनी को बहुत सा धन देने का वचन दिया था। यह रुपया वह सदा कम्पनी को देता रहा; फिर भी कम्पनी की माँग पूरी न हो पाई थी। कम्पनी से झगड़ा होने की आशंका थी। शाही फ़रमान से कम्पनी के किसी आदमी को बिना महसूल दिये माल लाने अथवा ले जाने की आज्ञा न थी; परन्तु अब



मीर क़ासिम

कम्पनी का हर एक व्यक्ति बिना महसूल दिये ही माल लाने व ले जाने लगा। इससे इन लोगों को बहुत लाभ होता था, परन्तु देशी व्यापारियों पर एक जगह से दूसरी जगह माल ले जाने में महसूल लगता था। इसलिये उनका माल अँग्रेज़ों के माल से महँगा पड़ता था। एक और भी गड़बड़ी होने लगी। अँग्रेज़ों के माल ले जाने के लिये एक 'दस्तक' दी जाती थी जिसे देशी हाकिमों को दिखला कर वह अपना माल बिना चुङ्गी दिये ले जाते थे। अब अँग्रेज़ लोग इन दस्तकों को हिन्दुस्तानी व्यापारियों को देकर उनसे धन ऐंठने लगे और उनका माल भी बिना चुंगी दिए जाने लगा। इससे कभी कभी कम्पनी के कर्मचारियों और देशी हाकिमों में झगड़ा भी हो जाता था। अँग्रेज़ लोग इन्हें बहुत दिक करते थे। इसके अतिरिक्त नमक जैसी आवश्यक वस्तु का ठेका कम्पनी बड़ी बड़ी रकमें लेकर बेचती थी। इससे नमक का दर बढ़ गया और गरीब प्रजा को कष्ट होने लगा।

कम्पनी से खटपट—इन सब बातों से दुखी होकर मीर क़ासिम ने कम्पनी से शिकायत की; परन्तु उसकी कुछ सुनवाई न हुई। मीर क़ासिम ने सोचा कि इस कर (चुङ्गी) से उसको तो कोई लाभ है नहीं और बेकार के झगड़े होते हैं। तिजारत को भी हानि पहुँचती है फिर इसको क्यों न हटा दिया जाय। यह सोचकर उसने सब कर हटा दिये। अब देशी और अँग्रेज व्यापारियों में कोई भेद न रहा। अँग्रेज़ों ने इसका घोर विरोध किया परन्तु मीर क़ासिम ने एक न सुनी। अब अँग्रेज़ों और मीर क़ासिम के बीच में युद्ध ठनने में कोई सन्देह न रहा।

पटना का हत्याकाण्ड—मीर क़ासिम लड़ाई की तैयारी करने लगा। शाहआलम और शुजाउद्दौला को भी उसने युद्ध का निमन्त्रण भेजा। इससे कुछ लोगों ने यह समझा कि मीर क़ासिम अँग्रेज़ों की कोठियों पर हमला करेगा। इस भय के कारण पटना की अँग्रेज़ी कोठी के हाकिम ने पटना को घेर लिया। मीर क़ासिम के सेनापति समरू ने तुरन्त पटना जीत लिया और वहाँ के सब अंग्रेज़ों को क़ैद कर लिया। कम्पनी इस बात पर बहुत बिगड़ खड़ी हुई और उसने मीर क़ासिम को गद्दी से उतार कर मीर जाफ़र को फिर नवाब बना दिया। मीर क़ासिम हार कर पटना की ओर भाग गया। उसने समरू को आज्ञा दे दी कि सब अँग्रेज़ क़ैदियों को क़त्ल कर दिया जाये। समरू ने आज्ञा का पालन किया और लगभग १५० अँग्रेज़ों को क़त्ल कर दिया।

बक्सर की लड़ाई—मीर क़ासिम भाग कर अवध के नवाब शुजाउद्दौला के पास चला गया। वहाँ उसे अँग्रेज़ों से लड़ने को भड़काया। मुग़ल सम्राट शाहआलम ने भी उसे सहायता देने का वचन दिया। इन तीनों की सेना ने मिलकर बंगाल पर आक्रमण किया। अँग्रेज़ लोग भी तैयार बैठे थे। उन्होंने मेजर हेक्टर मुनरो को सेना लेकर इनका सामना करने को भेजा। १७६४ ई० में बक्सर के स्थान पर लड़ाई हुई। अँग्रेज़ों की बड़ी हानि हुई। पर अन्त में वे ही विजयी हुए। शाहआलम अँग्रेज़ों की शरण में आ गया। मीर क़ासिम भाग गया फिर उसका नाम तक न सुनाई दिया। शुजाउद्दौला भी भाग गया; परन्तु अँग्रेज़ों ने उसका पीछा किया और उसे कड़ा के स्थान

पर फिर हराया। इसके बाद उसने भी अपने को अँग्रेज़ों के अर्पण कर दिया।

बक्सर की लड़ाई का महत्व पलासी की लड़ाई से कम नहीं कहा जा सकता। इस लड़ाई से बंगाल-बिहार से लेकर अवध तक का प्रान्त अँग्रेज़ों के हाथ में आ गया। अब मुग़ल सम्राट् भी उनके हाथ में था। इधर लड़ाई समाप्त होते ही १७६५ ई० में मीर जाफ़र की मृत्यु हो गई। अँग्रेज़ लोग उसके लड़के नजमुद्दौला को बंगाल का नवाब बना कर अपनी मनमानी करने लगे। अब उनकी शक्ति रोकने वाला कोई न रहा।

इलाहाबाद की सन्धि—पटना के हत्याकाण्ड और कम्पनी की बुराइयों की सूचना कम्पनी के संचालकों को मिली। तब उन्होंने क्लाइव को फिर १७६५ ई० में बंगाल का गवर्नर बना कर भेजा। उसने आते ही नवाब वज़ीर और मुग़ल सम्राट् से संधि कर ली। इस समय यदि क्लाइव चाहता तो मुग़ल सम्राट् के सब प्रान्तों पर अधिकार कर लेता; परन्तु उसने बड़े धैर्य से काम लिया। उसका विचार था कि जितने प्रान्तों पर कम्पनी का अधिकार है पहले उसी का ठीक ठीक प्रबन्ध होना चाहिये। इसलिए उसने उन लोगों को भी मित्र बनाये रखना आवश्यक समझा।

यह सन्धि इलाहाबाद में हुई थी। इसके अनुसार नवाब वज़ीर ने ५० लाख रुपया कम्पनी को दिया। उसका प्रांत अवध उसी के अधिकार में छोड़ दिया गया परंतु कड़ा और इलाहाबाद उससे निकाल लिये गये। उसकी रक्षा के लिए क्लाइव ने एक अपनी सेना उसके यहाँ रख दी जिसका खर्च नवाब देता था।

अवध में सेना रख देने से कम्पनी के प्रान्तों की भी रक्षा हो गई और मरहठों का भी डर न रहा। मुग़ल सम्राट् को कड़ा और इलाहाबाद के प्रान्त दे दिये गये; परन्तु सम्राट् की ओर से उनका प्रबन्ध कम्पनी ही करती थी। सम्राट् ने कम्पनी को बङ्गाल, बिहार और उड़ीसा की दीवानी दे दी। इन प्रान्तों से कर वसूल करके कम्पनी ५३ लाख रुपया सालाना बङ्गाल के नवाब को देती थी जिससे वह अपनी निज़ामत का ख़र्च चलाता था, और २६ लाख रुपया सालाना सम्राट् को देती थी। इलाहाबाद की सन्धि के बाद क्लाइव ने शासन का सुधार किया और भारत में दो वर्ष रह कर १७६७ ई० में इंगलैंड चला गया;

प्रश्न

१—मीर जाफर किस स्वभाव का आदमी था? उसको अँग्रेज़ लोग क्यों गद्दी से उतारना चाहते थे?

२—क्लाइव के चले जाने के बाद बंगाल की क्या दशा हुई?

३—मीर क़ासिम का अंग्रेज़ों से क्यों झगड़ा हुआ?

४—पटना के हत्याकाण्ड के विषय में तुम क्या जानते हो?

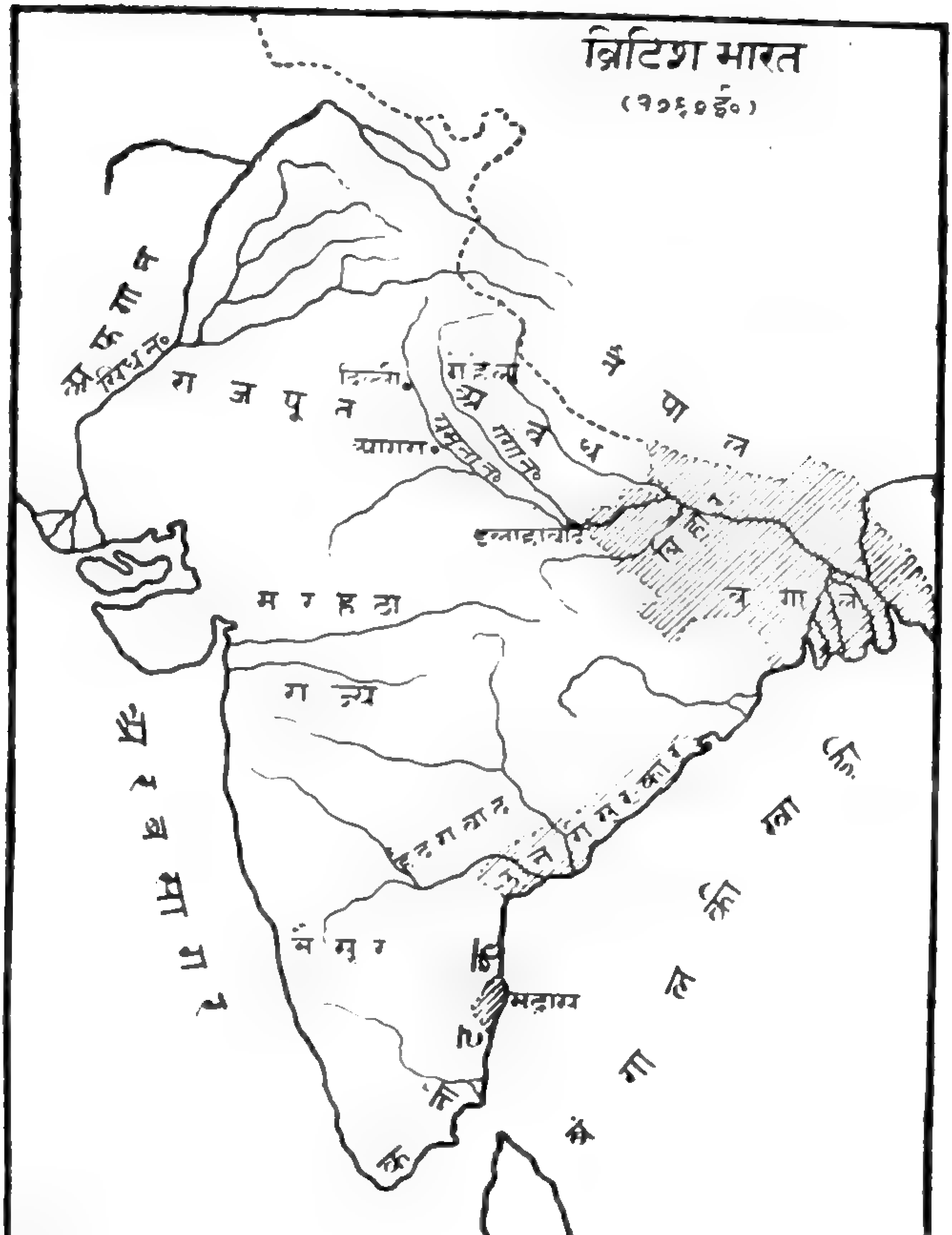
५—इलाहाबाद की सन्धि में अँग्रेज़ों को क्या मिला?

अध्याय ६

राबर्ट क्लाइव

राबर्ट क्लाइव का जन्म १७२५ ई० में हुआ था। बचपन से से ही वह बड़ा नटखट और निडर था। पढ़ने-लिखने की ओर उसकी रुचि न थी। स्कूल जाते समय रोज़ किसी न किसी से लड़ाई झगड़ा कर बैठता। कभी कभी दूकानदारों को ही दिक् करता था। जब उसके पिता उसकी शरारतों से बहुत दुखी हो गये तब उन्होंने उसे भारत में भेज देने का विचार किया। १७४४ ई० में वह कम्पनी के एक साधारण लेखक के पद पर नियुक्त होकर भारत में आया। यह काम उसे पसन्द न था। कई बार उसने आत्म-हत्या का भी प्रयत्न किया; परन्तु दैवयोग से बच गया। जब १७४६ ई० में फ़्रांसीसियों ने मद्रास ले लिया तो वह भाग कर फ़ोर्ट सेन्ट डेविड में जा छुपा। अँग्रेज़ों ने पांडिचरी घेरा। उस समय वह भी मौजूद था और उसने निशाना उठाने वाले का काम किया। मेजर लारेंस उसकी युद्ध में योग्यता देख कर बहुत प्रसन्न हुआ और उसे सेना में एक छोटे से पद पर नियुक्त कर दिया। यहाँ रह कर क्लाइव ने धीरे धीरे अपनी उन्नति करली।

अँग्रेज़ों और फ़्रांसीसियों की दूसरी लड़ाई में मुहम्मद अली


ब्रिटिश भारत
(१७६५ ई०)
राजपूत
मरहठा
दिल्ली
आगरा
इलाहाबाद
मद्रास

त्रिचनापली में घिर गया। अर्काट पर आक्रमण करके मुहम्मद अली को सहायता पहुँचाने की तरकीब क्लाइव ने ही निकाली थी। यही नहीं बल्कि वह स्वयं इस काम को करने के लिए तैयार भी हो गया। उसने थोड़े से नौसिखे सिपाहियों को लेकर १७५२ ई० में अर्काट पर अधिकार कर लिया। अर्काट की रक्षा में जो उसने वीरता दिखलाई उस का हाल हम पीछे पढ़ चुके हैं। चारों ओर उसकी प्रशंसा होने लगी। यह केवल उसी के साहस और पराक्रम का फल था कि डूप्ले की सारी योजनायें असफल होगईं और फ्रांसीसी लोग भारत में अपना राज्य स्थापित न कर सके। अर्काट ने क्लाइव की कीर्ति को अमर कर दिया। परन्तु कठिन परिश्रम से उसका स्वास्थ्य कुछ बिगड़ गया था। इस लिए वह इंगलैंड चला गया। वहाँ पर भी उसका बड़ा आदर-सत्कार किया गया।

१७५६ ई० में क्लाइव फिर भारत में आया। इस बार उसने सारे बंगाल पर अँग्रेज़ों की धाक बैठा दी। मीर जाफ़र को नवाब बना कर अँग्रेज़ी साम्राज्य की नींव डाल दी। १७६० ई० में वह फ़िर इंगलैंड लौट गया। १७६४ ई० में जब कम्पनी के संचालकों ने कम्पनी की बुरी दशा देखी तब उन्होंने क्लाइव को "बैरन आफ़ पलासी" की उपाधि से विभूषित करके और बंगाल का गवर्नर नियुक्त करके फिर भारत में भेजा। यहाँ पहुँच कर उसने इलाहाबाद की सन्धि करके कम्पनी को वास्तव में बंगाल, बिहार और उड़ीसा का स्वामी बना दिया। इसके बाद शासन और सैनिक सुधार करके वह फिर १७६७ ई० में इंगलैंड चला गया। कम्पनी के संचालक चाहते थे कि वह भारत में और ठहरे; पर उसने यह स्वीकार न किया। इंगलैंड पहुँचने पर

उस पर कई अभियोग लगाये गये ; परन्तु वह उन सबसे मुक्त कर दिया गया। १७७४ ई० में उसने आत्म-हत्या कर ली।

शासन-सुधार—१७६५ ई० में जब क्लाइव तीसरी बार बंगाल पहुँचा तो उस समय कम्पनी की दशा बहुत ख़राब हो रही थी। कम्पनी के कर्मचारी अधिकतर निजी व्यापार करते और घूस लेते थे। क्लाइव ने कम्पनी के संचालकों के आज्ञानुसार आज्ञा देदी कि कोई कर्मचारी निजी व्यापार न करे और न भेंट ले। इस आज्ञा से बड़ा असंतोष फैल गया। बिचारे कर्मचारियों को अपना जीवन निर्वाह करना भी मुश्किल होगया। कम्पनी से तो बहुत कम वेतन मिलता था। ऊपर की आमदनी क्लाइव ने बन्द कर दी। अब जीविका का क्या उपाय किया जाय? आख़िर क्लाइव ने ही एक उपाय ढूँढ़ निकाला। उसने कम्पनी के कर्मचारियों को नमक, पान, तम्बाकू और अफ़ीम का ठेका दे दिया। इन चीज़ों के व्यापार से जो लाभ होता उसमें से कुछ तो कम्पनी को दे दिया जाता और शेष वे लोग आपस में बाँट लेते। इस उपाय को कम्पनी के संचालकों ने भी पसन्द किया और इससे कर्मचारियों की कठिनाइयाँ दूर हो गईं।

इसके बाद क्लाइव ने सेना की ओर ध्यान दिया। १७५७ ई० से कम्पनी के सिपाहियों को डबल (दूना) भत्ता मिलता था। इससे कम्पनी का बहुत सा धन व्यय हो जाता था। क्लाइव ने इसे एक दम बन्द कर दिया। सेना में बड़ी हलचल मच गई। सैनिक लोग विद्रोह तक करने को तैयार हो गये; पर क्लाइव ने उन्हें दबा दिया। इसके बाद उन्होंने चूं तक न की और कम्पनी को इस सुधार से बहुत बचत हो गई।

क्लाइव का चरित्र—क्लाइव बड़ा वीर, योग्य और साहसी पुरुष था। अपने गुणों से ही वह एक साधारण लेखक से शासक के पद पर पहुँच गया। उसने कभी सैनिक शिक्षा न पाई थी; परन्तु उसमें स्वाभाविक सैनिक शक्ति थी। अपनी विजय का तो उसे सदा विश्वास रहता था। वह किसी बात को बहुत देर तक नहीं सोचता-विचारता था। झट कोई न कोई उपाय ढूँढ निकालता था और उसके अनुसार काम करने लगता था। वह सदा धैर्य और साहस से काम लेता था। इसी कारण उसकी सदा जीत होती रही। क्लाइव ने कुछ ऐसे भी काम किये जो बहुत भद्दे थे और जिन्होंने उसे कलंकित किया। उसने अमीचन्द को धोका देने के लिए वाट्सन के जाली हस्ताक्षर बनाये। देशी नरेशों से बहुत घूस लिया, परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि उसने कम्पनी के हित को सदा अपने सामने रक्खा। उसके हित के लिए वह सब कुछ करने को तैय्यार था। कम्पनी के साथ अपना स्वार्थ भी पूरा हो जाय, यह दूसरी बात थी। उसने अपनी वीरता, साहस और बुद्धिमत्ता से कम्पनी के मान और प्रतिष्ठा को भारत में बढ़ाया। वास्तव में वह भारत में अँग्रेजी राज्य की नींव जमाने वाला कहा जा सकता है।

प्रश्न

१—क्लाइव कौन था? उसके विषय में तुम क्या जानते हो?

२—क्लाइव ने अपने देश के लिए भारत में क्या क्या काम किये?

३—क्लाइव क्यों अँग्रेज़ी साम्राज्य की नींव डालने वाला कहा जाता है?

४—एक नक़शा खींच कर १७६७ ई० में अँग्रेज़ों के राज्य का विस्तार दिखलाओ।

अध्याय ७

क्लाइव के बाद देश की स्थिति

बंगाल—क्लाइव ने अँग्रेज़ों को बंगाल का मालिक बना दिया था; परन्तु उन्होंने अभी देश का शासन अपने हाथ में नहीं लिया। कम्पनी केवल सेना का ही प्रबन्ध करती थी। दीवानी का प्रबन्ध देशी हाकिमों द्वारा किया जाता था। इसके लिए बंगाल में मुहम्मद रज़ाखाँ को नायब नाज़िम नियुक्त कर दिया गया था और विहार में राजा शिताब राय को। इस दोहरे प्रबन्ध से सारे देश में गड़बड़ी फैल गई। क्लाइव के सुधार असफल हो गये। कम्पनी के संचालकों ने ठेका बन्द कर दिया और कर्मचारी लोग फिर निजी व्यापार करने लगे। किसानों पर बहुत सख़्ती होने लगी। हर एक मनुष्य को अपने जेब भरने की ही चिन्ता रहती थी। इसलिए प्रजा दरिद्र हो गई।

इसी समय दुर्भिक्ष फैलने से बंगाल की भयंकर स्थिति हो गई। यहाँ की आबादी एक तिहाई के लगभग कम हो गई। लाशों के ढेर लग गये। आमदनी का कोई साधन न था। इसलिए कम्पनी का दिवाला निकला जाता था।

उत्तरी भारत—अवध में नवाब वज़ीर शासन कर रहा

था। उसके राज्य में अँग्रेज़ों की सेना रहती थी। आगरा और दिल्ली के पास जाट लोगों की शक्ति बढ़ती जा रही थी। भरतपुर में उन्होंने अपने पैर अच्छी तरह जमा लिये थे। रुहेलखंड में रुहेले अफ़गानों ने अपना स्वतन्त्र राज्य क़ायम कर लिया था। पंजाब में सिक्ख लोग शक्तिशाली होते जा रहे थे। इस समय तक वे अनेक मिस्लों में विभक्त थे। इन मिस्लों ने अलग अलग अपनी छोटी छोटी ज़मींदारियाँ स्थापित कर ली थीं और धीरे धीरे उनमें जातीय भाव की जागृति हो रही थी।

दक्षिण—दक्षिण में इस समय तीन बड़ी शक्तियाँ थीं, मरहठे, निज़ाम और हैदरअली। ये तीनों दक्षिण पर प्रभुत्व स्थापित करने के लिए आपस में लड़ते-झगड़ते थे। एक चौथी शक्ति मद्रास में अँग्रेज़ों की भी थी।



महादजी सींधिया

मरहठे—पानीपत की लड़ाई के बाद बालाजी राव पेशवा का नाबालिग़ पुत्र माधव राव पेशवा हो गया था। उसका चचा राघोबा संरक्षक की तरह राज काज सम्हालता था। माधव राव अपने चचा से झगड़ पड़ा। राघोबा हार गया और कैद कर लिया गया। चारों ओर उपद्रव और

कोहराम मच गया। मरहठों में इस समय महादजी सींधिया की शक्ति बहुत बढ़ी हुई थी। उसने दिल्ली तक छापा मारा था। उसने शाह आलम को अँग्रेज़ों के आश्रय से बुलाकर फिर दिल्ली का साम्राट् बना दिया था। इधर इन्दौर में होलकर वंश का राज्य स्थापित करने वाले मल्हार राव होलकर की मृत्यु हो जाने के बाद उसके बेटे खण्डेराव की विधवा स्त्री अहिल्याबाई बड़ी योग्यता से शान्ति-पूर्वक राज्य कर रही थी। उसके राज्य में प्रजा बहुत सुखी और सन्तुष्ट थी।



मल्हार राव होलकर

निज़ाम—हैदराबाद में निज़ाम शासन कर रहा था। वह सदा सीमा-विस्तार की धुन में ही रहा करता था। कभी तो वह अँग्रेज़ों का मित्र हो जाता और कभी उनके विरुद्ध षड्यंत्र किया करता था। मरहठों और हैदर अली का भय उसे सदा बना रहता था।



अहिल्याबाई

मद्रास—मद्रास में अँग्रेज़ों का शासन था। कर्नाटिक में मुहम्मद अली के नवाब हो जाने से वे बहुत शक्तिशाली हो गये

थे ; परन्तु यहाँ की दशा बंगाल से भी अधिक भयंकर हो रही थी। बंगाल में अब किसी शत्रु का भय न था ; किन्तु मद्रास को सदा हैदर अली, मरहठे, और निज़ाम का डर लगा रहता था।

मैसूर—मैसूर में विजयनगर के विध्वंस हो जाने के बाद एक हिन्दू राजा राज्य कर रहा था। उसकी मृत्यु पर हैदर अली मैसूर का राजा हुआ। हैदर अली का जन्म १७२२ ई० में हुआ था। पढ़ा-लिखा वह बिलकुल न था परन्तु सौभाग्य से फ्रांस की सैनिक शिक्षा का ढंग उसने बचपन में ही सीख लिया था। वह मैसूर के मंत्री को प्रसन्न करके सेना में एक अच्छी जगह पर नियुक्त हो गया था। कर्नाटिक की दूसरी लड़ाई में वह फ्रांसीसियों की ओर से लड़ा था। उसने अँग्रेज़ों की बन्दूकें आदि छीन ली थीं। मरहठों ने डिंडीगल पर आक्रमण किया। उसने बड़ी बहादुरी से उसकी रक्षा की। धीरे धीरे अपनी वीरता और पराक्रम से वह मैसूर का प्रधान मंत्री हो गया। राजा की माँ ने सेनापति खाँडे राव की सहायता से उसको पदच्युत करना चाहा ; उसने बड़ी चालाकी से खाँडे राव को क़ैद कर लिया और एक लोहे के पिंजरे में बन्द कर दिया। इसी पिंजरे में साल भर बाद खाँडे राव की मृत्यु होगई।

१७६६ ई० में राजा की मृत्यु हो जाने के बाद हैदर अली ने मैसूर के सिंहासन पर अधिकार कर लिया। गद्दी पर बैठते ही उसने पश्चिम में मलावार के किनारे अपने राज्य का विस्तार करना शुरू किया और कालीकट पर क़ब्ज़ा कर लिया। उत्तर की ओर जब उसने हाथ-पैर फैलाये तब उसे मरहठों का सामना

करना पड़ा। उन्होंने कई बार उस पर आक्रमण कर के चौथ वसूल की। निज़ाम से भी उसकी ठन गई। अँग्रेज भी उससे शंकित रहते थे क्योंकि कर्नाटिक पर उसके आक्रमण का सदा डर रहता था।

मैसूर की पहली लड़ाई—(१७६७—६९) हैदर अली के हमले का भय निज़ाम को अधिक था। उसने अँग्रेज़ों से सहायता माँगी। इसी समय मरहठों ने मैसूर पर चढ़ाई कर दी। हैदर अली ने बहुत सा रुपया देकर मरहठों को वापस कर दिया। फिर निज़ाम से बातचीत शुरू की और कहा कि तुम मेरी सहायता करो तो अँग्रेज़ों को हरा कर कर्नाटिक तुम्हें दे दूँ। निज़ाम उसकी बातों में आ गया और उसका साथी हो गया। अँग्रेज़ों की सेना जब निज़ाम की सहायता को पहुँची तब उसने देखा कि निज़ाम भी अँग्रेज़ों का शत्रु बना बैठा है। हैदर अली ने तमाम कर्नाटिक का प्रान्त उजाड़ डाला। १७६९ ई० में उसने यकायक मद्रास को जा घेरा। आख़िर अँग्रेजों को सन्धि कर लेनी पड़ी। अँग्रेज़ों और हैदर दोनों में मित्रता हो गई। यह तय हुआ कि किसी आपत्ति के समय एक दूसरे की सहायता करेगा। दोनों ने एक दूसरे के कैदी भी छोड़ दिये।



हैदर अली

इस सन्धि से कम्पनी के ऊपर एक विशेष बोझ पड़ गया। अब उसे अपने मित्रों की सहायता करना आवश्यक हो गया। १७७० ई० में मरहठों ने हैदर अली पर चढ़ाई की। अँग्रेज़ सन्धि के अनुसार उसकी सहायता न कर सके। हैदर अली हार गया और उसकी बड़ी हानि हुई। उस समय से हैदर अली अँग्रेज़ों का कट्टर शत्रु हो गया।

प्रश्न

१—क्लाइव के चले जाने के बाद भारतवर्ष की क्या दशा थी?

२—हैदर अली कौन था? उसने दक्षिण में अपनी शक्ति कैसे बढ़ाई?

३—मैसूर की पहली लड़ाई क्यों हुई? इसका क्या फल हुआ?

अध्याय ८

वारेन हेस्टिंग्ज़

क्लाइव के बाद वेरेल्स्ट बंगाल का गवर्नर हुआ और उसके बाद कार्टियर। इन दोनों में अनेकों गुण थे ; पर भारत की उस समय की दशा को साधे रहना उनके सामर्थ्य से बाहर था। अन्त में १७७२ ई० में कम्पनी के संचालकों ने वारेन हेस्टिंग्ज़ को बंगाल का गवर्नर नियुक्त किया। वारेनहेस्टिंग्ज़ १७५० ई० में कम्पनी का लेखक होकर भारत में आया था। उस समय उसकी अवस्था १८ वर्ष की थी। बीच में



वारेन हेस्टिंग्ज़

चार पाँच साल के लिए वह अपने घर चला गया था। उसका शेष समय भारत में ही कम्पनी की सेवा में व्यतीत हुआ था। अपने काम में भी वह बहुत चतुर था। कम्पनी के संचालकों

को उससे अधिक अनुभवी और योग्य दूसरा पुरुष नहीं मिल सकता था। इसलिए उन्होंने हेस्टिंग्ज़ को ही बंगाल का गवर्नर बनाया।

देश की दशा और सुधार—हेस्टिंग्ज़ के गवर्नर होने के समय बंगाल में क्लाइव का दोहरा प्रबन्ध चल रहा था। कम्पनी को दीवानी का अधिकार था; परन्तु कम्पनी यह काम बंगाल में मुहम्मद रज़ा और बिहार में राजा शिताब राय के द्वारा करती थी। मीर जाफ़र का लड़का बंगाल के सिंहासन पर था; परन्तु वह नाम मात्र का नवाब था। घूस का बाज़ार गर्म था। क्या कम्पनी और क्या नवाब दोनों के कर्मचारी धन इकट्ठा करने की चिन्ता में लगे हुए थे। प्रजा बड़ी दुखी थी। इधर बंगाल में दुर्भिक्ष पड़े अभी केवल दो ही वर्ष हुए थे। इसलिए प्रजा की दशा और भी बिगड़ गई थी। कम्पनी की भी आर्थिक दशा अच्छी न थी।

हेस्टिंग्ज़ ने अपनी गवर्नरी में इन सब बुराइयों को दूर करने का पूरा प्रबन्ध किया। उसने देशी हाकिमों को बरख़ास्त कर के हर एक ज़िले में एक एक कलेक्टर नियुक्त किया जो मालगुज़ारी वसूल करता था; परन्तु देशी भाषाओं से अपरिचित होने के कारण इन कलेक्टरों को बड़ी दिक्कत होती थी। १७७२ ई० में कलेक्टर की सहायता के लिये एक कौंसिल भी बना दी गई। यह पाँच साल के लिए ज़मींदारों से मालगुजारी का ठेका कर लेती थी। व्यापारियों की सुविधा के लिए हेस्टिंग्ज़ ने बहुत से कर हटा दिये और उनका दर भी बाँध दिया। इस प्रकार उसने क्लाइव के चलाये हुए दुहरे प्रबन्ध का अन्त करके प्रजा

के कष्टों का निवारण किया। इससे कम्पनी की आर्थिक दशा भी बहुत कुछ सुधर गई।

हेस्टिंग्ज़ को कम्पनी की आर्थिक दशा का बड़ा ध्यान रहता था। वह सदा ऐसे अवसरों की ताक़ में रहता कि जिससे कम्पनी के खर्चे में कमी हो। उसने देखा कि अब कम्पनी के दीवानी के काम को अपने हाथ में ले लेने से नवाब के पास अधिक खर्चा नहीं रहा। इसलिए उसने नवाब की पेन्शन घटा कर आधी के लगभग कर दी। शाह आलम अँग्रेजों का आश्रय छोड़ कर दिल्ली में सिन्धिया के पास चला गया था। हेस्टिंग्ज़ ने उसकी भी पेन्शन बन्द कर दी। उसने इलाहाबाद और कड़ा के ज़िले शुजाउद्दौला को दे दिये। उसने इसके बदले में कम्पनी को ५० लाख रुपया देने का वचन दिया।

हेस्टिंग्ज़ ने न्याय का भी अच्छा प्रबन्ध किया। उसने हर ज़िले में माल व फ़ौजदारी की अदालतें कायम कीं। माल के मामले कलेक्टर ही तय करता था। अन्य मामलों में वह पंडित और मौलवियों की सलाह लेता था। अपील सुनने के लिए दो अदालतें कलकत्ता में कायम की गईं। चोरों और लुटेरों आदि को उचित दंड मिलने लगा। इस प्रकार सारे देश में शान्ति छा गई।

रुहेलों से लड़ाई—१७७४ ई० में एक ऐसी घटना हुई जिसके कारण हेस्टिंग्ज़ को विलायत में बहुत नीचा देखना पड़ा। वर्त्तमान रुहेलखंड में यूसुफ़ज़ई अफ़गानों का एक फ़िर्क़ा जो रुहेला कहलाता था, १८ वीं सदी में पेशावर से आकर बस गया था। मुग़ल साम्राज्य के शिथिल हो जाने पर ये लोग

स्वतंत्र हो गये थे। इनका राज्य बड़ा शान्तिपूर्ण था। हिन्दुओं के साथ भी बड़ा अच्छा व्यवहार किया जाता था; परन्तु इन्हें मरहठों का सदा भय बना रहता था। मरहठों से बचने के लिए इनके सर्दार हाफिज़ रहमत ख़ाँ ने नवाब वज़ीर शुजाउद्दौला से सहायता माँगी। नवाब वज़ीर ने सहायता देना स्वीकार कर लिया। रुहेलों ने इसके बदले में ४० लाख रुपया देने का वचन दिया। जब मरहठों ने हमला किया तब शुजाउद्दौला ने अँग्रेज़ों की सहायता से सेना तैयार की परन्तु मरहठे बिना लड़ाई किये लौट गये। अब उसने रुहेलों से ४० लाख रुपया माँगा। उनके पास इस समय रुपया भी नहीं था। हाफिज़ रहमत ख़ाँ ने जो टालमटोल करना शुरू किया तो नवाब क्रुद्ध हो गया। उसने हेस्टिंग्ज़ से रुहेलों को दंड देने की सलाह की। हेस्टिंग्ज़ ने शुजाउद्दौला की सहायता को एक सेना भेज दी। नवाब ने रुहेलखंड पर चढ़ाई कर दी। हाफिज़ रहमत मारा गया। रुहेलखंड अवध में मिला लिया गया। रहमत ख़ाँ के लड़के फैज़ुल्लाख़ाँ को एक छोटी सी जागीर दे दी गई। उस देश के हज़ारों निवासी घर छोड़ कर भाग गये। अवध की सेना ने ख़ूब लूट-मार की। रुहेलखंड का हरा भरा देश इस प्रकार वीरान हो गया।

इस लड़ाई में अवध की सहायता करने पर हेस्टिंग्ज़ को इतिहासकारों ने बहुत बुरा भला कहा है। जब वह विलायत गया तब उसके बहुत से देश वासियों ने भी उस पर दोष लगाया और कहा कि हेस्टिंग्ज़ ने रुपये की लालच से एक हरे भरे देश को नष्ट कर डाला। इसमें सन्देह नहीं कि हेस्टिंग्ज़ ने इसमें बड़ी भूल की थी। इस भूल से उसने रुहेलखंड का शान्तिपूर्ण

राज्य नष्ट कर डाला ; परन्तु हेस्टिंग्ज़ ने जो कुछ भी किया अपने स्वार्थ के लिए नहीं ; किन्तु अपने देश के लिए। इस सहायता के बदले जो नवाब से रुपया मिला उससे कम्पनी की आर्थिक दशा बहुत सुधर गई। दूसरे नवाब भी सन्तुष्ट हो गया और कम्पनी की पश्चिमोत्तरी सीमा भी सुरक्षित हो गई।

रेग्युलेटिंग ऐक्ट—१७७४ ई० में कम्पनी के कर्मचारियों की अनुचित कार्रवाइयों से असंतुष्ट होकर इंगलैंड की



पार्लियामेंट

पार्लियामेन्ट ने एक नया क़ानून जारी किया जो रेग्युलेटिंग ऐक्ट के नाम से प्रसिद्ध है। इस समय कम्पनी की आर्थिक दशा अच्छी न थी। उसके ऊपर बहुत क़र्ज़ा था। उसको चुकाने के लिये

कम्पनी ने इंगलैंड की सरकार से मदद माँगी। पार्लियामेन्ट ने रुपया देना स्वीकार कर लिया; परन्तु इस ऐक्ट को जारी करके कम्पनी के प्रबन्ध में दख़ल देना शुरू कर दिया। रेग्युलेटिंग ऐक्ट के अनुसार बंगाल का गवर्नर तीनों प्रेसीडेंसियों (बम्बई, मद्रास और बंगाल) का गवर्नर जनरल बना दिया गया। उस की सहायता के लिए चार सदस्यों की एक कौंसिल नियुक्त की गई। वह कौंसिल की बहुमत से ही काम कर सकता था। इसके अतिरिक्त मुकदमें फ़ैसल करने के लिए कलकत्ते में एक बड़ा न्यायालय स्थापित किया गया। इसमें एक चीफ़ जस्टिस (मुख्य न्यायाधीश) होता था जो तीन अन्य जजों की सहायता से मुक़दमें सुनता और न्याय करता था।

ऐक्ट के दोष—इस ऐक्ट से मद्रास और बम्बई के गवर्नर बंगाल के गवर्नर-जनरल के अधीन होगये। वे बिना उसकी स्वीकृति लिए सन्धि अथवा युद्ध नहीं कर सकते थे। परन्तु उस समय उन पर दृढ़ शासन होना कठिन था। इसलिए उन गवर्नरों पर गवर्नर-जनरल का पूर्ण अधिकार न रह सका। उन्होंने भी गवर्नर-जनरल की कुछ अधिक परवाह न की। दूसरे कलकत्ते का न्यायालय गवर्नर-जनरल के अधीन न था और उसके जज अपने को इंगलैंड की सरकार के अधीन समझते थे। इसलिए वे भी गवर्नर-जनरल की वैसी परवाह न करते थे। फिर गवर्नर-जनरल की कौंसिल के सदस्य इंगलैंड की सरकार ने नियुक्त करके भेजे थे। वे भारत की दशा से भली भाँति परिचित न थे। इसलिए उनमें और गवर्नर-जनरल में मतभेद तथा अनबन रहा करती थी। इन सब दोषों के कारण इस ऐक्ट का जो उद्देश्य था, अर्थात् शान्ति पूर्ण शासन स्थापित

करना, वह पूरा न हो सका। इस समय भारत की स्थिति को सुधारने के लिए यह आवश्यक था कि गवर्नर-जनरल के हाथ में पूरी शक्ति दी जाती जिससे वह निर्विघ्न शासन कर सकता; परन्तु ऐसा नहीं किया गया। इस कारण से यह कानून सफल न हो सका।

प्रश्न

१—वारेन हेस्टिंग्ज़ ने बङ्गाल का गवर्नर रह कर क्या क्या सुधार किये ?

२—रुहेले कौन थे ? इन पर क्यों चढ़ाई की गई ? उसका क्या परिणाम हुआ ?

३—रेग्युलेटिंग ऐक्ट के विषय में तुम क्या जानते हो ? इसने भारत की शासन-विधि में क्या परिवर्तन किया ?

अध्याय ६

पहिला गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्ज़

(१७७४ ई० से १७८५ ई० तक)

(पूर्वार्द्ध)

हेस्टिंग्ज़ और उसकी कौंसिल—रेग्युलेटिंग ऐक्ट के अनुसार १७७४ ई० में वारेन हेस्टिंग्ज़ को गवर्नर-जनरल की उपाधि मिल गई। बारवेल, फ़्रांसिस, मानसन और क्लेवरिंग ये चार व्यक्ति उसकी कौंसिल के सदस्य बनाये गये। बारवेल तो भारतवर्ष में ही मौजूद था बाकी तीनों विलायत से भेजे गये थे। इसलिए वे भारत की दशा से अनभिज्ञ थे। वे हेस्टिंग्ज़ की योजनाओं का महत्व बिल्कुल न समझ सकते थे। दूसरे बारवेल को छोड़ कर इनमें से सभी गवर्नर-जनरल के पद के अभिलाषी थे। इस कारण उन्होंने कौंसिल में हेस्टिंग्ज़ के हर एक काम का विरोध करना अपना कर्तव्य बना लिया। बात बात पर हेस्टिंग्ज़ से उनका झगड़ा होने लगा और हेस्टिंग्ज़ स्वतंत्रता पूर्वक कोई काम न कर सकता था। यही नहीं बल्कि वे हेस्टिंग्ज़ पर घूस आदि लेने का सन्देह करने लगे। इससे उत्साहित होकर बंगाल के एक ब्राह्मण नन्दकुमार ने कौंसिल में वारेन हेस्टिंग्ज़ पर कई

अपराधों के लिये दावा कर दिया। जिस दिन यह मामला कौंसिल में पेश हुआ, हेस्टिंग्ज़ कौंसिल से उठ गया; परन्तु उसके विरोधियों ने उसकी अनुपस्थिति में ही उस पर विचार करके उसे दोषी ठहरा दिया।

कौंसिल के सदस्यों के विरोध से हेस्टिंग्ज़ उकता गया और अपना पद त्याग देने का विचार करने लगा। सौभाग्य से १७७६ ई० में मानसन और क्लेवरिंग की मृत्यु हो गई। अब हेस्टिंग्ज़ की जान में जान आई; परन्तु उसका असली शत्रु फ्रांसिस अभी जीवित ही था। उसने फिर झगड़ा शुरू कर दिया। यह झगड़ा यहाँ तक बढ़ा कि दोनों में हाथा-पाई की नौबत आ गई। फ्रांसिस ने हेस्टिंग्ज़ पर गोली चला ही दी थी; पर वह बच गया। इसके बाद फ्रांसिस इंगलैंड चला गया और हेस्टिंग्ज़ पर अभियोग चलाने का मसाला इकट्ठा करने लगा।

नन्दकुमार को फाँसी—नन्दकुमार बंगाल का एक प्रतिष्ठित ब्राह्मण था। यह माल के मुहकमे में नौकर था। जब हेस्टिंग्ज़ गवर्नर हुआ तब उसने नन्दकुमार को बरख़्वास्त कर दिया। नन्दकुमार हेस्टिंग्ज़ का शत्रु बन गया। उसने कलकत्ते की कौंसिल में हेस्टिंग्ज़ पर उसके विरोधियों का संकेत पाकर अभियोग चला दिया कि हेस्टिंग्ज़ ने मीर जाफ़र की बेगम मुन्नी बीबी से साढ़े तीन लाख रुपया घूस लिया है। इसी समय कलकत्ते के बड़े न्यायालय में एक व्यक्ति ने जिसका नाम मोहन प्रसाद था, नन्दकुमार पर जालसाज़ी का मुकद्दमा चलाया। चीफ़ जस्टिस इम्पे ने नन्दकुमार को दोषी ठहराया और प्राण दंड की आज्ञा दी। नन्दकुमार फांसी पर लटका दिया गया।

इस मुकद्दमे के सम्बन्ध में हेस्टिंग्ज़ पर यह दोष लगाया जाता है कि उसने इम्पे से मिल कर नन्दकुमार को फाँसी दिलवा दी। वास्तव में हेस्टिंग्ज़ पर दावा होने के बाद ही नन्दकुमार को जो फाँसी दी गई इससे यह अनुमान होना स्वाभाविक ही था ; पर यह अनुमान ठीक नहीं। बहुत छान बीन करने से पता चला है कि इसमें इम्पे अथवा हेस्टिंग्ज़ का दोष नहीं था। उस समय इंगलैंड का कानून ही ऐसा था कि जालसाज़ी के लिये प्राणदंड की सज़ा होती थी। इम्पे ने उसी कानून के अनुसार सब मामला सुन कर सज़ा का हुक्म सुनाया था ; परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि इंगलैंड के कानून का भारत में प्रयोग करना सर्वथा अनुचित था।

मरहठों की पहिली लड़ाई—(१७७५—८२ ई०) चौथे पेशवा माधव राव की, जो पानीपत की तीसरी लड़ाई के बाद पेशवा हुआ था, १७७२ ई० में मृत्यु हो गई। उसकी मृत्यु के बाद मरहठों में बड़ी गड़बड़ी फैल गई। उसके कोई सन्तान न थी। इसलिए उसका भाई नारायण राव गद्दी पर बैठा। पर वह कुछ ही महीने राज्य कर पाया था कि मार डाला गया। अब उसके चचा राघोबा ने खुद पेशवा



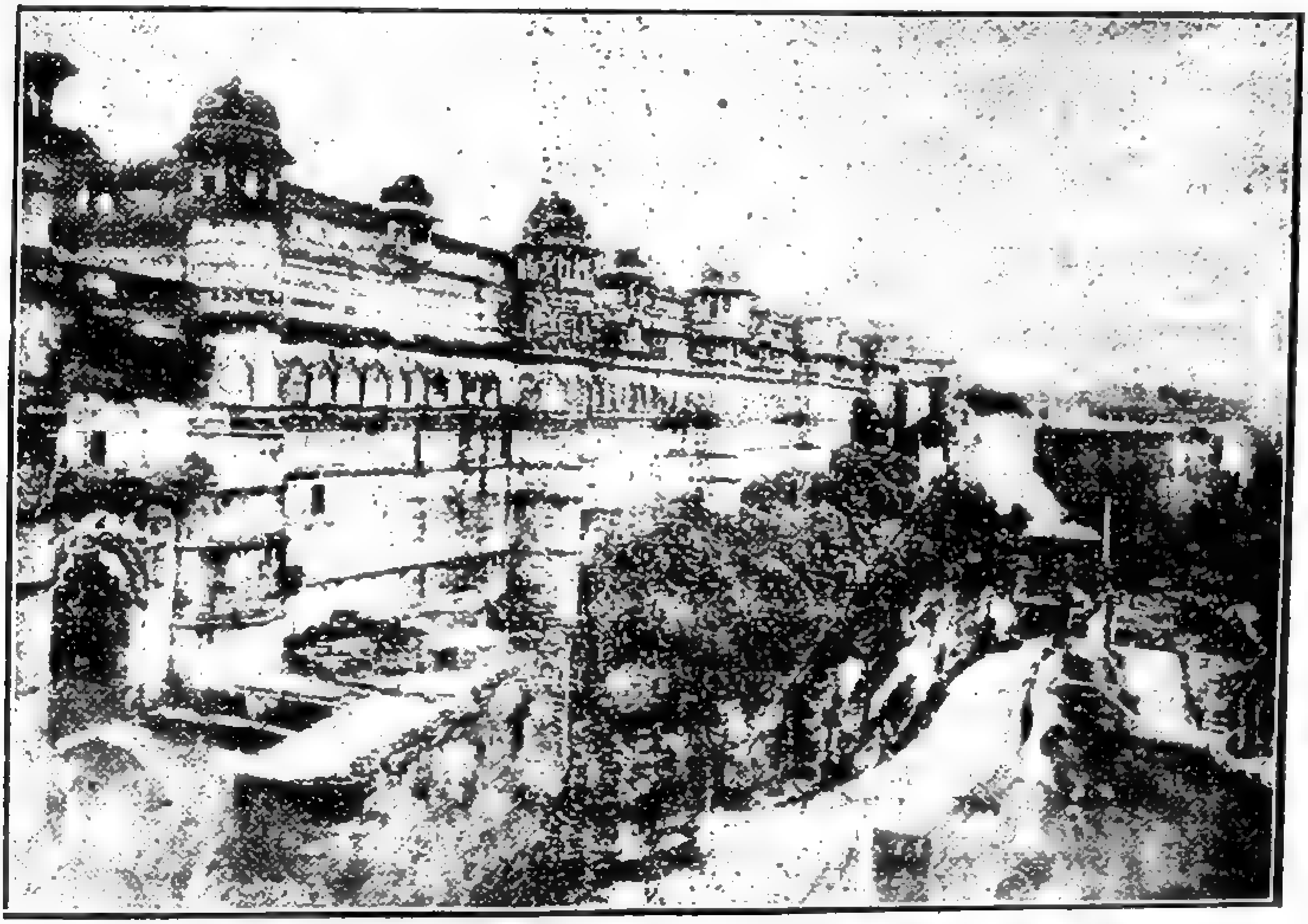
नाना फरनवीस

बनना चाहा। इस पर मरहठे सरदार बिगड़ गये। माधव राव के मंत्री नाना फ़रनवीस ने नारायण राव के अबोध पुत्र को जो अपने पिता की मृत्यु के बाद उत्पन्न हुआ था, सिंहासन पर बैठा दिया और सारा राज्य प्रबन्ध अपने हाथ में ले लिया। राघोबा ने भाग कर अँग्रेज़ों से सहायता माँगी। बम्बई की सरकार ने देखा कि इस समय इन झगड़ों में भाग लेने से हमारी सीमा बढ़ जायगी। उसने सन् १७७५ ई० में सूरत के स्थान पर राघोबा से एक सन्धि कर ली। इस सन्धि के अनुसार अँग्रेज़ों ने उसको सहायता देना स्वीकार किया। रघुनाथ राव ने सालसिट और बेसीन के टापू अँग्रेज़ों को दे दिये।

पुरन्धर का सन्धि-पत्र १७७६ ई०—बम्बई की सरकार ने सूरत की सन्धि करने से पहिले गवर्नर-जनरल की स्वीकृति नहीं ली थी। इस लिए जब बंगाल की कौंसिल को इस कार्रवाई का पता लगा तब वह बहुत अप्रसन्न हुई। उसने कलकत्ते से १७७६ ई० में कर्नल अपृन को भेज कर पुरन्धर के स्थान पर नाना फ़रनवीस से एक दूसरी सन्धि की। इसके अनुसार नाना ने अँग्रेज़ों को सालसिट और बेसीन देने का वचन दिया और राघोबा को ३ लाख रुपया सालाना पेन्शन देना स्वीकार कर लिया।


राघोवा

इधर बम्बई सरकार ने सूरत की सन्धि की ख़बर इंगलैंड भेज दी थी। कम्पनी के संचालकों ने इस सन्धि को स्वीकार कर लिया था। जब पुरन्धर की सन्धि का हाल उनको मिला तब उन्हों ने उसे अस्वीकार किया। विवश होकर हेस्टिंग्ज़ को भी सूरत की सन्धि के अनुसार राघोबा की ही सहायता करनी पड़ी।



ग्वालियर का क़िला

अब अँग्रेज़ों की एक सेना कर्नल एगरटन की अध्यक्षता में राघोबा को लेकर पूना की ओर बढ़ी। मार्ग में पूना के निकट बारगाँव के स्थान पर मरहठों की सेना ने उसे घेर लिया

और एगरटन को विवश होकर सन्धि करनी पड़ी। इससे सालसिट और बेसीन उसने मरहठों को लौटा देने का वादा किया।

हेस्टिंग्ज़ ने इस समय बड़े साहस से काम लिया। उसने लड़ाई जारी रक्खी। एक सेना जनरल गोडार्ड के अधीन कलकत्ते से भी भेजी गई थी। इस सेना ने बड़ौदा पहुँच कर फ़तहसिंह को गद्दी पर बिठाल दिया जिससे गायकवाड़ अँग्रेज़ों का मित्र हो गया। उसकी सहायता से इसने अहमदाबाद और बेसीन जीत लिये। इसी समय मेजर पोफ़म ने जाकर ग्वालियर के क़िले को भी जीत लिया और इस प्रकार सिन्धिया को, जो राघोबा का शत्रु था, सन्धि करने पर बाध्य किया।

सालबाई की सन्धि—अब मरहठे और अँग्रेज़ दोनों ही युद्ध से तंग आ गये थे। कम्पनी के पास रुपया न था। सिंधिया को भी लड़ाई से कुछ लाभ न दिखाई देता था। इसलिए १७८२ ई० में सालबाई के स्थान पर दोनों में सन्धि हो गई। इस सन्धि के अनुसार नारायण राव के लड़के माधव राव द्वितीय को पेशवा स्वीकार कर लिया गया। राघोबा को ३ लाख सालाना की पेन्शन नियत कर दी गई। सालसिट और बेसीन अँग्रेजों के पास रहे। उनको व्यापार करने की भी आज्ञा मिल गई और यह निश्चय हुआ कि आगे कभी अँग्रेज़ और मरहठे एक दूसरे के शत्रुओं की सहायता न करें। सालबाई की सन्धि से अँग्रेज़ों की धाक जम गई। इसके बाद २० वर्ष तक मरहठों ने सिर न उठाया।

प्रश्न

१—हेस्टिंग्ज़ के प्रति उसके कौंसिल वालों का कैसा व्यवहार था? हेस्टिंग्ज़ का उनसे कैसे पीछा छूटा?

२—मरहठों की पहली लड़ाई क्यों हुई? इस लड़ाई से अँग्रेज़ों को क्या मिला?

३—नन्दकुमार कौन था? उसको क्यों फाँसी दी गई?

४—सूरत, पुरन्धर और सालबाई की संधियों के विषय में तुम क्या जानते हो?

अध्याय १०

पहला गवर्नर-जनरल वारेन हेस्टिंग्ज़

(१७७४—१७८५ ई०)

उत्तरार्द्ध

मैसूर की दूसरी लड़ाई-(१७८०—८४ ई०) अभी मरहठों से लड़ाई ख़तम न हो पाई थी कि अँग्रेज़ों को एक और शक्ति का सामना करना पड़ा। मैसूर के हैदर अली ने अपनी शक्ति बहुत बढ़ा ली थी। निज़ाम आदि उससे डरते रहते थे ; परन्तु इस अवसर पर निज़ाम ने अँग्रेज़ों के विरुद्ध उससे सन्धि कर ली थी। क्योंकि अँग्रेजों ने निज़ाम से गन्तूर का प्रान्त छीन कर बैठे बिठाए शत्रुता मोल ले ली थी। मद्रास सरकार की हालत इस समय अच्छी न थी। वहाँ पर दोहरे प्रबन्ध के कारण हाहाकार मचा हुआ था। अँग्रेज़ों ने गन्तूर का प्रान्त लौटाल कर निज़ाम को तो अपनी ओर मिला लिया ; पर हैदर अली अँग्रेज़ों से चिढ़ा ही रहा। क्योंकि उन्होंने उसे १७६९ ई० की सन्धि के अनुसार मरहठों के विरुद्ध सहायता नहीं दी थी। वह मद्रास की स्थिति से ख़ूब परिचित था और अँग्रेज़ों से बदला लेने का अवसर ढूँढ़ रहा था। उसके पास एक बहुत बड़ी सेना भी थी जिसमें फ़ांसीसी अफ़सर नौकर थे।

१७७८ ई० में अँग्रेज़ों और फ्रांसीसियों के बीच लड़ाई छिड़ गई। इसलिए भारत में हेस्टिंग्ज़ ने फ्रांसीसियों की बस्तियों पर हमला कर दिया। इनमें एक बस्ती माही भी थी जो फ्रांसीसियों की थी। यह मैसूर की राज्य-सीमा में थी। हैदर अली ने अँग्रेज़ों को कहला भेजा कि यदि कम्पनी माही पर अधिकार करेगी तो मैं उससे लड़ने को तैय्यार हूँ। हेस्टिंग्ज़ ने उसकी एक न सुनी। इस पर वह बहुत नाराज़ हो गया और उसने एक बड़ी सेना लेकर धावा बोल दिया। हैदर अली ने कर्नल बेली को जो उसके विरुद्ध भेजा गया था हरा दिया। कृष्णा से कावेरी तक के सब प्रान्त को उसने खूब लूट-खसोट कर उजाड़ दिया। कर्नाटिक पर भी उसने अधिकार कर लिया।

यह हाल देख कर १७८१ ई० में हेस्टिंग्ज़ ने कलकत्ता से सर आयरकूट को हैदर अली का सामना करने के लिए भेजा। उसने हैदर अली को आते ही पोर्टो नोवो नाम के स्थान पर बुरी तरह हरा दिया। हैदरअली के एक लाख आदमी इस लड़ाई में मारे गये और उसकी बड़ी हानि हुई। उसने फिर सेना इकट्ठी कर ली और १७८२ ई० में उसके लड़के टीपू ने कर्नल ब्रेथवेट को हरा दिया। अब हैदर अँग्रेज़ों को पूरी तरह नाश कर देने की तैय्यारियाँ करने लगा; परन्तु सौभाग्य से ७ दिसम्बर १७८२ ई० को उसकी मृत्यु हो गई। उसके बाद उसका लड़का टीपू गद्दी पर बैठा। कुछ दिनों तक तो फ्रांसीसियों की मदद से वह अँग्रेज़ों से लड़ता रहा; परन्तु जब १७८३ ई० में अँग्रेज़ों और फ्रांसीसियों के बीच सन्धि होगई तब उसने भी सन्धि कर ली। यह सन्धि १७८४ ई० में मंगलौर के स्थान पर हुई। इसमें यह निर्णय हुआ कि दोनों जीते हुए देश लौटा दें। यह सन्धि बहुत

दिनों तक न रही। क्योंकि टीपू ने इसे न माना और चुपचाप अपनी शक्ति बढ़ाने लगा।

हैदर अली का चरित्र—हैदरअली ने अपने पराक्रम और वीरता के कारण ही एक साधारण व्यक्ति की हैसियत से सुलतान तक के पद को प्राप्त किया। उसकी वीरता की प्रशंसा उसके शत्रुओं तक ने मुक्त कंठ से की है। उसका शासन-प्रबन्ध भी बहुत अच्छा था। वह हिन्दू मुसलमानों में भेद नहीं रखता था। ब्राह्मण तक उसके राज्य में बड़े बड़े पदों पर नियुक्त थे। वह पढ़ा-लिखा बिल्कुल न था; पर बड़ा बुद्धिमान था। पाँच भाषाओं को अच्छी तरह से बोल सकता था। वह पेचीदा से पेचीदा सवाल झट हल कर देता था। उसका व्यवहार बड़ा सज्जनतापूर्ण होता था। वह छोटे बड़े सब से समान भाव से मिलता था; परन्तु उसमें दोष भी थे। हृदय उसका बड़ा कठोर था। उसके दोषों पर विचार करने पर भी यही कहना होगा कि वह निस्सन्देह अपने समय का एक महान् व्यक्ति था।

हेसिंटग्ज़ और चेतसिंह—चेतसिंह बनारस का राजा था। बनारस पहले अवध के नवाब के अधिकार में था। १७७५ ई० में अवध के नवाब ने उसे कम्पनी को दे दिया था। इस प्रकार राजा चेतसिंह कम्पनी के आधिपत्य में आ गया था। उससे और अँग्रेज़ों से जो सन्धि हुई थी उसमें यह तय हो गया था कि राजा २२½ लाख रुपया सालाना कम्पनी को दिया करेगा। यह रुपया वह बराबर कम्पनी को देता रहा।

इस समय ईस्ट इन्डिया कम्पनी की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी। कई लड़ाइयों में बराबर लगे रहने से ख़ज़ाना ख़ाली

हो चला था। हेस्टिंग्ज़ इस चिन्ता में लगा रहता था कि कोई धन प्राप्त करने का साधन निकले। इसलिए १७७८ ई० में उसने चेतसिंह से पाँच लाख रुपये और माँगे। चेतसिंह ने किसी न किसी तरह से यह माँग पूरी कर दी। साल भर बाद उससे इतने ही रुपये और माँगे गये। यह भी उसने दे दिये। १७८० ई० में मैसूर और मरहठों से लड़ने में कम्पनी की दशा और भी बिगड़ गई। हेस्टिंग्ज़ ने राजा से ५ लाख रुपये और एक सवारों की पलटन माँगी। राजा ने इसकी बड़ी शिकायत की। इस बार उसने केवल २ लाख रुपया ही दिया। हेस्टिंग्ज़ नाराज़ हो गया। उसने राजा पर ५० लाख रुपया जुर्माना कर दिया और बनारस पर चढ़ाई करके क़िले को घेर लिया। इस अनुचित व्यवहार पर बनारस की प्रजा बिगड़ खड़ी हुई। उसने कुछ अँग्रेज़ी सैनिकों को मार डाला। परंतु विद्रोह दबा दिया गया। राजा ग्वालियर भाग गया। तब उसके भाँजे को गद्दी दी गयी और कर दुगना कर दिया गया।

हेस्टिंग्ज़ का यह व्यवहार बड़ा अनुचित था। इस अमानुषिक कार्य से उसने अपने ऊपर एक और धब्बा लगा लिया। कम्पनी को रुपये की आवश्यकता तो अवश्य थी; पर हेस्टिंग्ज़ ने निर्दोष राजा को महलों में घेर कर बड़ी भारी भूल की और अपनी अदूरदर्शिता का परिचय दिया उसका बर्ताव बड़ा कठोर था और वह इस अपराध से मुक्त नहीं किया जा सकता।

हेस्टिंग्ज़ और अवध की बेगमें—रुपये की ज़रूरत ने हेस्टिंग्ज़ से एक और भी निन्दित कर्म करा डाला। अवध के नवाब वज़ीर आसफुद्दौला पर कम्पनी का रुपया चाहिये था।

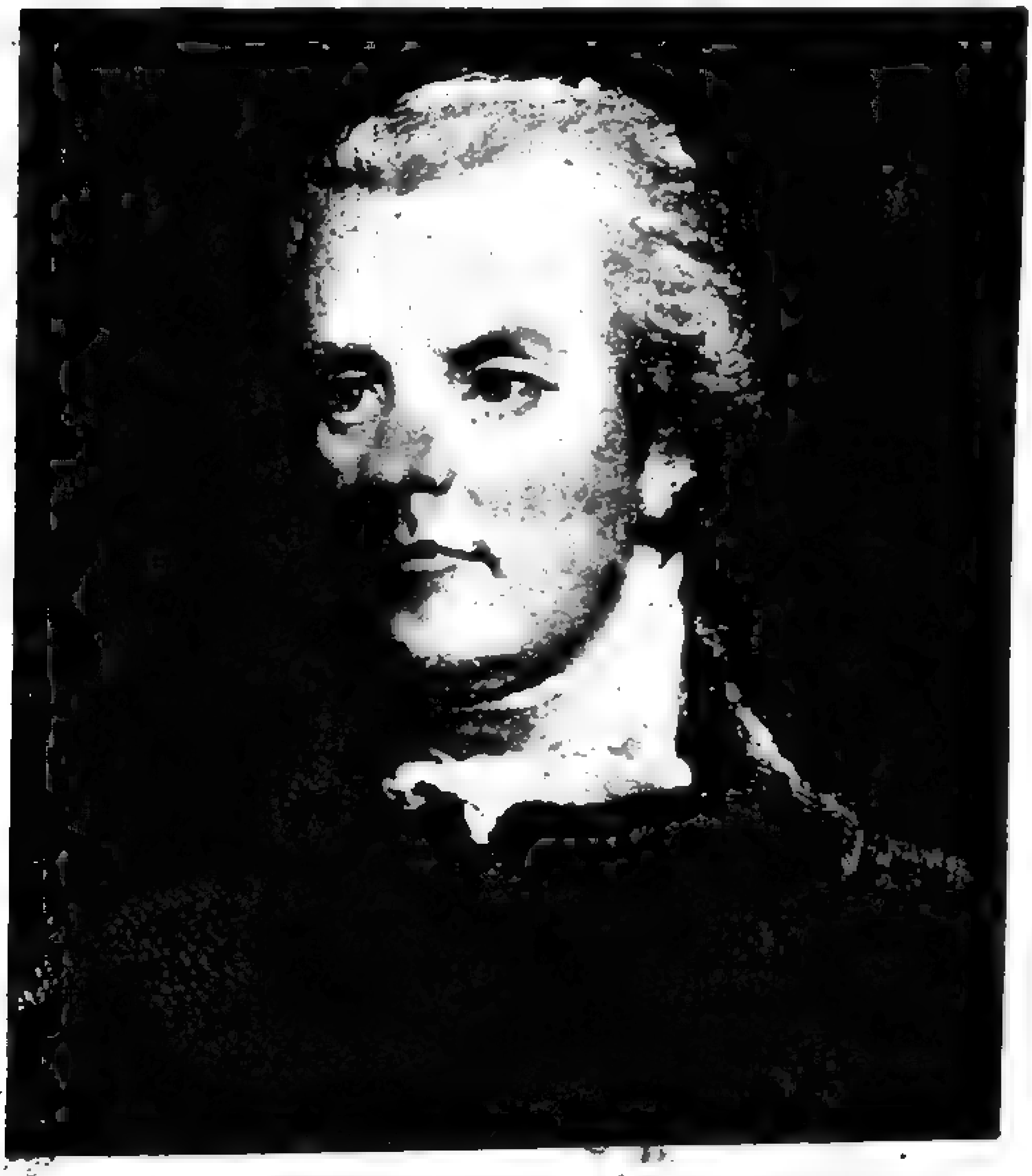
कम्पनी ने रुपया माँगा। उसने कहा कि मेरे पास रुपया नहीं है। मेरी माँ और दादी ने सारा रुपया दबा लिया है। वास्तव में नवाब बड़ा विलासी था। १७७५ ई० में उसकी माँ ने उसको बहुत सा रुपया दिया था; पर उसने भोग-विलास में सब फूँक दिया। उस समय कम्पनी ने बेगमों को विश्वास दिलाया था कि अब आगे रुपया न माँगा जायगा। अब कम्पनी को रुपये की ज़रूरत थी। नवाब वज़ीर हेस्टिंग्ज़ से चुनार में मिला। उसने हेस्टिंग्ज़ से कहा कि यदि आप बेगमों से रुपया वसूल करने में सहायता दें तो मैं आप का सब देना चुका दूँ। हेस्टिंग्ज़ को यह भी सन्देह था कि बेगमों ने चेतसिंह की कुछ सहायता की है। उसने चट अपनी स्वीकृत दे दी। अँग्रेज़ी सेना और नवाब के आदमियों ने जाकर बेगमों के महल घेर लिये। उनके साथ और उनके दास-दासियों के साथ बड़ी सख़्ती और कठोरता का व्यवहार किया गया। उनसे ज़बरदस्ती बहुत सा रुपया छीन लिया गया।

हेस्टिंग्ज़ का यह कार्य भी अत्यन्त निन्दनीय था। यदि यह मान भी लिया जाय कि बेगमें चेतसिंह को सहायता पहुँचाने की अपराधी थीं तो भी असहाय बेगमों के साथ ऐसी क्रूरता का व्यवहार कभी भी क्षमा नहीं किया जा सकता।

हेस्टिंग्ज़ का पदत्याग—इस घटना के बाद हेस्टिंग्ज़ भारत में अधिक न ठहरा। उसकी अवधि भी पूरी हो आई थी। १७८५ ई० में वह अपना पद त्याग कर विलायत चला गया। वहाँ पहुँचने पर तीन साल तक तो वह शान्ति से रहा; पर १७८८ ई० में फ़्रांसिस का तैय्यार किया हुआ मामला शुरू हो

गया। यह मामला सात वर्ष तक चलता रहा। बड़े बड़े भयंकर दोष उस पर लगाये गये। उसे बुरी बुरी गालियाँ तक सुनाई गईं। अन्त में १७९५ ई० में वह निर्दोष ठहराया गया। सन् १८१८ ई० में ८५ वर्ष की अवस्था में उसकी मृत्यु हो गई।

हेस्टिंग्ज़ के शासन-काल में कई एक निन्दनीय कार्य तो अवश्य हुए: फिर भी इस में सन्देह नहीं कि उसने अपना तन-मन-धन सब ही अपने देश की सेवा में अर्पण कर दिया। वह बड़ा वीर और साहसी पुरुष था। आपत्ति पड़ने पर वह ज़रा भी न घबड़ाता था और बड़े धैर्य से काम लेता था। वह बड़ा उदारचरित्र था। प्रजा का उसे सदा ध्यान रहता था। विद्या और साहित्य की वृद्धि के लिए और प्रजा के सुख के लिए उसने जो भी सुधार किये वे सब अत्यन्त सराहनीय हैं।



विलियम पिट

पिट का इंडिया बिल – रेग्युलेटिंग ऐक्ट की बुराइयों की ओर अँग्रेजी पार्लियामेन्ट का

ध्यान आकर्षित हो चुका था। इसलिए वहाँ के प्रधान सचिव मिस्टर पिट ने एक क़ानून पास कराया, जो ' पिट का इंडिया बिल ' कहलाता है। इस क़ानून ने कम्पनी के शासन में बड़ा परिवर्तन कर दिया। अब ६ सदस्य की एक प्रबन्ध-कारिणी सभा बनाई गई जिसे भारत के शासन पर अधिकार दिया गया। इस सभा का नाम ' बोर्ड आफ कन्ट्रोल ' रक्खा गया। गवर्नर जनरल की सभा के सदस्यों की संख्या ४ से घटा कर ३ कर दी गई। यह नियम कर दिया गया कि बिना प्रबन्ध-कारिणी सभा की आज्ञा लिये हुए गवर्नर-जनरल देशी नरेशों के झगड़ों में किसी प्रकार का हस्ताक्षेप नहीं कर सकता। इंगलैंड में तीन आदमियों की एक गुप्त कमेटी भी बनाई गई जो जल्दी के कामों को कर सकती थी। इसके अतिरिक्त इस क़ानून से गवर्नर-जनरल का बम्बई और मद्रास के गवर्नरों पर अधिकार भी बढ़ा दिया गया। यह क़ानून बड़ा सोच-समझ कर बनाया गया था। इसलिए यह सफल हुआ। १८५८ ई० तक इसी के अनुसार भारत का शासन-प्रबन्ध होता रहा।

प्रश्न

१—मैसूर की दूसरी लड़ाई क्यों हुई ? इस लड़ाई से अँग्रेज़ों को क्या लाभ हुआ ?

२—हेस्टिंग्ज़ने नीचे लिखे हुए लोगों के साथ कैसा व्यवहार किया ? (१) राजा चेतसिंह और (२) अवध की बेगमें।

३—हेस्टिंग्ज़ का चरित्र कैसा था ?

४—पिट के इन्डिया बिल से भारत के शासन-प्रबन्ध में क्या परिवर्तन हुआ ?

अध्याय ११

लार्ड कार्नवालिस (१७८६–१७६३)

सर जान मैकफरसन—वारेन हेस्टिंग्ज़ भारत से बिदा होते समय अपना पदाधिकार सर जान मैकफरसन को सौंप गया था। इसके शासन काल में कोई विशेष घटना नहीं हुई। यह बड़ा शिथिल था। महाद जी सिन्धिया ने दिल्ली और आगरा पर पूर्ण अधिकार कर लिया; पर इस ने चूँ तक न की।

लार्ड कार्नवालिस—१७८६ ई० में लार्ड कार्नवालिस भारत का गवर्नर-जेनरल होकर आया। यह बड़ा योग्य पुरुष था। डाइरेक्टरों का इस पर विश्वास भी अधिक था। इसी लिए इसको अधिकार भी अधिक मिले हुए थे। पिट्स इंडिया बिल ने भी उसको बहुत कुछ स्वतंत्र बना दिया था। इसने आते ही एक नये युग का संचार किया।



लार्ड कार्नवालिस

सुधार—लार्ड कार्नवालिस ने देखा कि भारत में कम्पनी के कर्मचारियों को बहुत कम वेतन मिलता है। इसलिए उन्होंने अभी घूस और भेंट लेना बन्द नहीं किया है। इस दोष को दूर करने के लिए उसने उनका वेतन बढ़ा दिया। अब वे लोग अच्छी तरह अपना निर्वाह कर सकते थे। इसके बाद उसने घूस की प्रथा बन्द करने का भरसक प्रयत्न किया।

देशी कर्मचारियों पर कार्नवालिस को विश्वास न था। इसलिए उसने अँग्रेज़ों को बड़े बड़े पदों पर नियुक्त किया। वास्तव में यह कार्नवालिस की भूल थी। क्योंकि बिना भारत-वासियों की सहायता के शासन-कार्य अच्छी तरह से होना असम्भव था।

लार्ड कार्नवालिस ने अदालतों का भी सुधार किया। दीवानी और माल के मुहकमें अलग कर दिए गये। हर ज़िले में एक एक जज नियत किया गया। जजों की सहायता के लिए पंडित और क़ाज़ी रहते थे। कलकत्ता, पटना, मुर्शिदाबाद और ढाका में चार बड़ी बड़ी अदालतें थीं। जजों को दौरा भी करना पड़ता था। दीवानी की सब से बड़ी अदालत "सदर दीवानी अदालत" कहलाती थी और फौज़दारी का 'सदर निज़ामत अदालत"। यह दोनों कलकत्ते में थीं। दंड बहुत कठोर न था। पुलिस का प्रबन्ध अच्छा था।

इस्तमरारी बन्दोबस्त—कार्नवालिस का भारत में सब से बड़ा और महत्वपूर्ण कार्य इस्तमरारी बन्दोबस्त था। इस समय लगान वसूल करने का वह तरीक़ा नहीं था जो मुग़लों के समय में था। मुग़ल बादशाहों के समय में ज़मीन सब सम्राट की समझी जाती थी। किसान सीधे सम्राट् को

कर देते थे ; पर इस समय ज़मींदारी प्रथा चल गयी थी। किसान लोग लगान ज़मींदार को देते थे। ज़मींदारों से सरकारी कर्मचारी कर वसूल करते थे। इससे सरकार को कर वसूल करने में बड़ी असुविधा होती थी। ज़मींदार लोग किसानों पर बड़ा अत्याचार करते थे और मनमाना लगान लेते थे। ज़मींदारों के अत्याचार से किसानों की रक्षा का भी कोई प्रबंध न था। इन सब कारणों से खेती की दशा बहुत बिगड़ी हुई थी।

इन दोषों को दूर करने का सब से पहले वारेन हेस्टिंग्ज़ ने प्रयत्न किया। उसने पाँच वर्ष के लिए ज़मीन को ठेके पर उठाना आरम्भ कर दिया ; परन्तु फल कुछ भी न हुआ। ज़मीन का दाम तो बहुत लग जाता था ; पर उसका चुकाना बहुत मुश्किल होता था। कृषकों को तो नये नये ज़मींदारों से दुःख रहता ही था ; कम्पनी का भी ख़ज़ाना ख़ाली ही रहता था।

कार्नवालिस ने ज़मीन की खूब जाँच पड़ताल करके बंगाल, विहार और उड़ीसा के ज़मींदारों को ज़मीन का मालिक बना दिया और उनको जो कर देना था वह सदा के लिए नियत कर दिया। अब ज़मींदारों को राज्य की ओर से कोई भय न रहा। वह किसानों से लगान वसूल करके एक निश्चित रक़म कम्पनी को भेज देते थे। कम्पनी की आमदनी भी सदा के लिए बंध गई। बार बार बन्दोबस्त करने की कोई आवश्यकता न रही। खेती में खूब उन्नति होने लगी। ज़मींदार धीरे धीरे धनी होने लगे और शहरों में जा जाकर बसने लगे।

इस्तमरारी बन्दोबस्त ने ज़मींदारों की दशा तो बहुत कुछ

सुधार दी ; पर किसानों की दशा जैसी की तैसी ही रही। उन का लगान नियत नहीं किया गया था। ज़मींदार के आदमी उन पर बड़ी सख़्ती करते थे। यदि खेती की उन्नति से कुछ उपज बढ़ती तो ज़मींदार झट लगान बढ़ा देता था। इस बन्दोबस्त से कम्पनी को भी कोई लाभ न था। उसको वही नियत रक़म मिलती थी। उसकी भविष्य में होने वाली आमदनी भी जाती रही ; परन्तु यह अवश्य है कि ज़मींदार लोग सरकार के मित्र हो गये और सदा उन्होंने उसका साथ दिया।

मैसूर की तीसरी लड़ाई—कार्नवालिस का मुख्य उद्देश्य शान्ति स्थापित करना था। वह किसी लड़ाई-झगड़े में नहीं पड़ना चाहता था। कम्पनी के संचालकों का भी यही आदेश था ; परन्तु दक्षिण में उसे अपनी इच्छा के विरुद्ध काम करना पड़ा। मंगलोर की सन्धि के बाद मैसूर के टीपू सुलतान ने अपनी सैनिक शक्ति बहुत बढ़ा ली थी। उसने आस पास के देशों को जीत कर अपने राज्य में मिला लिया था। वह अँग्रेज़ों को भारत से निकाल देना चाहता था। १७८९ ई० में उसने ट्रावंकोर के राजा पर चढ़ाई कर दी। यह राजा अँग्रेजों का मित्र था। अतः कार्नवालिस ने उसे सहायता देने का वचन दे दिया। निज़ाम और मरहठे लोग भी अँग्रेज़ों के साथ हो लिये।

इस प्रकार १७९० ई० में अँग्रेज़ों और टीपू के बीच लड़ाई छिड़ गई। कार्नवालिस स्वयं कलकत्ते से सेना लेकर टीपू का सामना करने के लिए बढ़ा। निज़ाम और मरहठों की सेना तो लूट-मार करने में ही लगी रही ; पर कार्नवालिस ने बंगलोर और उसके

पास के ज़िले जीत कर १७९२ ई० में श्रीरंगपट्टन घेर लिया। विवश होकर टीपू को सन्धि करनी पड़ी।

श्रीरंगपट्टन का सन्धिपत्र—इस सन्धि के अनुसार टीपू को अपना आधा राज्य और ३ करोड़ रुपया देना पड़ा। आधा रुपया तो उसने उसी समय चुका दिया और आधे की ज़मानत कर दी। ज़मानत में अपने दोनों लड़कों को अँग्रेज़ों के पास छोड़ दिया।

इस युद्ध में मरहठों और निज़ाम ने कुछ भाग न लिया था; पर उनको प्रसन्न रखने के लिए कार्नवालिस ने उन्हें भी कुछ प्रान्त दे दिए। मरहठों को पश्चिम का भाग दे दिया और निज़ाम को उत्तर-पूर्व का। अँग्रेज़ों के पास मलाबार, डिंडीगल, कुर्ग और बारामहाल के प्रान्त रहे।

इतना काम करके १७९३ ई० में कार्नवालिस इंगलैंड वापस चला गया। उसने दृढ़ शासन की व्यवस्था की जिससे अँग्रेज़ी राज्य की नींव और भी अच्छी तरह जम गई; पर देशी नरेशों के झगड़ों की ओर उसने अधिक ध्यान न दिया।

प्रश्न

१—लार्ड कार्नवालिस ने भारत मे क्या क्या सुधार किये ?

२—इस्तमरारी बन्दोबस्त क्या था ? इससे ज़मींदारों अथवा सरकार को क्या लाभ हुआ ?

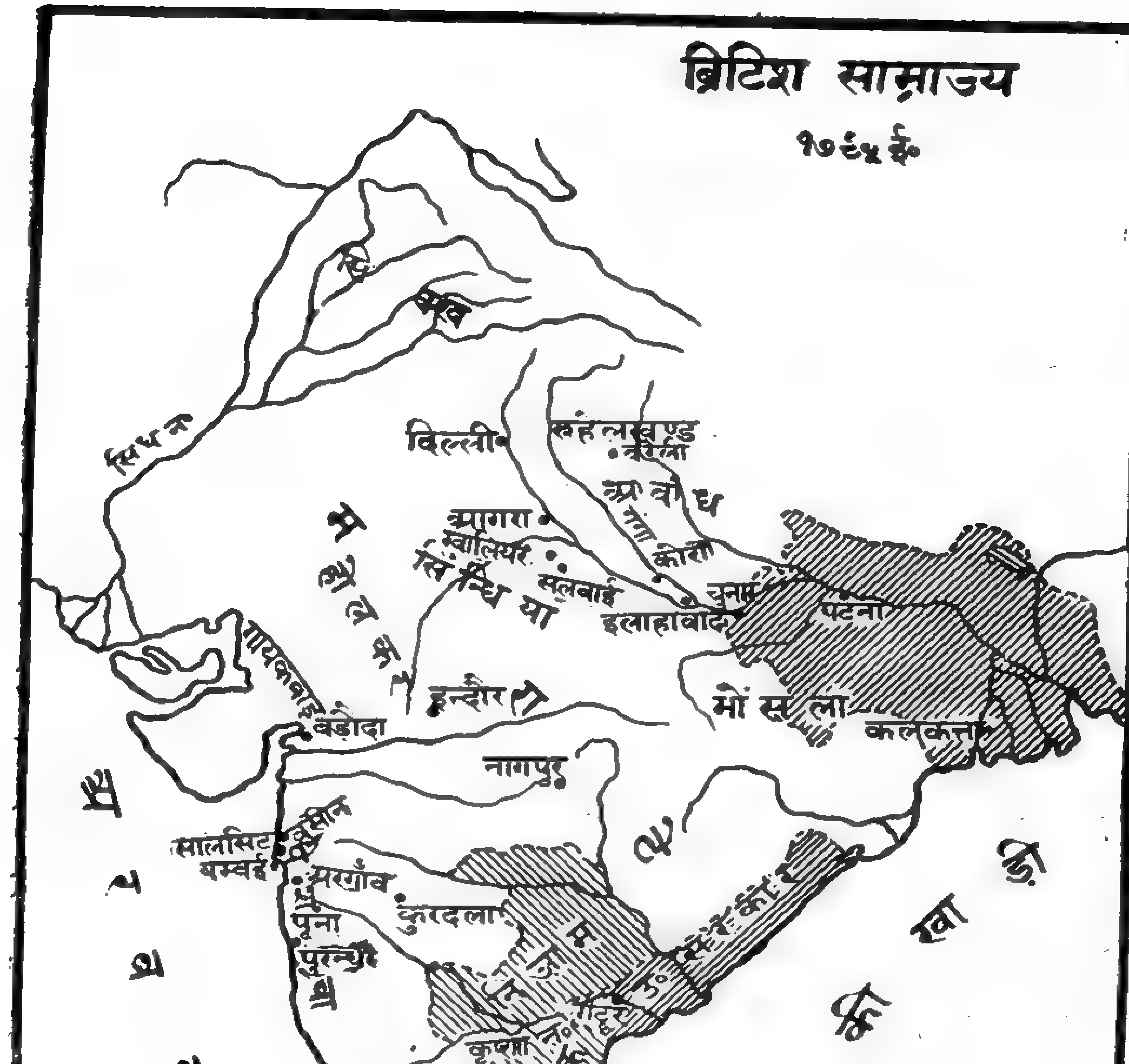
३—कार्नवालिस को मैसूर से क्यों लड़ाई लड़नी पड़ी ? इस लड़ाई का क्या परिणाम हुआ ?

अध्याय १२

सर जान शोर (१७९३--९८)

कार्नवालिस के बाद सर जान शोर भारत का गवर्नर-जनरल नियुक्त हुआ। वह बड़े अच्छे स्वभाव का पुरुष था। कम्पनी में कई वर्ष उसने नौकरी की थी; परन्तु शासक होने के उसमें गुण न थे। उसने यह निश्चय कर लिया था कि पिट के बिल की नीति का पूरा पूरा अनुसरण करूँगा। बिना सोचे-समझे वह इसी नीति पर चलता रहा। देशी नरेशों के झगड़ों से बिल्कुल अलग रहा। परिणाम यह हुआ कि कम्पनी के मित्र भी शत्रु होगये।

मरहठे और निज़ाम—शोर की इस नीति से मरहठों ने बड़ा लाभ उठाया। १७९४ ई० में महाद जी सिन्धिया की मृत्यु हो चुकी थी। उसका पोता दौलत राव सिन्धिया इस समय गद्दी पर था। उसने देखा कि इस समय निज़ाम बहुत कमज़ोर है और उसका कोई सहायक भी नहीं है। ऐसे अवसर को वह कब छोड़ने वाला था। उसने निज़ाम से पिछली चौथ माँगी। निज़ाम के पास न तो देने के लिए रुपया था और न फ़ौज ही थी जिससे वह सिन्धिया का सामना करता। वह बहुत डरा और उसने अंग्रेज़ों से सहायता माँगी। शोर तो अपनी नीति पर दृढ़ था।



उसने पृथक्ता देना अस्वीकार कर दिया। अब बेचारा निज़ाम

क्या करता। वह अपनी रक्षा के लिए अपनी टूटी फूटी सेना इकट्ठी करने लगा। उधर सिन्धिया ने सब मरहठों का एक संघ बना कर निज़ाम पर हमला करने की तैयारी कर दी।

कुर्दला की लड़ाई—१७९५ ई० में मरहठों ने निज़ाम पर चढ़ाई कर दी। कुर्दला नाम के स्थान पर लड़ाई हुई। निज़ाम हार गया और उसे सन्धि करनी पड़ी। इस सन्धि के अनुसार उसको अपना आधा राज्य मरहठों को देना पड़ा और जो आधा बचा उस पर उसने मरहठों को चौथ देने का वचन दिया।

शोर की नीति का परिणाम—शोर की नीति का परिणाम अच्छा नहीं हुआ। मरहठों और टीपू की शक्ति बहुत बढ़ गई और निज़ाम अँग्रेज़ों से बहुत ज़्यादा चिढ़ गया। उसने इनसे सब सम्बन्ध तोड़ लिया और इनके शत्रु फ़्रांसीसियों से मित्रता कर ली। उसके पास अब फ़्रांसीसी सेना रहने लगी। सेना को शिक्षा देने के लिए रेमन्ड नाम का एक फ़्रांसीसी अफ़सर नियुक्त किया गया। वास्तव में शोर को निज़ाम की सहायता करना चाहिए था। उसने इन्कार करके बड़ी भूल की। एक तो देशी नरेशों के दिल से अँग्रेज़ों का विश्वास जाता रहा। दूसरे वे समझने लगे कि कम्पनी की शक्ति अब बहुत घट गई है और अँग्रेज़ बहुत डरपोक हैं। वे अँग्रेज़ों को भारत से निकालने का प्रयत्न करने लगे। कम्पनी की सेना में भी शोर के नर्म स्वभाव के कारण वावेला मच गया। वे डबल भत्ता लेने के लिए हठ करने लगे और विद्रोह करने पर उतारू हो गये। जब कम्पनी के संचालकों को यह सब हाल मालूम हुआ तब १७९८ ई० में उन्होंने शोर को वापस बुला

लिया और लार्ड मोर्निंग्टन (वेलेज़ली) को गवर्नर जनरल बना कर भेजा।

प्रश्न

१—सर जान शोर ने भारत में किस नीति का अवलम्बन किया ? संक्षेप में लिखो।

२—शोर की नीति का क्या परिणाम हुआ ?

३—भारतवर्ष का एक नक़शा खींचकर १७९९ ई० का कम्पनी का साम्राज्य दिखलाओ।

अध्याय १२

लार्ड वेलेज़ली (१७९८–१८०५)

(पूर्वार्द्ध)

भारत की दशा—लार्ड वेलेज़ली १७९८ ई० में भारत में आया। उस समय भारत की दशा अच्छी न थी। निज़ाम से सम्बन्ध टूट हो चुका था। दिल्ली और आगरा में सिन्धिया का अधिकार था। विहार और उड़ीसा तक नागपुर के राजा का स्वतंत्र राज्य था। गुजरात पर बड़ौदा के गायकवाड़ ने आधिपत्य कर रक्खा था। होलकर अलग उत्पात मचा रहा था। मैसूर का टीपू इन सब से ही बढ़ कर था। वह फ़्रांस के नैपोलियन बोनापार्ट से चिट्ठी-पत्री करके अँग्रेज़ों को भारत से निकाल देने के मंसूबे बांध रहा



नैपोलियन

था। नैपोलियन बोनापार्ट फ़्रांस का एक बहुत बड़ा जनरल था। इस समय उसके डर से सारा यौरोप दहल रहा थ। फ़्रांस में राज्य-विप्लव हो चुका था और नैपोलियन की शक्ति बहुत बढ़ गई थी। वह भारत पर आक्रमण करने का विचार कर रहा था। इसी कारण उसने टीपू से जो अँग्रेज़ों का कट्टर शत्रु था लिखा पढ़ी शुरू कर दी थी। स्वयं वह मिश्र तक आ पहुँचा था। उसका भारत में स्वागत करने के लिए टीपू, मरहठे और निज़ाम सभी तैय्यार बैठे थे। यदि ऐसी दशा में वेलज़ली शोर की नीति पर चलता तो भारत में अँग्रेज़ों के लिए कुशल नहीं था। इसीलिए उसने इस नीति को छोड़ दिया। उसने आरम्भ से ही हस्तान्तेप और सीमा-विस्तार की नीति का अवलम्बन किया।

सहायक सन्धि—वेलज़ली ने ऐसे समय पर बड़े धैर्य से काम लिया। उसने एक नीति निकाली जो 'सहायक प्रथा' कहलाती है। उसने देशी राजाओं को लिखा कि वे सहायक सन्धि की शर्तें मान लें अर्थात् अपने देश से फ़्रांसीसियों को निकाल दें और शान्ति स्थापित करने और देश की रक्षा के लिये एक अँग्रेज़ी सेना रख लें। उसका व्यय भी उनको देना होगा। वे किसी राजा से बिना अँग्रेज़ों की सलाह के सन्धि अथवा लड़ाई न कर सकेंगे। इस नीति से वेलज़ली ने अँग्रेज़ों का आधिपत्य देशी रियासतों पर स्थापित कर दिया। जिन जिन राजाओं ने इस सन्धि को मान लिया उनकी रक्षा का भार तो अँग्रेज़ों ने ले लिया। शेष जिन लोगों ने न माना उनसे लड़ाई हुई और अन्त में उन्हें भी सहायक सन्धि स्वीकार करनी पड़ी। वेलज़ली ने इस नीति का प्रयोग करते समय कम्पनी के

संचालकों की आज्ञा की कुछ भी पर्वाह न की। वह अच्छी तरह जानता था कि बिना लड़ाई लड़े हुए भारत में अँग्रेज़ों का रहना असम्भव है। यदि शोर की तरह वह संचालकों की आज्ञा पर चलता तो सम्भवतः भारत में फ्रांसीसियों का ही राज्य हो जाता।

सहायक सन्धि की नीति कोई नई नीति न थी। वारेन हेस्टिंग्ज़ ने भी अवध के नवाब से ऐसी ही सन्धि की थी; परन्तु वेलज़ली से पहिले किसी ने भी इस नीति का इतना अधिक प्रयोग न किया था। इस से अँग्रेज़ी साम्राज्य तो अच्छी तरह से स्थापित हो गया, पर रियासतों के लिये इसका फल अच्छा नहीं हुआ। देशी नरेश अँग्रेज़ों पर भरोसा करने लगे और राज्य का सब भार उनके हाथ में छोड़ कर भोग-विलास में पड़ गये। इससे इन्तज़ाम में बड़ी ख़राबी आ गई। प्रजा दुखी रहने लगी और सारे देश में असन्तोष फैलने लगा। देश की दशा दिन दिन बिगड़ती गयी।

निज़ाम से सन्धि—सब से पहिले निज़ाम को हाथ में ले लेना आवश्यक था। वेलज़ली ने उसे लिखा कि वह सहायक सन्धि की शर्तें स्वीकार कर ले। निज़ाम दक्षिण की शक्तियों में सब से कमज़ोर था। उसे सदा मरहठों और टीपू से भय लगा रहता था। इसलिए उसने बिना हीलाहवाला किये सन्धि कर ली। उसके देश में अँग्रेज़ों की एक सेना रहने लगी। फ्रांसीसी लोग निकाल दिये गये। निज़ाम पूरी तरह से अँग्रेज़ों के वश में हो गया। उसका राज्य एक प्रकार से अँग्रेज़ों के अधीन हो गया।

मैसूर की चौथी लड़ाई (१७९९ ई०)—हम पहिले पढ़ चुके हैं कि टीपू नैपोलियन से चिट्ठी-पत्री कर रहा था। वेलज़ली ने उस से भी सन्धि करना चाहा ; पर वह कब मानने वाला था। टीपू के पास पत्र भेजे गये ; पर उसने उनका सन्तोष-जनक उत्तर भी न दिया। अधिक रुकने का समय न था। क्योंकि मारिशश का फ्रांसीसी गवर्नर टीपू की सहायता के लिए सेना इकट्ठी कर रहा था। वेलज़ली ने टीपू से लड़ाई छेड़ दी।

मैसूर पर आक्रमण करने के लिए दो सेनाएँ भेजी गईं। एक मद्रास से जनरल हेरिस की अध्यक्षता में और दूसरी बम्बई से जनरल स्टुअर्ट के साथ। निज़ाम ने भी एक सेना भेजी जिसका सेनापति गवर्नर-जनरल का भाई आर्थर वेलज़ली था। टीपू मालावेली के स्थान पर बुरी तरह हार कर भागा। अँग्रेज़ी सेनाएँ उस पर टूट पड़ीं और उसे उसकी राजधानी श्रीरंगपट्टन में जा घेरा। टीपू लड़ता हुआ मारा गया। मैसूर पर अँग्रेज़ों का अधिकार हो गया।

वेलज़ली ने हैदराबाद के आस पास का प्रान्त निज़ाम को दे दिया। कोइंबटोर, कनारा, आदि के प्रान्त अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिये गये। शेष प्रान्त पर प्राचीन हिन्दू राज्य वंश के एक पाँच वर्ष के कुमार कृष्णराज को राजा बनाया गया। टीपू के दोनों लड़कों की पेन्शन नियत कर दी गई। वे अँग्रेज़ों की निगरानी में रहने के लिए वेलोर भेज दिये गये। वेलज़ली ने पेशवा से कहा कि यदि वह सहायक सन्धि स्वीकार कर ले तो उसे भी मैसूर राज्य का कुछ अंश मिल जाय, परन्तु उसने इन्कार कर दिया।

टीपू का चरित्र—टीपू भी अपने पिता के समान वीर और साहसी था। लड़ाई में कभी पीछे क़दम न हटाता था। उसने बड़ी योग्यता से शासन किया। वह राज-काज स्वयं करता था और फ़ारसी में उसका लेखा रखता था। उर्दू और कनाड़ी भाषाएँ भी वह अच्छी तरह जानता था; अपने धर्म का बड़ा पाबंद था। प्रजा के साथ उसका व्यवहार अच्छा था। उसका स्थापित किया हुआ एक बड़ा पुस्तकालय था जो बाद में कलकत्ता पहुँचा दिया गया।



टीपू

राज्य विस्तार—मैसूर की लड़ाई का देशी नरेशों पर बड़ा प्रभाव पड़ा। उनमें से बहुत से अँग्रेज़ों के अधीन हो गये। १७९९ ई० में तंजौर के राजा ने अपना सारा राज्य अँग्रेज़ों को सौंप दिया और स्वयं पेन्शन ले ली। सूरत के नवाब ने भी यही किया। उसका राज्य भी अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया गया। १८०१ ई० में कर्नाटिक के नवाब उमदतुल उमरा की मृत्यु हो गई। वेलज़ली के हाथ कुछ चिट्ठियाँ ऐसी पड़ गई थीं जिनसे सिद्ध होता था कि कर्नाटिक का नवाब अँग्रेज़ों के विरुद्ध षड्यन्त्र रच रहा है। इसलिए वेलज़ली ने कर्नाटिक को भी अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया। अवध के नवाब ने भी लखनऊ

की सन्धि से सहायक सन्धि स्वीकार कर ली। इस समय अवध की हालत बड़ी डाँवाडोल हो रही थी। उस पर कम्पनी का बहुत सा रुपया उधार था। रुपये के बदले में नवाब वज़ीर ने गङ्गा यमुना के बीच के दोआब का कुछ भाग, रुहेलखंड और गोरखपुर का प्रान्त कम्पनी को दे दिया।

इस प्रकार अँग्रेज़ी राज्य की सीमा बहुत बढ़ गई और अँग्रेज़ों की धाक जम गई। अब उनको फ़्रांस का भी डर न रहा। हाँ, एक शक्ति मरहठों की अवश्य रह गई थी जो उनका सामना कर सकती थी। वेलज़ली उस शक्ति को दबाने का उपाय ढूँढ़ने लगा। कम्पनी के संचालकों ने वेलज़ली की इस सफलता से प्रसन्न होकर उसे 'मारक्विस आफ़ वेलज़ली' की उपाधि दे दी।

प्रश्न

१—वेलज़ली के आने के समय भारत की क्या दशा थी?

२—वेलज़ली ने किस नीति का अवलम्बन किया? उसका क्या परिणाम निकला?

३—मैसूर की चौथी लड़ाई क्यों हुई? इस लड़ाई से अँग्रेज़ों को क्या लाभ हुआ?

अध्याय १४

मारक्विस आफ़ वेलज़ली (१७९८–१८०५)

उत्तरार्द्ध

देश में शान्ति स्थापित करने और देशी नरेशों के झगड़ों और विद्रोहों को रोकने की दृष्टि से लार्ड वेलज़ली ने सहायक प्रथा का प्रयोग किया था। उसने भरसक प्रयत्न किया था कि सभी देशी नरेश इस प्रथा के अनुसार सन्धि कर लें। इसमें उसे बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त हो चुकी थी; किन्तु अभी तक मर-



लार्ड वेलज़ली

हठे उसके वश में नहीं आये थे। मरहठों की स्थिति में भी बहुत कुछ उलट-पलट हो गया था। नाना फड़नवीस की मृत्यु हो चुकी थी। जो एक बड़ा चतुर राजनीतिज्ञ था उसके मरने से पेशवा बाजीराव की शक्ति कम हो गई। दौलतराव सिंधिया और जसवन्त राव होल्कर में आधिपत्य के लिए युद्ध छिड़ा। जसवन्त राव होल्कर ने सिन्धिया और पेशवा को १८०२ ई० में पूना के पास हरा दिया। वेलज़ली को एक अच्छा अवसर मिल गया। वह ऐसे समय पर कब चूकने वाला था।

बेसीन की सन्धि—पेशवा भाग कर बेसीन पहुँचा अँग्रेज़ों से सहायता माँगी और सहायक सम्बन्ध स्वीकार कर लिया। फ़्रांसीसियों से उसने सब सम्बन्ध छोड़ दिया और पूना में अँग्रेज़ी सेना रखने का वादा किया। उसके ख़र्चे के लिए उसने २६ लाख रुपया सालाना की आमदनी की एक जायदाद देने को कहा। इस प्रकार पेशवा और अँग्रेज़ों में सन्धि हो गई। पूना की पर-राष्ट्र सम्बन्धी नीति अँग्रेज़ों के हाथ में आ गई। पेशवा ने यह भी वचन दिया कि यदि अँग्रेज़ लोग उसे पूना के सिंहासन पर फिर बिठा देंगे तो वह निज़ाम से जो झगड़े होंगे उनका फ़ैसला भी अँग्रेज़ों से ही करायेगा।

मरहठों की दूसरी लड़ाई—बेसीन की सन्धि से मरहठों में बड़ी सनसनी फैल गई। वे इसे मानने को तैयार न थे और न पेशवा को ऐसी सन्धि करने का अधिकारी ही समझते थे; पर पेशवा को पूना के सिंहासन पर फिर बैठने से कोई न रोक सका। गवर्नर-जनरल के बहादुर भाई आर्थर वेलज़ली ने बाजीराव को पूना का राजा बना दिया। अमृतराव को, जिसे होल्कर

ने पेशवा बना दिया था, पेन्शन देकर बनारस भेज दिया। होल्कर पूना से चला गया और उसने किसी का पक्ष न लिया। गायकवाड़ भी अलग रहा ; परन्तु सिन्धिया और बरार का राजा राघोजी भोंसला दोनों वेलज़ली की योजनाओं को विफल करने का मार्ग ढूँढ़ रहे थे। उनकी फ़ौजें निज़ाम की सीमा पर लूट-मार कर रही थीं। अँग्रेज़ी रेज़ीडेन्ट ने उन्हें रोकना चाहा, पर वे सन्धि करने पर राज़ी न हुए। इस पर लड़ाई छिड़ गई।

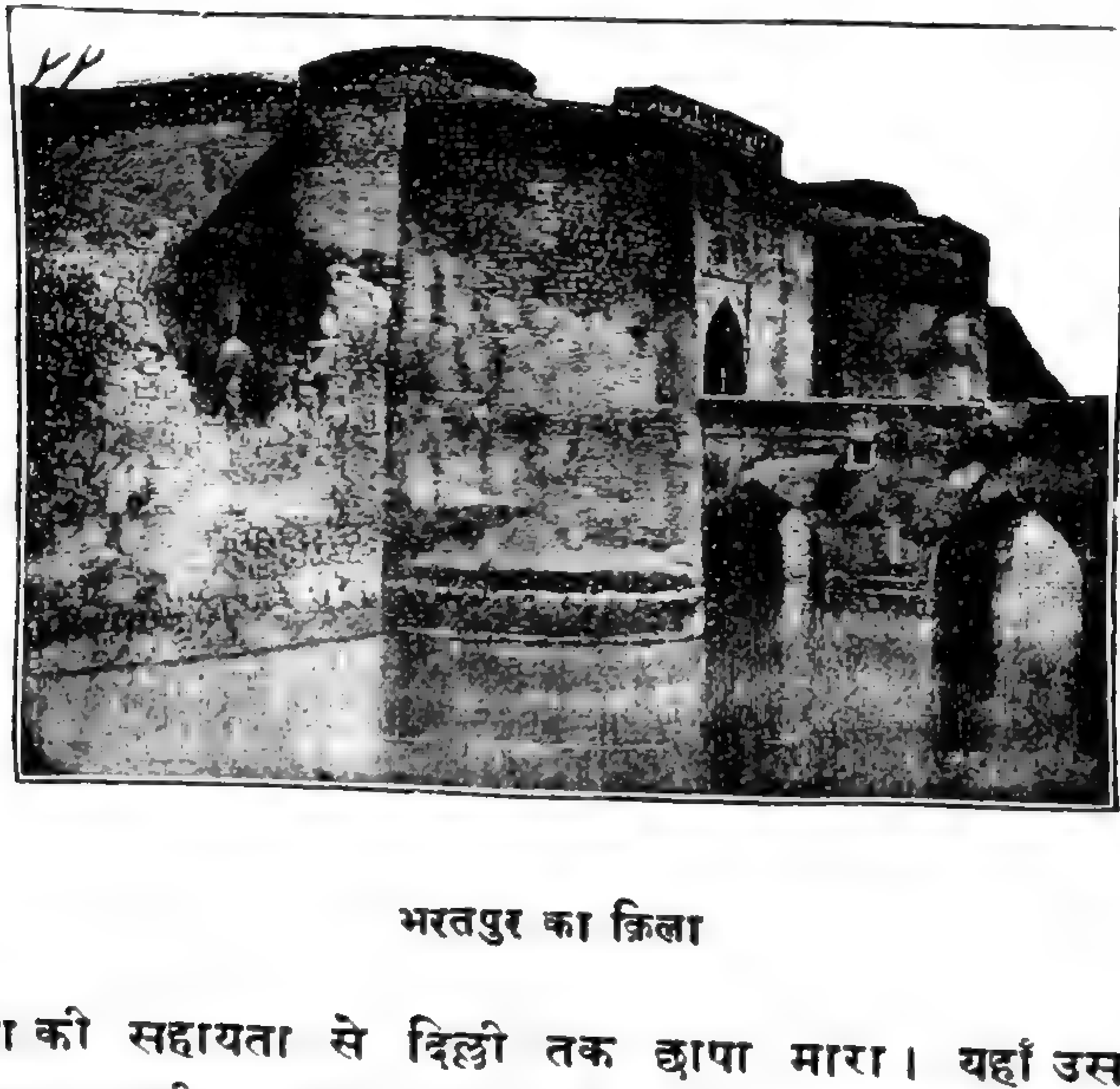
इंगलैण्ड में कोई भी यह न चाहता था कि शक्तिशाली मरहठों के झगड़ों में हस्तक्षेप किया जाय। वे जानते थे कि उनके शासन का ढंग अँग्रेज़ी शासन से बिल्कुल विपरीत है। उनके मामलों में दख़ल देना व्यर्थ ही लड़ाई मोल लेना है ; पर वेलज़ली ने किसी बात की चिन्ता न करके बर्रों के छत्ते में हाथ डाल ही दिया। वास्तव में उसका भी कोई अपराध न था। भारत पर आधिपत्य जमाने के लिए एक दिन तो मरहठों से लड़ाई होनी ही थी। यदि वेलज़ली कुछ दिन और भारत में रह जाता तो यह मामला पूरी तरह से तय करके जाता ; परन्तु उसके चले जाने से यह १८१८ ई० तक के लिए हट गया। दक्षिण की लड़ाई का भार वेलज़ली ने अपने भाई आर्थर वेलज़ली के हाथ में छोड़ दिया। उसने अहमदनगर जीत लिया और निज़ाम के राज्य में असाई नाम के स्थान पर सिन्धिया को हरा कर उसके क़िले छीन लिये। अब सिन्धिया ने सन्धि की प्रार्थना की ; पर वह अभी भोंसला की गुप्त रूप से सहायता कर रहा था। आर्थर ने बरार की ओर बढ़ कर अरगाँव के पास भोंसला को भी हराया और गाविलगढ़ के भारी क़िले पर अधिकार कर लिया। निदान भोंसला ने सहायक प्रथा स्वीकार कर ली।

उत्तर में वेलज़ली ने लेक को सेनापति नियुक्त किया था। उसने अलीगढ़ का क़िला सिन्धिया से छीन लिया। दिल्ली में भी सिन्धिया की एक बड़ी सेना को हराकर क़िले में प्रवेश किया। वहाँ सिन्धिया के आश्रित मुग़ल सम्राट् शाह आलम जिसकी अवस्था ८३ वर्ष की थी एक फटे तम्बू में बैठा मिला। वह अन्धा कर दिया गया था और उसकी दशा बड़ी शोचनीय थी। लेक ने उसका बड़ा आदर-सत्कार किया और उसकी पेन्शन नियत कर दी। १८०३ ई० में लेक ने आगरा पर भी अधिकार कर लिया और सिन्धिया की रही-सही सेना को अलवर में लासवारी के स्थान पर बुरी तरह से हराया। अब सिन्धिया में लड़ने की शक्ति न रही। उसने भी सहायक सम्बन्ध करने की प्रार्थना की।

सन्धि—लड़ाई समाप्त हो गई। सिन्धिया और भोंसला दोनों से भी सन्धि हो गई। भोंसला ने देवगाँव की सन्धि से अँग्रेज़ों को कटक का प्रान्त और निज़ाम को बरार का प्रान्त दे दिया। सिन्धिया ने सुरजी अर्जुन गाँव की सन्धि से यमुना और गङ्गा के बीच का प्रान्त, अहमदनगर और भड़ौंच अँग्रेज़ों के हवाले कर दिया। दोनों ने ही चौथ न लेने का वचन दिया और सहायक सम्बन्ध स्वीकार कर लिया। इस लड़ाई से अँग्रेज़ों के राज्य की सीमा बहुत बढ़ गई। उनका आधिपत्य सारे भारतवर्ष पर हो गया। बहुत से राजपूत राजाओं ने भी उनसे सहायक-सम्बन्ध कर लिया।

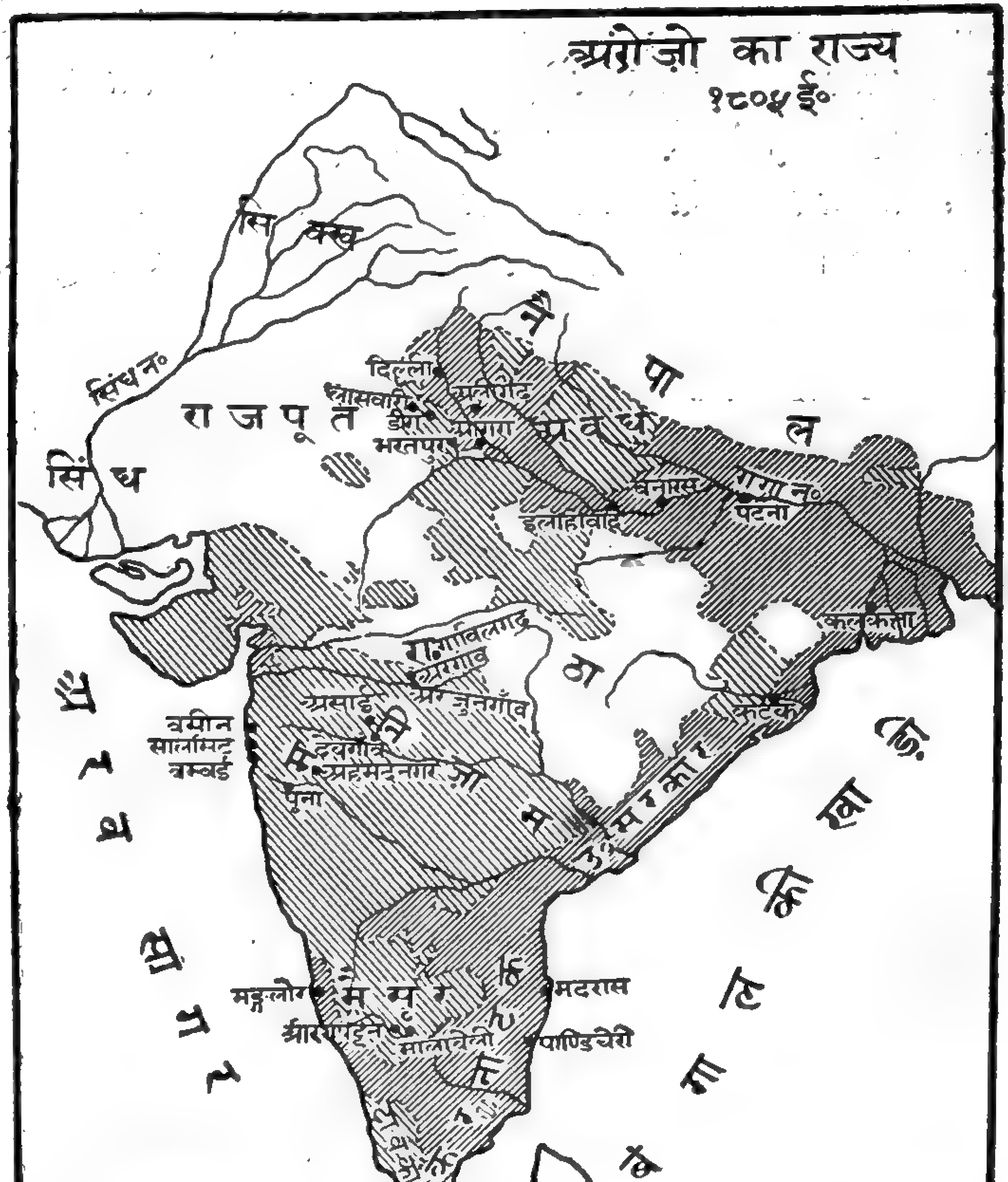
मरहठों की तीसरी लड़ाई—अँग्रेज समझ रहे थे कि मरहठों से लड़ाई समाप्त हो गई। यह उनकी भूल थी। सिन्धिया

और भोंसला हार तो अवश्य गये थे ; पर उनके हृदय में बदला लेने की अग्नि भभक रही थी। होल्कर भी अभी तक चुपचाप बैठा था। अँग्रेज़ लोग समझते थे कि उससे लड़ाई नहीं लड़नी पड़ेगी। जब उसने लूट-मार करना आरम्भ कर दिया तब उसके विरुद्ध भी मानसन के अधीन सेना भेजनी पड़ी। मानसन हार गया और होल्कर ने भरतपुर के



भरतपुर का क़िला

राजा की सहायता से दिल्ली तक छापा मारा। यहाँ उसकी दाल न गली। आक्टरलोनी ने उसे हरा दिया। अब वह भरतपुर की ओर चला गया। इधर लेक ने भी उसका पीछा किया और १८०४ ई० में डीग के स्थान पर उसे हरा दिया। पुनः



फतेहगढ़ के पास लेक ने उसे पराजित किया। अब लेक ने

भरतपुर के क़िले को घेर लिया। यह मिट्टी का बना हुआ क़िला भारतवर्ष के मज़बूत किलों में गिना जाता था। इसको जीतना असम्भव समझा जाता था। अँग्रेज़ी सेना कई महीने तक घेरा डाले पड़ी रही ; पर कुछ फल न हुआ। अन्त में भरतपुर के राजा ने रसद समाप्त हो जाने की आशंका से सन्धि कर ली।

युद्ध का परिणाम—इन युद्धों ने कम्पनी को भारत में सर्वप्रधान बना दिया। मरहठों का दमन हो ही चुका था। सभी बड़ी रियासतों ने वेलज़ली की सहायक प्रथा को स्वीकार कर लिया था। अब न फ़्रांस का ही डर था और न काबुल की ओर से ही कुछ आशंका थी। अँग्रेज़ी राज्य चारों ओर से सुरक्षित था। इसलिए सचमुच ही वेलज़ली को भारत में अँग्रेज़ी राज्य का एक संस्थापक कहा जा सकता है। इन युद्धों में कम्पनी का बहुत व्यय हुआ था। दूसरे वेलज़ली ने कम्पनी के संचालकों की भी पर्वाह न की थी और न व्यापार की ओर ही कुछ ध्यान दिया था। इसलिए वे उससे असन्तुष्ट थे। १८०५ ई० में उन्होंने वेलज़ली को इंगलैंड वापस बुला लिया।

प्रश्न

१—मरहठों की दूसरी लड़ाई कब और क्यों हुई ? इस लड़ाई का क्या परिणाम हुआ ?

२—मरहठों की तीसरी लड़ाई का हाल लिखो। इस युद्ध से अँग्रेज़ों को क्या लाभ हुआ ?

३—वेलज़ली भारत में अँग्रेज़ी साम्राज्य की नींव डालने वाला क्यों कहा जाता है ?

४—भारतवर्ष का एक नक़्शा खींच कर १८०५ ई० में ब्रिटिश साम्राज्य का सीमा-विस्तार दिखलाओ।

अध्याय १५

लार्ड कार्नवालिस और सर जार्ज बार्लो

कार्नवालिस—वेलज़ली के बाद फिर वृद्ध कार्नवालिस जिसकी अवस्था इस समय ६० वर्ष की थी भारत का गवर्नर-जनरल बना कर भेजा गया। वह शान्ति का सन्देशा लेकर आया था। उसने आते ही वेलज़ली की नीति को उलट दिया ; पर उसे आये हुए अभी ३ महीने भी नहीं हुए थे कि उसकी मृत्यु हो गई। इसके बाद सर जार्ज बार्लो जो कौंसिल का बड़ा मेम्बर था कुछ समय के लिये गवर्नर-जनरल बनाया गया।

सर जार्ज बार्लो—(१८०५-१८०७) बार्लो ने कार्नवालिस की नीति का ही अनुसरण किया। यहाँ तक कि जनरल लेक होल्कर से अँग्रेज़ों के हितपूर्ण सन्धि कर रहा था ; पर बार्लो ने उसे रोक दिया। उसने स्वयं उससे सन्धि की जिससे अँग्रेज़ों को कोई लाभ न हुआ। उसने सिन्धिया से भी कोई विशेष सम्बन्ध न रक्खा और ग्वालियर का क़िला उसको लौटा दिया। इस समय पिण्डारी लोग भी राजपूतों को बहुत तंग कर रहे थे। बार्लो ने उधर तनिक भी ध्यान न दिया। हाँ इतना उसने अवश्य किया कि निज़ाम और पेशवा से सहायक-सम्बन्ध

बनाये रहा। उसका आन्तरिक शासन अच्छा था। उसने खूब बचत करके कम्पनी की आर्थिक दशा सुधार दी।

वेलोर का ग़दर—१८०६ ई० में कर्नाटिक में वेलोर के स्थान पर ग़दर हो गया। इसका कारण यह था कि सरकार ने सिपाहियों के लिए कुछ नियम बनाये थे जिनसे वे असन्तुष्ट थे और समझते थे कि उनको ईसाई बनाने की चेष्टा की जा रही है। उन्होंने ११३ गोरों को मार डाला। वेलोर में टीपू के दोनों लड़के भी रहते थे। इसलिए यह सन्देह किया गया की उन्होंने सिपाहियों को भड़काया है। विद्रोह तो दबा दिया गया; पर टीपू के लड़कों को कलकत्ते भेज दिया गया। बार्लो को मद्रास का गवर्नर बना दिया गया। उसकी जगह लार्ड मिन्टो भारत का गवर्नर-जनरल नियुक्त किया गया।

प्रश्न

१—सर जार्ज बार्लो के विषय में तुम क्या जानते हो? उसने किस नीति का अनुसरण किया और इसका क्या फल हुआ?

अध्याय १६

लार्ड मिन्टो (१८०७–१८१३)

लार्ड मिन्टो बोर्ड आफ़ कन्ट्रोल का सभापति रह चुका था। वह देश की दशा से परिचित था। उसने देखा कि देश की स्थिति ऐसी है कि केवल हस्तक्षेप न करने की नीति से ही काम न चलेगा। फिर भी जहाँ तक हो सका उसने देशी नरेशों के लड़ाई-झगड़ों में भाग न लिया और कम्पनी के संचालकों की आज्ञा का पालन किया। इसका परिणाम यह हुआ कि भारत की दशा और भी बिगड़ती चली गई। मरहठे फिर ज़ोर पकड़ने लगे। जहाँ तहाँ उपद्रव होने लगे। उसके समय में त्रवनकोर और मद्रास में ग़दर भी हुआ; परन्तु शीघ्र ही दबा दिया गया। मिन्टो को बुंदेलखण्ड के सरदारों से भी लड़ाई लड़नी पड़ी क्योंकि उन्होंने अपने अत्याचारों से प्रजा को दुखी कर रखा था। उनको हराकर उनके क़िलों पर अधिकार कर लिया गया। इसी समय पिण्डारी भी बड़ी लूट-खसोट कर रहे थे; पर मिन्टो डरता था कि कहीं ऐसा न हो कि उन्हें छेड़ने से मरहठों से लड़ाई छिड़ जाय। इसलिए उसने उन्हें दबाने का कोई प्रयत्न न किया।

मिन्टो और सिक्ख–मिन्टो के समय में पहली बार अँग्रेज़ों

और सिक्खों का समागम हुआ। अहमदशाह अब्दाली के आक्रमण ने सिक्खों को बढ़ने का अवसर दे दिया था। ये इस समय १२ मिस्लों अर्थात् समुदायों में बंटे हुए थे। इन्हीं मिस्लों में से एक में १७८० ई० में रणजीतसिंह का जन्म हुआ। १९ वर्ष की आयु में ही उसने ज़मांशाह को भारत पर आक्रमण करने में सहायता पहुँचाई थी। ज़मांशाह ने प्रसन्न होकर उसे लाहौर का शासक बना दिया। धीरे धीरे उसने अपनी शक्ति बढ़ाली और सतलज के पश्चिम की मिस्लों पर अपना अधिकार कर लिया। १८०२ ई० में उसने अमृतसर जीत लिया। इसके बाद काश्मीर भी जीत कर उसने अपने राज्य की सीमा और भी बढ़ाली। अपने यहाँ उसने फ्रांस और इटली आदि के सैनिक रख कर अपनी सेना को शिक्षा दिलवाई और एक बड़ी सेना का संगठन करके यमुना की ओर सीमा-विस्तार का विचार करने लगा।

अब मिन्टो की आँखें खुलीं क्योंकि इधर के प्रान्त अँग्रेज़ों के आश्रित थे और उन्होंने अँग्रेज़ों से सहायता की प्रार्थना की; परन्तु मिन्टों ने इस समय सिक्खों से लड़ाई छेड़ना उचित न समझा। उसे नैपोलियन का भय अभी तक लगा हुआ था। झगड़ा रोकने के लिए उसने मेटकाफ़ को रणजीतसिंह के पास भेजा। मेटकाफ़ ने १८०९ ई० में सिक्खों से सन्धि कर ली। रणजीतसिंह ने सतलज से दक्षिण की ओर न बढ़ने का वचन दिया। वह जब तक जीवित रहा अँग्रेज़ों से मैत्री बनाये रहा। इस प्रकार निर्हस्तक्षेप की नीति का अनुसरण करने वाले लार्ड मिन्टो ने भी अँग्रेज़ी साम्राज्य की सीमा सतलज तक पहुँचा दी।

विदेशी राजाओं से सम्बन्ध—मिन्टो के समय में भारत पर फ्रांस और रूस से आक्रमण होने का डर था। फ्रांस में नैपोलियन सम्राट् बन बैठा था और भारत-विजय भी उसकी योजनाओं में शामिल थी। इसलिए मिन्टो ने मैलकम को दूत बना कर फ़ारस के बादशाह के पास मित्रता करने के लिए भेजा। किन्तु कुछ फल न हुआ। काबुल को भी दूत भेजे गये पर वे भी असफल रहे।

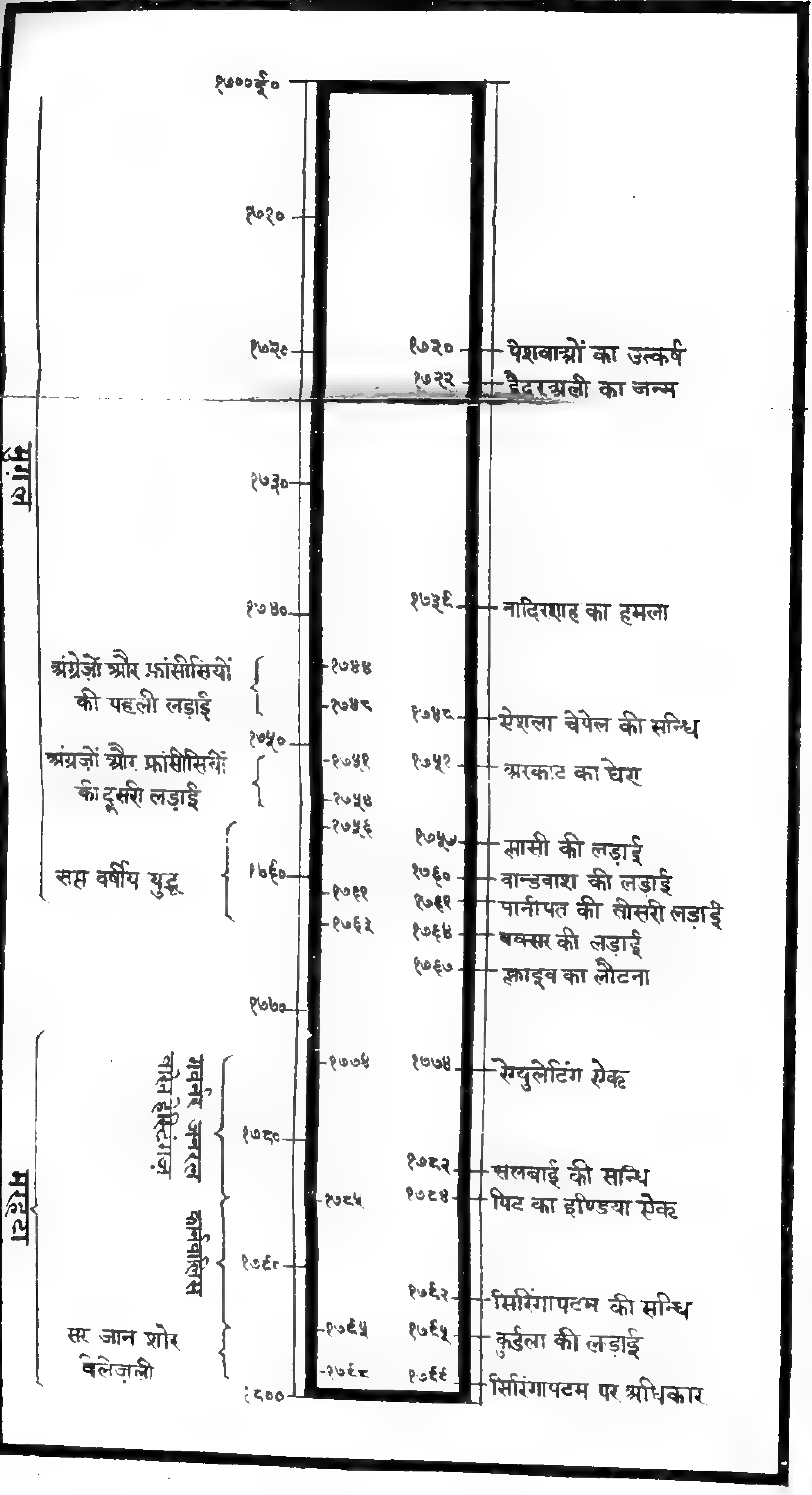
मिन्टो ने एक जहाज़ी सेना फ्रांस और डच लोगों के टापुओं पर आक्रमण करने को भेजी। इस आक्रमण में अँग्रेज़ों को सफलता हुई। जावा और मारिशस पर उनका अधिकार हो गया। जावा तो १८१४ ई० की सन्धि में लौटा दिया गया; पर मारिशस उनके हाथ में ही रहा। इसके अतिरिक्त इस युद्ध से एशिया का एक बड़ा महत्वपूर्ण बन्दरगाह सिंगापुर अँग्रेज़ों के हाथ आगया।

१८१३ ई० में मिन्टो इंगलैण्ड को लौट गया। इसमें सन्देह नहीं कि उसने निर्हस्तक्षेप की नीति का अनुसरण करते हुए भी भारत में शान्ति स्थापित कर दी; पर यह शान्ति थोड़े ही समय के लिए थी। देशी नरेश समझने लगे कि अँग्रेज़ों की शक्ति शिथिल पड़ गई है। इस लिए वे निश्शंक होकर चारों ओर उत्पात मचाने लगे।

प्रश्न

१—लार्ड मिन्टो ने सिक्खों के प्रति कौन सी नीति का अवलम्बन किया और क्यों? इनका क्या फल हुआ?

२—महाराजा रणजीतसिंह कौन थे? उन्होंने सिक्खों के लिए क्या किया?


१७००ई०
१७१०
१७२०
१७३०
१७४०
१७५०
१७६०
१७७०
१७८०
१७९०
१८००
१७२० पेशवाओं का उत्कर्ष
१७२२ हैदरअली का जन्म
१७३९ नादिरशाह का हमला
१७४८ ऐशला चेपेल की सन्धि
१७५१ अरकाट का घेरा
१७५७ प्लासी की लड़ाई
१७६० वान्डवाश की लड़ाई
१७६१ पानीपत की तीसरी लड़ाई
१७६४ बक्सर की लड़ाई
१७६७ क्लाइव का लौटना
१७७४ रेग्युलेटिंग ऐक्ट
१७८२ सलबाई की सन्धि
१७८४ पिट का इण्डिया ऐक्ट
१७९२ सिरिंगापटम की सन्धि
१७९५ कुर्दला की लड़ाई
१७९९ सिरिंगापटम पर अधिकार
१७४४
१७४८
अंग्रेज़ों और फ्रांसीसियों की पहली लड़ाई
१७५१
१७५४
अंग्रेज़ों और फ्रांसीसियों की दूसरी लड़ाई
१७५६
१७६१
१७६३
सप्त वर्षीय युद्ध
१७७४
१७८५
१७९३
१७९८
गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंगज़
कार्नवालिस
सर जान शोर
वेलेज़ली
मुग़ल
मरहटा

अध्याय १७

लार्ड हेस्टिंग्ज़

(१८१३ ई० से १८२३ ई० तक)

नया आज्ञापत्र—१८१३ ई० में कम्पनी के चार्टर (आज्ञापत्र) के बदलने का समय आ गया था। इस लिए इंगलैण्ड में कई साल से आन्दोलन उठ रहा था। कोई व्यापार का ठेका कम्पनी के हाथ में ही रहने को कहते थे, कोई धर्म-प्रचार की आवश्यकता बतलाते थे और कोई शासन सुधार पर ज़ोर देते थे। कम्पनी की स्थिति में भी बहुत कुछ परिवर्तन हो चुका था। अब वह केवल व्यापारिक संस्था न थी। उसके पास अब शासन करने को बहुत से प्रान्त थे। १८०८ ई० से १८१२ ई० तक एक गुप्त कमेटी भारत के मामलों की जाँच करती रही। उससे पता चला कि वारेन हेस्टिंग्ज़ और कार्नवालिस के सुधारों का कुछ फल न निकला। हर प्रकार के अपराध और पाप बढ़ रहे हैं। डकैतियों का बड़ा ज़ोर है। यह दशा देख कर कम्पनी को नया आज्ञापत्र देना ही निश्चित किया गया।

इस नये आज्ञापत्र से कम्पनी को भारत पर २० वर्ष और राज्य करने की आज्ञा मिल गई। भारत से व्यापार करने की हर एक को स्वतन्त्रता हो गई; परन्तु चीन देश से तिजारत करने

का अधिकार अभी कम्पनी ही के पास रहा। धर्म-प्रचार के लिए भी ईसाई पादरी भेजे गये। प्रजा की शिक्षा की उन्नति के लिए भी एक लाख रुपया सालाना मंजूर किया गया। कम्पनी को भी शासन-व्यवस्था करने की आज्ञा मिल गई। इस आज्ञा-पत्र से कम्पनी के इतिहास में एक नया अध्याय आरम्भ हुआ।

लार्ड हेस्टिंग्ज़—इस नये युग का प्रथम गवर्नर-जनरल लार्ड हेस्टिंग्ज़ था। १८१३ ई० में ५९ वर्ष की अवस्था में वह भारत में आया। उसने देखा कि चारों ओर अशान्ति फैल रही है। पिण्डारी मरहठों की सहायता पाकर खूब लूट-मार कर रहे हैं। राजपूत राजा आपस में लड़ाई-झगड़ा कर रहे हैं। देशी नरेशों का प्रजा पर अत्याचार बहुत बढ़ा हुआ है। ऐसी दशा देख कर उसने यही निश्चय किया कि निर्हस्तक्षेप की नीति से काम न चलेगा।



लार्ड हेस्टिंग्ज़

वेलज़ली की नीति का उपयोग करना चाहिये। बिना अँग्रेज़ों की प्रतिष्ठा बढ़ाये देश में शान्ति स्थापित करना असम्भव है। अतः वह आरम्भ से ही लड़ाई करने के लिए तैयार हो गया।

नैपाल की लड़ाई–(१८१४—१८१६) अठारहवीं शताब्दी में भारतवर्ष और तिब्बत के बीच के पहाड़ी देश की रहने वाली गोरखा जाति ने अपना स्वतन्त्र राज्य स्थापित कर लिया था। धीरे धीरे इन लोगों ने अपने राज्य का विस्तार बढ़ाना शुरू कर दिया और तिब्बत तक अपना अधिकार कर लिया। जब पश्चिम में सिक्खों ने और पूर्व में शिकिम के राजा ने इनको बढ़ने से रोका तब इन्होंने दक्षिण में राज्य-विस्तार करने का विचार किया। इधर इनको अँग्रेज़ों का सामना करना पड़ा। पहले इन्होंने कुछ गाँव जीत कर प्रजा और पशुओं को पकड़ना शुरू किया; पर जब ये गाँव पर गाँव जीतते हुए गोरखपुर के पास तक पहुँच गये तब अँग्रेज़ लोग चुप न रह सके और लड़ाई ठन गई।

गोरखे बड़े लड़ाके थे और पहाड़ी देश में रहने के कारण बड़े साहसी हो गये थे। वे समझते थे कि अँग्रेज़ लोग उनके पहाड़ी क़िले को न जीत सकेंगे। उन्होंने बुटवल और श्योराजपुर नामक गाँवों पर अधिकार कर लिया और कुछ अँग्रेज़ अफ़सरों को मार डाला। लार्ड हेस्टिंग्ज़ ने गोरखों से लड़ने के लिए सेनाएँ भेजीं। अपरिचित और पहाड़ी देश होने के कारण अँग्रेज़ों को बहुत हानि हुई। गोरखों ने उनको मार भगाया। भारत के देशी नरेश समझने लगे कि अब अँग्रेज़ों का पतन आरम्भ हो गया और मरहठे लोग लड़ाई की तैयारी करने लगे।

इसी समय अँग्रेज़ों की एक सेना ने जो आक्टर लोनी की अध्यक्षता में भेजी गई थी गोरखों के प्रसिद्ध वीर अमरसिंह को हरा दिया। उसने मलाऊँ के क़िले पर अधिकार कर लिया। कमाऊँ में अलमोड़ा भी जीत लिया गया। अब आक्टर लोनी ने नैपाल की राजधानी काठमाँडू पर चढ़ाई कर दी। गोरखों का दिल टूट गया था। हार कर उन्हें अंग्रेज़ों से सन्धि करनी पड़ी।

सिगौली की सन्धि—१८१६ ई० में सिगौली के स्थान पर सन्धि हो गई। इस सन्धि में शिमला, मंसूरी और नैनीताल के पहाड़ी प्रान्तों के अतिरिक्त काली नदी के पश्चिम के सब प्रान्त अँग्रेज़ों को मिल गये। तराई के प्रान्त में से आधा शिकिम के राजा को दे दिया गया और उसे स्वतंत्र कर दिया गया और आधा अवध में मिला लिया गया क्योंकि अवध के नवाब ने भी इस लड़ाई में अँग्रेजों की धन से सहायता की थी। काठमाँडू में अँग्रेज़ों का एक रेज़ीडेण्ट रहने लगा।

इस लड़ाई से अँग्रेज़ों को गोरखों की वीर जाति से मित्रता होगई जो इस समय तक बनी हुई है। ग़दर में भी इन्होंने अँग्रेज़ों का साथ दिया। सन् १९१४ ई० की लड़ाई में ये लोग बड़ी वीरता से अँग्रेज़ों की ओर से लड़े। इसके अतिरिक्त अँग्रेज़ों को शिमला आदि जैसे गर्मियों में रहने के लिए ठंडे प्रदेश मिल गये जिनको उन्होंने गर्मियों की राजधानी बनायी।

पिण्डारी दमन—पिण्डारियों का नाम ऊपर आ चुका है। इन लोगों का एक समुदाय था जिसकी न कोई एक जाति थी और न कोई एक धर्म। इनका काम केवल लूट-मार करना था। जिसका मन खेती अथवा व्यवसाय में न लगता वही इनके

समुदाय में सम्मिलित हो जाता था। हिन्दू, मुसलमान, पठान सभी जाति के लोग इनके समुदाय में रहते थे। ये लोग कभी एक जगह न ठहरते बल्कि इनकी दौड़ एक सूबे से दूसरे सूबे में हुआ करती थी। जहाँ ये जाते वहीं लूट-मार करके हाहाकार मचा देते थे। ये व्यापारियों के दल के दल को एक क्षण में नष्ट कर डालते और उनका सब माल छीन लेते थे। इनके सामने जान और माल किसी का कुशल नहीं था।

यों तो शिवाजी के समय से ही इन लुटेरों का उदय दीख पड़ता है, परन्तु मुग़लों के समय में ये इतने भयङ्कर न थे। ये मरहठों की सेना में भरती होकर लड़ा करते थे। जब मरहठों की अँग्रेज़ों से सन्धि हो गई तब ये लूट-मार करने लगे। अब भी कोई कोई देशी नरेश कभी कभी लड़ाई के लिए किराया देकर इनको काम में लगा लेते थे। सिन्धिया और होलकर की तो इन पर विशेष कृपा थी। इनके प्रसिद्ध नायक अमीरख़ाँ, करीमख़ाँ और चीतू थे। इनका मुख्य निवास-स्थान मालवा था।

पिण्डारियों की संख्या बहुत बढ़ गई। इन्होंने अँग्रेज़ी राज्य के प्रान्तों पर छापा मारना और लूट-मार करना आरम्भ कर दिया। अब अँग्रेज़ों को इनसे लड़ने के लिए तैयार होना पड़ा। १८१६—१७ ई० में इन्होंने उत्तरी सरकार को उजाड़ना और जलाना शुरू कर दिया। तब इनको दमन करने के लिए लार्ड हेस्टिंग्ज़ ने एक बड़ी सेना संगठित की और सिंधिया से सन्धि करके इनको चारों ओर से घेर लिया। १८१८ ई० तक ये सब पकड़ लिये गये अथवा मार डाले गये। करीमख़ाँ अँग्रेज़ों के आश्रय में आ गया और उसे गोरखपुर के ज़िले में एक जायदाद

दे दी गई। चीतू भाग गया और जङ्गल में उसे चीते ने मार डाला। अमीरखाँ को टोंक का राज्य दे दिया गया। इस प्रकार पिण्डारियों का अन्त हो गया और भारत में शान्ति स्थापित हो गई।

मरहठों की चौथी लड़ाई (१८१७–१८)—मरहठों का इस समय बहुत कुछ पतन हो चुका था। उनमें कोई वीर और पराक्रमी नेता नहीं था; परन्तु वे पिण्डारियों की सहायता से लूट-मार करके अपना ठाट बनाये हुए थे। जब पिण्डारियों का भी नाश हो गया तब वे बहुत क्रुद्ध हुए। सिन्धिया से पहले ही हेस्टिंग्ज़ ने ग्वालियर में सन्धि कर ली थी। पेशवा ने पूना के निकट एक बड़ी सेना एकत्रित करना आरम्भ किया। यह देखकर पूना का रेज़ीडेन्ट मिस्टर एलफ़िन्स्टन किरकी चला गया। पेशवा बाजीराव ने रेज़ीडेन्सी में आग लगा दी और किरकी में अँग्रेज़ी फ़ौज पर हमला कर दिया; परन्तु वह हार कर भाग गया। इसी समय होल्कर की सेना पेशवा की सहायता के लिए आगे बढ़ी। यह देख कर मैलकम ने उसका सामना किया और महीदपुर के स्थान पर उसे बुरी तरह हरा दिया। १८१८ ई० में मन्दसोर के स्थान पर होल्कर से सन्धि हो गई। उसने सहायक प्रथा स्वीकार कर ली और नर्मदा के दक्षिण का भाग अँग्रेज़ों को दे दिया।

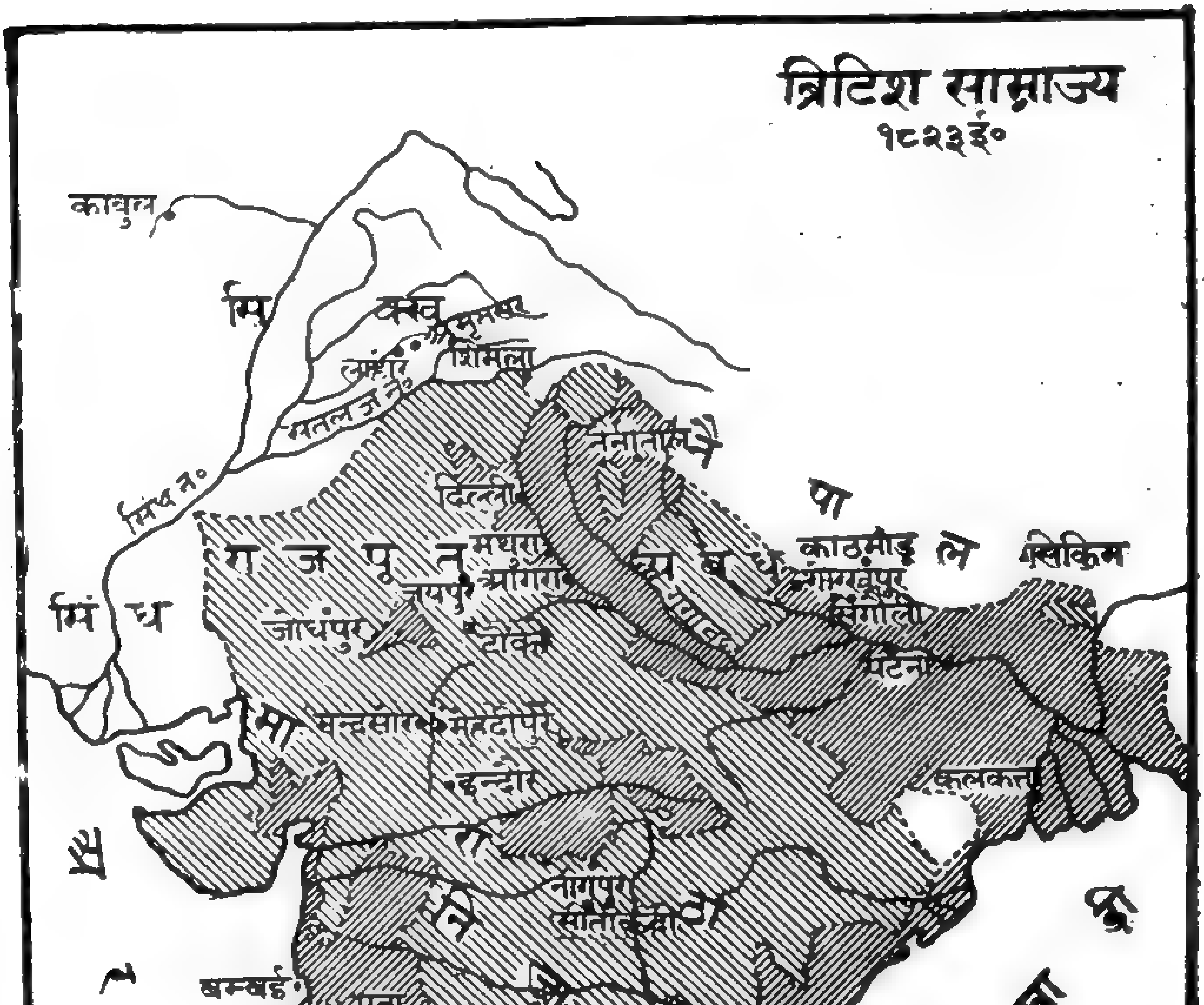
सीताबल्दी और नागपुर की लड़ाई—अप्पा साहब भोंसला ने भी पेशवा की देखादेखी नागपुर के रज़ीडेन्ट पर हमला कर दिया। सीताबल्दी के स्थान पर लड़ाई हुई। भोंसला हार गया। अँग्रेज़ी फ़ौज ने उसका पीछा किया और

नागपुर के निकट उसे फिर बुरी तरह हरा दिया। अप्पा साहब राजपूताना की ओर भाग गया। हेस्टिंग्ज़ ने नर्मदा के ऊपर का प्रान्त अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया और अप्पा साहब की जगह एक अबोध बालक को बिठाल दिया। नागपुर राज्य का सारा प्रबन्ध अँग्रेज़ी रेज़ीडेन्ट के हाथ में सौंप दिया गया।

१८१८ ई० में पेशवा की रही सही सेना भी अस्थी के स्थान पर हार गई। भोंसला और होल्कर हार ही चुके थे। इसलिए अब पेशवा में लड़ने का साहस न रहा। वह अँग्रेज़ों की शरण में आ गया। उसे ८ लाख की पेन्शन देकर कानपुर के पास बिठूर में रहने के लिए भेज दिया गया। सितारा में शिवाजी के एक वंशज को राजा बना दिया गया और शेष प्रान्त बम्बई प्रेसीडेन्सी में मिला लिया गया।

शासन-सुधार—देश में चारों ओर शान्ति स्थापित करने के बाद हेस्टिंग्ज़ ने शासन-सुधार की ओर ध्यान दिया। बङ्गाल में हिन्दुस्तानी न्यायाधीशों का वेतन बढ़ा दिया गया। मद्रास और बम्बई में पंचायतों की पुनर्स्थापना की गई। शिक्षा-प्रचार को भी अच्छा प्रोत्साहन मिला। सीरामपुर में पादरियों ने हाई स्कूल और कलकत्ता में कालेज की नींव डाली। देशी भाषा का पहला समाचार पत्र 'समाचार दर्पण' उसी के समय में निकला।

हेस्टिंग्ज़ का पद त्याग—हेस्टिंग्ज़ ने निज़ाम सरकार को धन से सहायता पहुँचाने के लिये एक अँग्रेज़ बैंकर को नियुक्त कर दिया था। इस पर इंगलैण्ड में लोग हेस्टिंग्ज़ पर संदेह


ब्रिटिश साम्राज्य
१८२३ ई०
काबुल
शिमला
दिल्ली
मथुरा
आगरा
जयपुर
जोधपुर
टोंक
काठमांडू
सिक्किम
पटना
कलकत्ता
इन्दौर
नागपुर
बम्बई
पूना
वेलोर
मदरास
अंग्रेजी राज्य

करने लगे। उसने इसे अपना अपमान समझा और १८२३ ई० में वह त्यागपत्र देकर इङ्गलैण्ड चला गया।

हेस्टिंग्ज़ के समय में ब्रिटिश साम्राज्य की सीमा बहुत बढ़ गई। उसने समय देख कर और ख़ूब सोच-समझ कर हर एक काम में हाथ डाला। इसलिए उसे विजय प्राप्त हुई। उसी के उद्योग से महाराष्ट्र-मण्डल की कमर टूट गई और डाकुओं और लुटेरों का नाश हो गया। उसने अँग्रेज़ों की प्रतिष्ठा भारत में ख़ूब बढ़ा दी। इसलिए उसका शासन-काल कुछ कम महत्वपूर्ण नहीं कहा जा सकता।

प्रश्न

१—१८१३ के आज्ञा-पत्र ने कम्पनी के अधिकारों में क्या परिवर्तन कर दिया।

२—लार्ड हेस्टिंग्ज़ को नैपालियों से क्यों युद्ध करना पड़ा इस युद्ध का क्या फल हुआ ?

३—नैपाल की लड़ाई का हाल लिखो।

४—पिण्डारी लोग कौन थे ? इनका कैसे दमन किया गया ?

५—मरहठों की चौथी लड़ाई का क्या कारण था ? इस लड़ाई का हाल लिखो।

६—भारतवर्ष का एक नक़शा खींच कर हेस्टिंग्ज़ के समय के ब्रिटिश साम्राज्य का राज्य विस्तार दिखलाओ।

अध्याय १८

लार्ड एम्हर्स्ट

(१८२३—१८२८ ई० तक)

१८२३ ई० में लार्ड एम्हर्स्ट भारत का गवर्नर-जनरल होकर आया। इस समय चारों ओर शान्ति फैली हुई थी। उसके भंग होने की भी कोई आशंका न थी; परन्तु लार्ड एम्हर्स्ट को अधिक उदारता पसन्द न थी। उसने समाचार-पत्रों की स्वतंत्रता रोकने के लिए नियम बनाया; किन्तु वह अधिक दिन चैन से न बैठ सका। शीघ्र ही ब्रह्मा में एक उपद्रव उठ खड़ा हुआ और उसे ब्रह्मा से लड़ाई लड़नी पड़ी।

ब्रह्मा की पहली लड़ाई (१८२४—२६)—१७६० ई० के लगभग अलम्पोर नामक एक ब्रह्मा के सरदार ने अपना स्वतंत्र राज्य ब्रह्मा में स्थापित कर लिया था। उसने पीगू भी जीत लिया और आवा में अपनी राजधानी बनाई। उसके उत्तराधिकारियों ने साम्राज्य-विस्तार में बड़ी उन्नति की और धीरे धीरे आराकान, आसाम और तनासरिम पर अधिकार कर लिया। जब वे पश्चिम की ओर बढ़े तब उनको अँग्रेज़ों का सामना करना पड़ा। उन्होंने कम्पनी के रक्षित राज्यों पर

आक्रमण करना शुरू कर दिया और खूब लूट-खसोट मचाई। लार्ड एम्हर्स्ट लड़ाई के पक्ष में न था। उसने बहुत प्रयत्न किया कि झगड़ा न हो, पर बर्मियों ने एक न मानी। आखिर १८२३ ई० में उन्होंने कचार पर आक्रमण किया। बङ्गाल की प्रजा बर्मियों के आक्रमणों से दुःखी हो गई थी। ऐसी दशा में चुप रहना कम्पनी के लिए बड़ा हानिकारक था। इसलिए १८२४ ई० में उनसे युद्ध की घोषणा कर दी गई।

अँग्रेज़ों के लिए ब्रह्मा का देश बिल्कुल अपरिचित था। पहाड़ों में होकर जाना पड़ता था। जलवायु भी अच्छी न थी। इसलिए ब्रह्मा को जीतना आसान न था। कई एक सेनाएँ भेजी गईं। एक सेना ने जो कैम्पबेल के अधीन थी रंगून पर अधिकार कर लिया। उधर ब्रह्मा के राजा ने अपने सेनापति महाबुन्देला को अँग्रेज़ों को बङ्गाल से निकालने और गवर्नर जनरल को पकड़ लाने के लिए भेजा। कहते हैं कि महाबुन्देला अपने साथ एक सोने की जंजीर भी लाया था। कैम्पबेल ने उसकी सेना को हरा दिया और वह मारा गया। अँग्रेज़ी सेना ने अब आवा की ओर कूच किया। विवश होकर राजा को सन्धि करनी पड़ी।

यन्दाबू की सन्धि—१८२६ ई० में यन्दाबू के स्थान पर सन्धि हो गई। आसाम, अराकान और तनासरिम अँग्रेज़ों के हाथ में रहे और एक करोड़ रुपया हर्जाना भी मिला। कचार और जैन्तिया भी उनकी रक्षा में आ गये। आवा में अँग्रेज़ों का एक दूत भी रहने लगा। इसी समय ब्रह्मा से व्यापारिक संधि भी हुई।

इसमें सन्देह नहीं कि इस लड़ाई में कम्पनी का बहुत सा धन ख़र्च हुआ, पर ब्रह्मा के प्रांत मिल जाने से पूर्व की ओर की सीमा सुरक्षित हो गई और व्यापार में उन्नति हुई।

भरतपुर की लड़ाई—इसके बाद ही एम्हर्स्ट को भरतपुर के जाटों से लड़ना पड़ा। १८२५ ई० में वहाँ का राजा मर गया। अँग्रेज़ों ने एक ६ वर्ष के बालक को राजा बनाया। थोड़े दिनों बाद उसके चचा के लड़के दुर्जन साल ने उसे क़ैद कर लिया और वह स्वयं राजा बन बैठा। एम्हर्स्ट ने एक सेना उसे गद्दी से उतारने के लिए भेजी। १८२६ ई० में बड़ी लड़ाई के बाद भरतपुर का क़िला ले लिया गया। दुर्जन साल क़ैद कर लिया गया और उसी बालक को फिर गद्दी पर बिठाल दिया गया। उसकी माँ राज्य का काम देखने के लिए नियुक्त की गई और एक अँग्रेज़ दूत वहाँ रहने लगा।

भरतपुर का मिट्टी का क़िला बहुत मज़बूत समझा जाता था। इसको जीतने से अँग्रेज़ों की प्रतिष्ठा बढ़ गई और उनकी धाक ख़ूब अच्छी तरह जम गई। १८२८ ई० में एम्हर्स्ट इंगलैंड वापस चला गया।

प्रश्न

१—ब्रह्मा की पहली लड़ाई का हाल लिखो।

२—यन्दाबू की सन्धि में अँग्रेज़ों को क्या मिला?

३—भरतपुर से अँग्रेज़ों को क्यों लड़ना पड़ा?

अध्याय १९

लार्ड विलियम बेंटिङ्क (१८२८—३५)

१८२८ ई० में लार्ड विलियम बेंटिङ्क भारत का गवर्नर-जनरल होकर आया। वह पहले मद्रास का गवर्नर रह चुका था और वेलोर में ग़दर होने के बाद इंगलैंड वापस बुला लिया गया था। वहाँ पहुँच कर भी उसने भारत की समस्याओं पर विचार करना न छोड़ा। उसका संबंध कम्पनी के सञ्चालकों से सदा बना ही रहता था। धीरे धीरे उनका उस पर विश्वास होता गया। एम्हर्स्ट के चले जाने के बाद उन्होंने उसकी जगह बेंटिङ्क को नियुक्त कर दिया।



विलियम बेंटिङ्क

बेंटिङ्क बड़ा शान्ति-प्रिय और सज्जन पुरुष था। शासन करने की उसमें योग्यता थी। लड़ाई-झगड़ा उसे पसंद न था।

इस समय सारे भारत में शान्ति छाई हुई थी। उसने इस सुअव-सर का ठीक उपयोग किया। उसने अनेकों सुधार किये। उसे कोई लड़ाई नहीं लड़नी पड़ी। हाँ, कई एक साधारण झगड़ों का निबटारा करने में उसे अवश्य भाग लेना पड़ा।

अधीन राजाओं से सम्बन्ध—अवध—अवध का नवाब दुर्व्यसनों में फँसा रहता था और उसकी प्रजा बहुत दुःखी थी। फिर भी बेंटिङ्क उनके झगड़ों से अलग रहना चाहता था। कम्पनी के सञ्चालकों की भी ऐसी ही आज्ञा थी। नवाब का अत्याचार बहुत बढ़ गया। बेंटिङ्क स्वयं लखनऊ गया; परन्तु उसने कोई कठोर नीति का उपयोग न किया। केवल नवाब को फटकार कर वापस लौट आया।

कचार—१८३० ई० में कचार के राजा की मृत्यु हो गई। बेंटिङ्क ने कचार को ब्रिटिश साम्राज्य में मिला लिया। इससे वहाँ की प्रजा बड़ी सुखी हुई और कचार देश दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति करने लगा।

कुर्ग—कुर्ग का राजा वीरराज बड़ा दुराचारी था। उसकी प्रजा उसके अत्याचारों से तंग आ गई थी। अँग्रेज़ी रेज़ीडेन्ट ने उसे बहुत कुछ समझाया। उसने एक न मानी। उल्टे वह अँग्रेज़ों से शत्रुता रखने लगा। आख़िर अँग्रेज़ों को सेना से काम लेना पड़ा। राजा गद्दी से उतार दिया गया। वहाँ की प्रजा के इच्छानुसार कुर्ग भी अँग्रेज़ी राज्य में सम्मिलित कर लिया गया।

मैसूर—हम पढ़ चुके हैं कि १७९९ ई० में वोडेयर वंश का एक बालक मैसूर राज्य की गद्दी पर बिठा दिया गया था। जब वह

बालक बड़ा हुआ तो बुरी संगत में पड़ गया। उसने अपने मंत्री पूर्णिया को हटाकर निकम्मे लोगों के हाथ में राज्य-प्रबन्ध दे दिया। इससे प्रजा में अशान्ति फैल गई और उसने विद्रोह कर दिया। तब अँग्रेज़ी सेना ने पहुँच कर इस विद्रोह का दमन किया। १८३० ई० में राजा को गद्दी से उतार कर राज्य-प्रबन्ध अँग्रेज़ों ने अपने हाथ में ले लिया। धीरे धीरे मैसूर की दशा सुधरने लगी।

इसके अतिरिक्त जयपुर, भूपाल और ग्वालियर में भी झगड़े हुए; पर वे शीघ्र ही दमन कर दिये गये। इन झगड़ों से देश की शान्ति पर कुछ प्रभाव न पड़ा और न वह भंग हुई। बेंटिङ्क को अपने शासन-सुधार के कार्यों में भी इन झगड़ों के कारण कोई विशेष अड़चन न पड़ी।

बाहरी राज्यों से सम्बन्ध—पंजाब—पंजाब में रणजीत सिंह का शासन था। उसकी शक्ति अब बहुत बढ़ गई थी। उसके पास एक बड़ी सुशिक्षित सेना भी थी। काबुल के शाह-शुजा से उसने कोहनूर हीरा छीन लिया था। पेशावर को जीत कर खूब लूट-खसोट की थी। पर वह बड़ा बुद्धिमान था। वह समझता था कि अँग्रेज़ों से लड़ाई मोल लेने में उसकी खैर नहीं है। इसलिए वह सदा अँग्रेज़ों से मैत्री बनाये रहा। अँग्रेज़ भी रूस के डर से उससे मित्रता रखना चाहते थे। अतः बेंटिङ्क ने अपने एक दूत को कुछ घोड़ों की भेंट लेकर रणजीत सिंह के पास भेजा, फिर स्वयं भी उससे मिलने गया। रणजीत सिंह ने रूपुर के स्थान पर गवर्नर-जनरल का बड़ी धूम धाम से स्वागत-सत्कार किया। एक सन्धि-पत्र भी लिखा गया जिसमें यह निश्चय हुआ कि



रणजीत सिंह गवर्नर-जनरल का स्वागत कर रहा है।

अँग्रेज़ और रणजीत सिंह में सदा मित्रता रहेगी। सचमुच उसके जीवन पर्यन्त उनमें कभी झगड़ा नहीं हुआ।

सिन्ध—बेंटिङ्क ने सिन्ध के अमीरों से भी सन्धि करने के लिए एक दूत भेजा। अमीरों ने सन्धि कर ली। अँग्रेजों को सिन्ध घाटी में होकर व्यापार करने का मार्ग मिल गया।

शासन-सुधार—बेंटिङ्क जब भारत में आया तो कम्पनी की आर्थिक दशा बहुत ख़राब हो रही थी। बर्मा की लड़ाई में बहुत सा रुपया ख़र्च हो गया था। इसलिए रुपये की बड़ी कमी थी। बेंटिङ्क ने सबसे पहिले इसी ओर ध्यान दिया। ख़र्च में कमी की गई। प्रेसीडेन्सियों की सेनाएँ घटा दी गईं। फ़ौजी अफ़-सरों का भत्ता कम कर दिया गया। अफ़ीम के व्यापार के लिए लाइसेन्स दिया जाने लगा। इसके अतिरिक्त आगरा प्रान्त में ज़मीन के बन्दोबस्त आदि से भी कम्पनी की आमदनी बढ़ गई। जहाँ साल में कम्पनी को एक करोड़ रुपये की हानि सहनी पड़ती थी, वहाँ अब २ करोड़ की बचत होने लगी।

इस समय अदालतों की दशा बहुत ख़राब थी। घूस भी बहुत चलता था? बेंटिङ्क ने कार्नवालिस द्वारा स्थापित की हुई सूबे की चारों अदालतों को तोड़ दिया। दीवानी के जज को फ़ौज-दारी के अधिकार भी दे दिये गये। वह ज़िला जज कहलाने लगा। उसकी अदालत में नीचे की अदालतोंकी अपील हो सकती थी। एक सदर अदालत उत्तरी-पश्चिमी सीमा प्रान्त के लिए इलाहाबाद में स्थापित की गई। अदालतों का काम फ़ार्सी की जगह उर्दू में होने लगा, जिससे सर्व साधारण को बड़ी सुविधा हो गई।

बेंटिङ्क ने ज़िलों की देख-रेख के लिए कमिश्नर नियुक्त कर दिये। एक कमिश्नर के अधीन चार-पाँच ज़िले दिये जाते थे। हिन्दुस्तानी भी अच्छे अच्छे पदों पर नियुक्त किये जाने लगे। उनको अच्छा वेतन मिलने लगा। इसी नीति का यह फल था कि अँग्रेज़ लोग भारत-शासन में सफल हो सके।

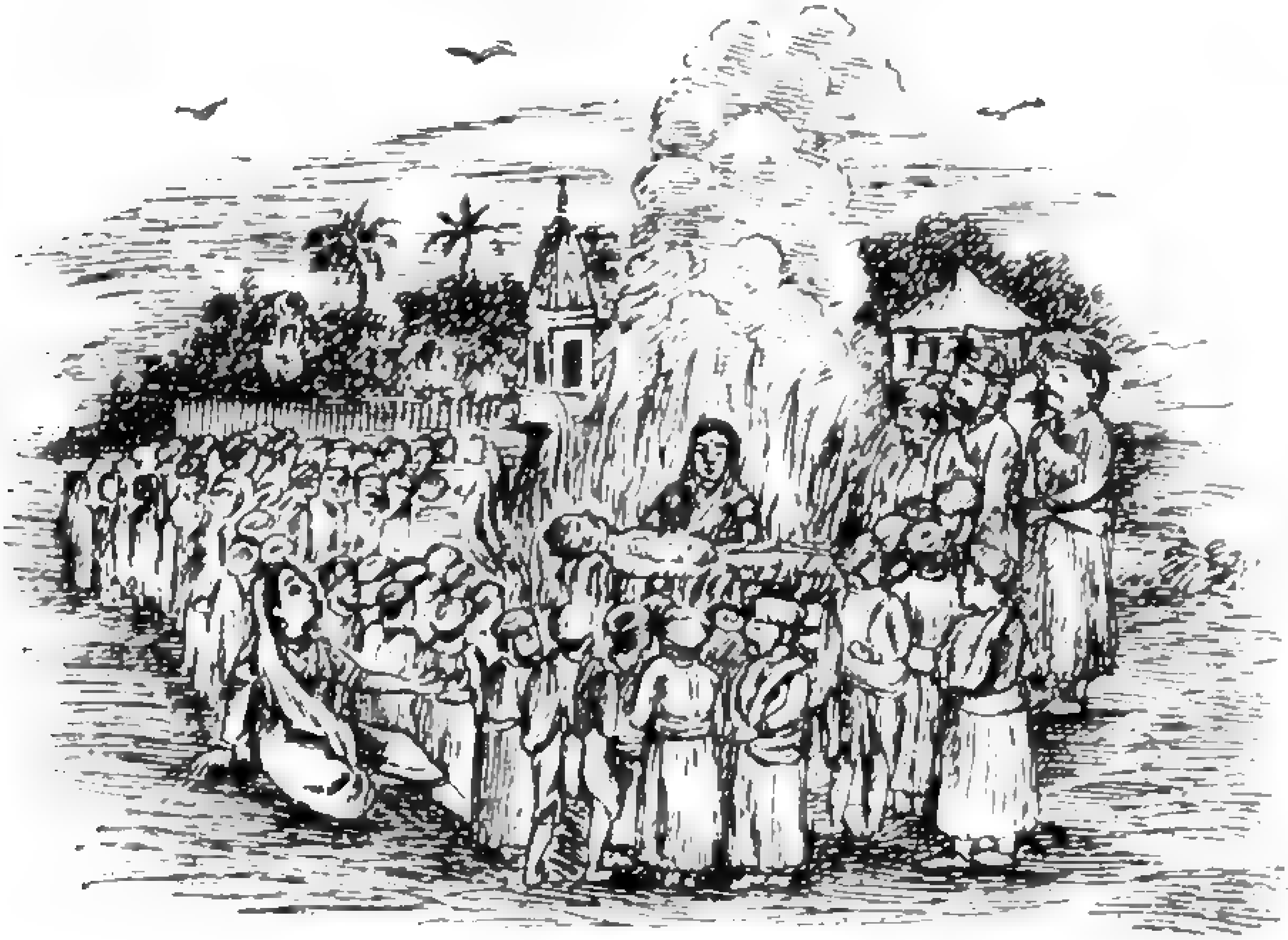
१८३३ का आज्ञापत्र—१८३३ ई० में कम्पनी को एक नया आज्ञा-पत्र मिला। इस आज्ञा पत्र से कम्पनी से चीन के व्यापार का ठेका और चाय के व्यापार का एकाधिकार भी छिन गया। अब हर कोई व्यापार करने के लिए स्वतन्त्र था। कम्पनी को व्यापार सम्बन्धी सन्धियाँ करने की भी आज्ञा न मिली। इस समय से बंगाल का गवर्नर-जनरल भारत का गवर्नर-जनरल कहलाने लगा। उसकी कौंसिल में एक मेम्बर क़ानूनी मसविदे तय्यार करने के लिए बढ़ा दिया गया। यह लार्ड मेकाले था। बम्बई और मद्रास को क़ानून बनाने का अधिकार नहीं रहा। आज्ञापत्र में हिन्दुस्तानियों को उच्चपद पर नियुक्त किये जाने के बारे में भी स्पष्ट रूप से लिखा हुआ था कि कोई हिन्दुस्तानी अपने धर्म, वर्ण अथवा जाति के कारण किसी पद को पाने से न रोका जायगा।



लार्ड मेकाले

सामाजिक सुधार—सती—भारत में सती होने की प्रथा

प्राचीन समय से चली आ रही थी। हिन्दू रमणियाँ हँसते-हँसते अपने मृत पति के साथ जीवित ही चिता में भस्म हो जाती थीं। उनकी पति-भक्ति का आदर्श बहुत ऊँचा था; परन्तु कालान्तर में इस प्रथा का बड़ा दुरुपयोग किया गया। यदि किसी पुरुष की मृत्यु हो जाती तो उसके कुटुम्बी ज़बरदस्ती उसकी स्त्री को चिता में फेंक देते थे। मुग़ल सम्राट् अकबर ने भी इस प्रथा को बन्द करने का उद्योग किया था; पर वह सफल न हुआ। बहुत से अँग्रेज़ी गवर्नर-जनरलों का भी ध्यान इस ओर आकर्षित हुआ था; परन्तु इसके रोकने में हिन्दुओं में अशान्ति फैल जाने की आशंका थी। यह उनकी धार्मिक रीति थी। इसलिए किसी गवर्नर ने



सती

इसमें हस्तक्षेप न किया। बेंटिङ्क के समय में इस प्रथा ने बड़ा भयङ्कर रूप धारण किया। अकेले बंगाल ही में प्रति वर्ष ८००

स्त्रियों के लगभग सती की जाती थीं। बेंटिङ्क ने इस प्रथा को रोकने में बड़े साहस से काम लिया। बंगाल के प्रसिद्ध समाज-सुधारक राजा राममोहन राय और द्वारकानाथ टैगोर ने भी उसे इस काम में बड़ी सहायता दी। १८२९ ई० में उसने एक कानून जारी किया जिससे सती होने का प्रयत्न करने अथवा सती होने में सहायता पहुँचाने के लिए कठोर दण्ड नियत कर दिया गया। बहुत से लोगों ने इसका विरोध किया; इंगलैण्ड तक इस कनून के विरुद्ध अपील की गयी; पर बेंटिङ्क ने एक न सुनी। वास्तव में इस अमानुषिक प्रथा को रोक कर उसने हिन्दुओं का बड़ा उपकार किया।

ठगी—लार्ड विलियम बेंटिङ्क ने केवल सती प्रथा को ही



ठग

नहीं हटाया, किन्तु ठगों का भी नाश करके हज़ारों आदमियों

का दुःख दूर किया। ठग लोग कालीदेवी के उपासक थे। ये लोग मार्ग चलते हुए आदमियों को पकड़ लेते थे। उनका माल-असबाब छीन कर उनको मार डालते अथवा उनको देवि पर बलि चढ़ा देते थे। ये समझते थे कि देवी इसमें बड़ी प्रसन्न होती है। यात्रियों को पकड़ने के लिए ये स्वयं भी यात्री के भेस में घूमा करते थे। पहले उनसे मित्रता करते, फिर चलते चलते जहाँ कहीं भी कोई निर्जन स्थान अथवा जंगल मिल जाता वहीं ये यात्री के गले में रूमाल डाल कर उसे मार डालते और उसका माल-मता लेकर चम्पत हो जाते। बेंटिङ्क ने इन राक्षसों को पकड़ने के लिए एक नया मोहकमा बनाया और स्लीमन साहब को उसका अध्यक्ष नियुक्त किया। ६ साल के अन्दर ३००० ठग पकड़ लिये गये। इनमें से बहुतों को फांसी दे दी गई और शेष को काला-पानी अथवा जेल भेज दिया गया। इस प्रकार थोड़े ही दिनों में देश से ठगों का नाम उठ गया और प्रजा सुखपूर्वक रहने लगी।

शिक्षा-सुधार—अब अँग्रेज़ लोग भारत के सम्राट् हो चुके थे। प्रजा के हित-अनहित का भार उनके ऊपर था। इस लिए भारत-वासियों की शिक्षा की ओर भी उनका ध्यान आकर्षित हुआ। बेंटिङ्क के समय में इस विषय में बड़ी उन्नति हुई। यों तो १८१३ ई० के आज्ञा-पत्र में १ लाख रुपया वार्षिक शिक्षा के लिए मिला था ; पर अभी तक यह रुपया पूर्वी साहित्य पर ही खर्च किया गया था। इस समय भारत में राजा राम-मोहन राय आदि जैसे विद्वान् और सुधारक मौजूद थे। उन्होंने यह विचार किया कि यदि अँग्रेज़ी शिक्षा का भी प्रचार किया जाय तो देशवासियों को बड़ा लाभ होगा। इसके साथ ही यह



राजा राममोहन राय

भी प्रश्न उठा कि शिक्षा अँग्रेज़ी भाषा में दी जाया करे अथवा हिन्दुस्तानी भाषा में ? एक ओर तो मेकाले आदि कहते थे कि अँग्रेज़ी को माध्यम बनाना चाहिये दूसरी ओर होरेस विल्सन आदि का कहना था कि ऐसा करने से हिन्दू-मुसलमानों की उन्नति में रुकावट होगी। अन्त में यही निश्चय हुआ कि अँग्रेज़ी भाषा के द्वारा ही शिक्षा दी जाये।

अब चारों ओर अँग्रेज़ी स्कूल और कालेज खुलने लगे। इसी समय कलकत्ता और मद्रास में मेडिकल कालेज की नींव पड़ी। आगरे में भी इसी समय कालेज खोला गया जो आज तक मौजूद है।

अँग्रेज़ी शिक्षा से निःसन्देह भारतवासियों का मानसिक

विकास मन्द पड़ गया। उनमें दासत्व भाव की भी वृद्धि हुई : परन्तु पश्चिम के विज्ञान और साहित्य से उन्हें परिचय हो गया। दूसरे उनके हृदय में राष्ट्रीयता और एकता के भाव भी उदय हो गये। प्रान्तों में अब वह विभिन्नता न रही क्योंकि एक प्रान्त का मनुष्य दूसरे प्रान्त के मनुष्य से अँग्रेज़ी में बातचीत कर सकता था। वास्तव में वर्तमान राष्ट्रीय आन्दोलन भी बहुत कुछ अँग्रेज़ी शिक्षा का ही फल है।

प्रश्न

१—लार्ड विलियम बेंटिङ्क का भारत के राजाओं से क्या सम्बन्ध था ? संक्षेप में लिखो।

२—लार्ड विलियम बेंटिङ्क ने क्या क्या शासन-सुधार किये ?

३—लार्ड विलियम बेंटिङ्क ने प्रजा की भलाई के लिए क्या क्या काम किये ?

४—१८३३ ई० के आज्ञा पत्र के विषय में तुम क्या जानते हो ?

अध्याय २०

मेटकाफ़ और आकलैण्ड

सर चार्ल्स मेटकाफ़ (१८३५-३६)—१८३५ ई० में लार्ड विलियम बेंटिङ्क इङ्गलैण्ड वापस चला गया। उसकी जगह सर चार्ल्स मेटकाफ़ गवर्नर-जनरल नियुक्त हुआ। यह बड़ा उदार स्वभाव का था। इसने समाचार-पत्रों को अपने भावों को स्पष्ट लिखने की स्वतंत्रता दे दी। कम्पनी के संचालक इस बात से असन्तुष्ट हो गये। उन्होंने १८३६ ई० में लार्ड आकलैण्ड को गवर्नर-जनरल बना कर भेज दिया। इसके अतिरिक्त मेटकाफ़ के समय में और कोई विशेष उल्लेखनीय घटना नहीं हुई।

लार्ड आकलैंड (१८३६-४२)—आकलैंड में शासन करने की योग्यता तो अवश्य थी, परन्तु उसमें आत्म विश्वास और दूरदर्शिता की कमी थी। दुर्भाग्य से उसे सलाहकार भी अच्छे न मिले। परिणाम यह हुआ कि उसे एक ऐसी लड़ाई लड़नी पड़ी जिससे कम्पनी की प्रतिष्ठा को बड़ी हानि पहुँची। यह अफ़गानों की लड़ाई थी।

उत्तर-पश्चिमी सीमा—भारत पर उत्तर-पश्चिम की ओर से आक्रमण का सदा डर बना रहता था। कारण यह था

कि रूस की सीमा भारत के निकट अफ़गानिस्तान तक फैली हुई थी। रूस इस समय उन्नति के शिखर पर था। वह अपनी सीमा बढ़ाने के लिए भारत पर दृष्टि लगाये हुए था। इधर अफ़गानिस्तान की दशा भी बड़ी डाँवाडोल थी। अहमदशाह अब्दाली के पोते शाह शुजा को गद्दी से उतार कर बारकज़ा जाति का सरदार दोस्त मोहम्मद राजा बन बैठा था। उसके शासन से प्रजा तो सन्तुष्ट थी, पर उसे फ़ारस के शाह और पंजाब के राजा रणजीत सिंह से सदा डर लगा रहता था। रणजीत सिंह ने एक बार उस पर आक्रमण भी किया था और पेशावर छीन कर अपने राज्य में मिला लिया था। इसी डर से दोस्त मोहम्मद अँग्रेज़ों से मैत्री करना चाहता था। लार्ड आकलैंड ने दोस्त मोहम्मद की ओर कुछ ध्यान नहीं दिया। विवश होकर उसे रूस की शरण में जाना पड़ा। रूसी राजदूत अफ़गानिस्तान में आ गया। दोस्त मोहम्मद ने उसका उचित आदर-सत्कार किया। इधर शाह शुजा ने जो लुधियाना में रहता था अँग्रेज़ों से सहायता माँगी। लार्ड आकलैंड ने उसे सहायता देना स्वीकार कर लिया। रणजीत सिंह से भी सन्धि की गई और यह निश्चय हुआ कि काबुल पर चढ़ाई करके शाह शुजा को गद्दी पर बिठाल दिया जावे।



दोस्त मोहम्मद

आकलैंड ने शाह शुजा को सहायता करने का वचन देकर बड़ी भूल की। शाह शुजा बिल्कुल निकम्मा पुरुष था। उससे उसकी प्रजा भी सन्तुष्ट न थी। दूसरे जब तक रणजीत सिंह की शक्ति मौजूद थी, रूस के आक्रमण का कोई विशेष डर न था। फिर राज्यच्युत कुमार का साथ देने में कोई लाभ भी न था। इस भूल के कारण ही आकलैंड को अफ़गानों से युद्ध में प्रवृत होना पड़ा।

अफ़ग़ानिस्तान की पहिली लड़ाई–१८३८ ई० में अँग्रेज़ी सेना शाह शुजा को लेकर काबुल की ओर बढ़ी। दो सेनाएँ बोलन और ख़ैबर के दर्रों में होकर भी भेजी गईं। १८३९ ई० में क़न्दहार ले लिया गया। इसी समय सर जान कीन ने ग़ज़नी पर अधिकार कर लिया। दोस्त मोहम्मद उत्तर की ओर भाग गया। अँग्रेज़ी सेना ने काबुल भी जीत लिया और शाह शुजा को अमीर बना दिया। अफ़गान प्रजा शाह शुजा से तो वैसे ही असन्तुष्ट थी, अँग्रेज़ों को देख कर और भी भड़क उठी।



शाह शुजा

इसी समय दोस्त मोहम्मद पकड़ लिया गया और कलकत्ता भेज दिया गया। इधर अफ़गानिस्तान में दोस्त मोहम्मद के लड़के अकबर के नेतृत्व में प्रजा ने विद्रोह कर दिया। फ़ौजी अफ़सर मार डाले गये। सेना ने घबड़ा कर सन्धि करली और अँग्रेज़ी सिपाही काबुल छोड़ कर लौट पड़े।

अभी वे ख़ैबर की घाटी ही में थे कि अफ़गानों ने गोली बरसाना आरम्भ कर दिया। १६००० सैनिकों में से एक डाक्टर ब्राइडन ही बच कर जलालाबाद पहुँचा। वहाँ उसने इस दुर्घटना का हाल बताया।

कम्पनी के संचालक लार्ड आकलैंड की नीति से बहुत असन्तुष्ट थे। उसके भी हाथ पाँव फूल गये थे और वह बहुत घबड़ा रहा था। १८४२ ई० में वह इंगलैंड चला गया उसकी जगह लार्ड एलेनबरा गवर्नर-जनरल बनाया गया।

प्रश्न

१—अफ़गानिस्तान की पहली लड़ाई क्यों हुई ? इस लड़ाई का क्या परिणाम हुआ ?

२—अँग्रेज़ों ने अफ़गानिस्तान के मामलों में क्यों हस्ताक्षेप किया ?

अध्याय २१

लार्ड एलेनबरा (१८४२—१८४४)

अफ़ग़ान-युद्ध का अन्त—लार्ड एलेनबरा ने आकर आकलैण्ड की नीति को बिलकुल पलट देना चाहा ; पर उसने सोचा कि ऐसा करने से अँग्रेज़ों की बड़ी मानहानि होगी। पहिले विद्रोह का ही दमन करना अति आवश्यक है। ऐसा विचार करके उसने जनरल पोलक और जनरल नाट को लिखा कि जैसा उचित समझें करें। पोलक ने अफ़ग़ानों को जलालाबाद से भगा दिया और आगे बढ़कर काबुल पर अधिकार कर लिया। जनरल नाट ने ग़ज़नी जीत लिया। फिर काबुल में पोलक से जा मिला। यहाँ इन अफ़सरों ने अँग्रेज़ी क़ैदियों को छुड़ाया। तब वे भारत को लौट आये। विद्रोहियों ने शाहशुजा को मार डाला था। दोस्त मोहम्मद छोड़ दिया गया। वह लौट कर फिर अमीर हो गया। कुछ समय के लिए अँग्रेज़ लोग अफ़ग़ानिस्तान के झगड़ों से अलग हो गये।

सिन्ध के अमीर—अभी अफ़ग़ानिस्तान से पूरी तरह छुट्टी भी न मिली थी कि सिन्ध में एक नया बखेड़ा उठ खड़ा हुआ। बेंटिङ्क के समय में सिन्ध के अमीरों से जो सन्धि हुई थी उसमें यह तय हो चुका था कि अँग्रेज़ों की सेना उनके प्रान्त में

होकर न जाया करेगी, परन्तु अफ़ग़ानिस्तान की लड़ाई के समय अँग्रेज़ों ने इस सन्धि की ओर तनिक भी ध्यान न दिया। सिन्ध वाले बेचारे चिल्लाते ही रहे ; पर आकलैण्ड ने उनकी ज़रा भी न सुनी। १८४२ ई० में लार्ड एलेनबरा ने नेपियर को सिन्ध भेजा। उसने अँग्रेज़ों के विरुद्ध सिक्खों से गुप्त सन्धि करने का अमीरों पर मिथ्या दोषारोपण किया और उनको नई सन्धि करने पर विवश किया। उनके बहुत से अधिकार छीन लिये गये। इस पर अमीरों ने विद्रोह कर दिया। अब नेपियर को बहाना मिल गया उसने अमीरों को मियानी के स्थान पर हरा कर सिन्ध से बाहर निकाल दिया। १८४३ ई० में सिन्ध अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया गया। इसमें सन्देह नहीं कि नेपियर का ऐसा व्यवहार बड़ा कठोर और सर्वथा अनुचित था।

ग्वालियर—१८४३ ई० में जनकोजी सिन्धिया की मृत्यु हो गई। उसकी विधवा रानी ताराबाई ने जिसकी उम्र केवल १२ साल की थी एक लड़के को गोद लिया। ग्वालियर में कोई शक्तिशाली राजा न होने के कारण गड़बड़ी फैलने लगी। इस समय वहाँ की सेना की संख्या बहुत बड़ी थी। उसमें ४०००० सिपाही और २०० तोपें थीं। एलेनबरा को सन्देह हुआ कि कहीं ऐसा न हो कि सिन्धिया और सिक्खों की सेना मिलकर देश में अशान्ति उत्पन्न कर दें। वह ग्वालियर की ओर बढ़ा और आगरे में आकर ठहरा। रानी ने समझा कि गवर्नर-जनरल लड़ना चाहता है। उसने भी युद्ध की तय्यारी कर दी। महाराजपुर और पनियार के स्थान पर लड़ाई हुई। सिन्धिया की सेना हार गई और ग्वालियर का क़िला ले लिया गया।

इस लड़ाई से ग्वालियर अँग्रेज़ों के अधीन हो गया। गोद लिये हुए बालक को वहाँ का राजा बना दिया गया। शासन-प्रबन्ध करने के लिए एक काउन्सिल (समिति) बनाई गई। सिन्धिया की सेना भी घटा दी गई।

ग्वालियर का झगड़ा समाप्त होते ही कम्पनी के सञ्चालकों ने एलेनबरा को इंगलैण्ड वापस बुला लिया। वे उससे प्रसन्न न थे क्योंकि वह अपने सामने किसी की भी नहीं सुनता था।

प्रश्न

१—लार्ड एलेनबरा ने अफ़गानिस्तान के प्रति कौन सी नीति का अवलम्बन किया?

२—लार्ड एलेनबरा के शासन काल का हाल लिखो।

अध्याय २२

लार्ड हार्डिञ्ज (१८४४—१८४८)

लार्ड एलेनबरा के बाद लार्ड हार्डिञ्ज भारत का गवर्नर-जनरल नियुक्त हुआ। उसने आते ही देश में सुधार करना आरम्भ कर दिया। उसने गंगा की नहर निकलवाई जिससे खेती को बड़ा लाभ हुआ। शिक्षा-प्रचार की ओर बहुत कुछ ध्यान दिया। सामाजिक सुधार का भी प्रयत्न किया; अबोध बालकों की बलि को रोका; परन्तु वह अपना अधिक समय सुधार में न दे सका क्योंकि पंजाब में महाराजा रणजीत सिंह की मृत्यु हो जाने से गड़बड़ी शुरू हो गई थी। तुरन्त उसे सिक्खों से लड़ने के लिए प्रस्तुत होना पड़ा।



लार्ड हार्डिंज

रणजीत सिंह—हम ऊपर पढ़ चुके हैं कि रणजीत सिंह ने अँग्रेज़ों से सन्धि कर ली थी। यह सन्धि इसने अपने मरते दम तक निभाई। वास्तव में सिक्खों में रणजीत सिंह जैसा वीर, पराक्रमी और योग्य कोई भी राजा न हुआ। उसी ने अपने



रणजीत सिंह

बाहुबल से पंजाब में १२ मिस्लों को एक कर दिया था और सिक्खों में राष्ट्रीयता और एकता का बीज बो दिया था। वह 'पंजाब का सिंह' कहा जाता था। उसका रोब सब पर जमा हुआ था। बचपन में उसकी एक आँख चेचक से जाती रही थी, किन्तु उसका चेहरा बड़ा रोबीला था। किसी को उसकी ओर आँख उठाकर देखने की भी हिम्मत न होती थी। वह पढ़ा-लिखा बिल्कुल न था; पर विद्वानों ने उसकी बुद्धिमत्ता की बड़ी प्रशंसा की है। वह विदेशियों का आदर करता था और उनसे उनके देश के हाल बड़े चाव से सुनता था। उसका दरबार बड़ी शान-शौकत का था।

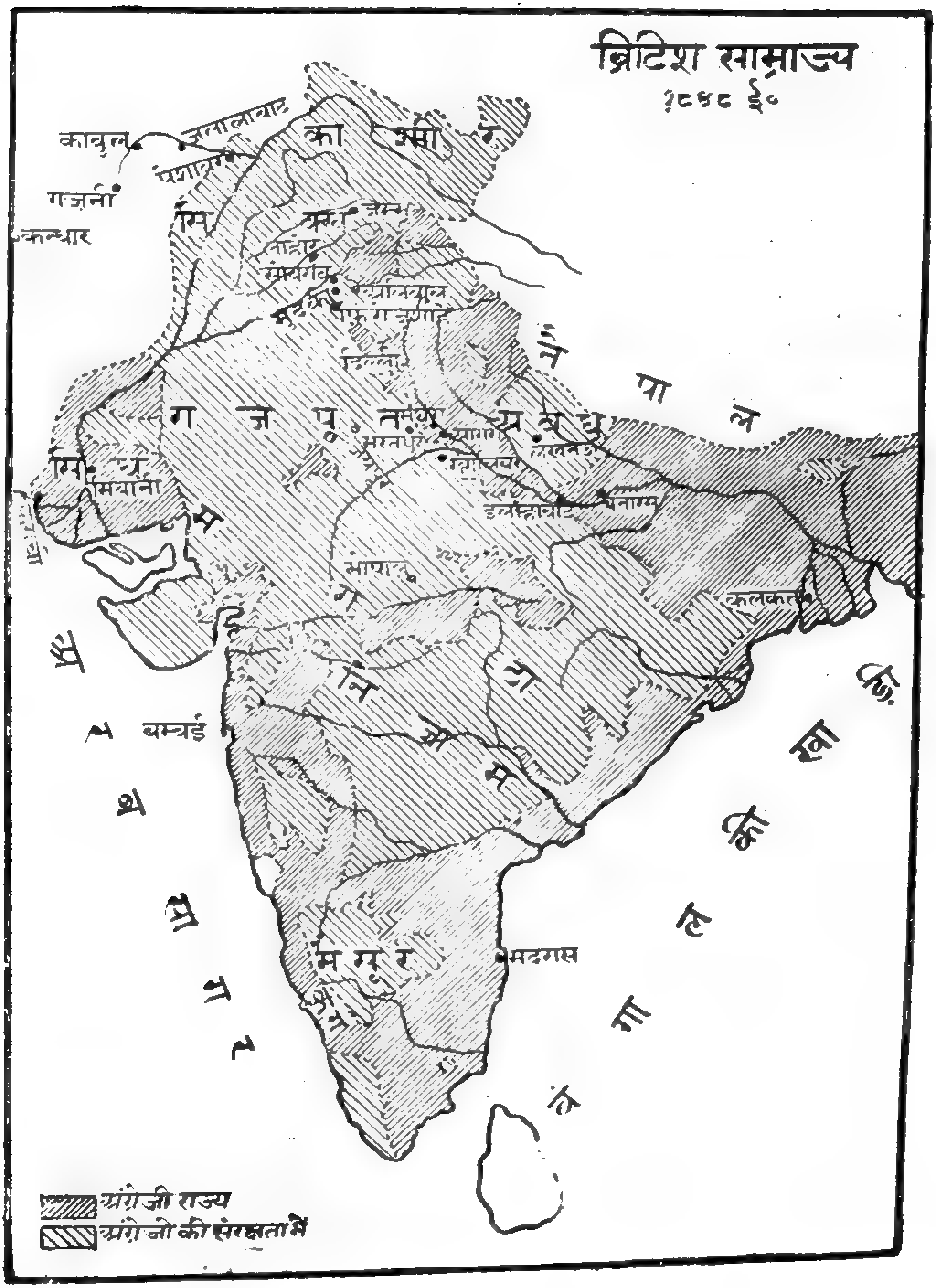
रणजीत सिंह ने अपने राज्य का प्रबन्ध भी बड़ी योग्यता से किया था। उसकी शासन-व्यवस्था फ़ौजी ढंग की थी। राज्य ज़िलों में बँटा हुआ था। हर ज़िले में एक एक सरकारी अफ़सर रहता था। कर वसूल करने के लिए करदार नियुक्त

थे। अदालतों में दण्ड बहुत कठोर दिया जाता था। प्रायः अपराधियों का अंग कटवा दिया जाता था क्योंकि रणजीत सिंह उनको जेल में रखना व्यर्थ समझता था।

रणजीत सिंह ने एक बड़ी सेना भी तय्यार की थी जिसकी सहायता से उसने सीमा-विस्तार किया। इस सेना को योरोपीय ढंग से शिक्षा दी गई थी। वैसे तो हिन्दू और मुसलमान दोनों से ही वह समान व्यवहार करता था, परन्तु उसकी सेना में अधिकतर सिक्ख ही थे।

ऐसे प्रतापी और शक्ति-शाली महाराजा के मरते ही सारे देश में गड़बड़ी फैल गई। सेना का अधिकार पंचायतों के हाथ में चला गया। कोई योग्य शक्ति न होने के कारण दल-बन्दियाँ होने लगीं। ईर्ष्या-द्वेष की अग्नि भड़क उठी। राज्याधिकार के लिए षड्यन्त्र रचे जाने लगे। चारों ओर अराजकता छा गई।

सिक्खों की पहिली लड़ाई—रणजीत सिंह के बाद उसका लड़का दलीप सिंह गद्दी पर बैठा। उसकी आयु केवल ५ वर्ष की थी। इसलिए उसकी माता राज-काज सम्हालने लगी। इस समय सिक्ख सेना की शक्ति बहुत बढ़ी हुई थी। राज-काज में वह हस्तक्षेप करती थी। धार्मिक गर्व और जोश में भरी हुई सेना अँग्रेज़ों का भी सामना करने को तय्यार हो गई। वह सतलज की ओर बढ़ने का विचार करने लगी। रानी में इतनी शक्ति न थी कि सिक्ख सेना को रोक सके। वह बड़ी चतुर स्त्री थी। उसने सोचा कि अँग्रेज़ों से लड़ाई हो जाने से सेना की शक्ति घट जावेगी। इस प्रकार उसकी अड़चनें भी दूर हो जावेंगी। यह सोचकर उसने भी सेना को बढ़ावा दे दिया। १८४५ ई० में



सेना ने सतलज को पार कर लिया। अँग्रेज़ तो पहले ही से

आक्रमण की आशंका से तय्यार बैठे थे। लार्ड हार्डिञ्ज ने तुरन्त युद्ध की घोषणा कर दी और सिक्खों से लड़ने के लिए सेना भिजवा दी। पहले मुदकी के स्थान पर लड़ाई हुई। सिक्खों ने बड़ी वीरता दिखलाई ; पर अन्त में वे हार गये। इसके बाद फ़ीरोज़शाह, अलीवाल और सोबराँव के स्थानों पर भी सिक्खों की हार हुई। इस हार से सिक्खों का साहस टूट गया। अँग्रेज़ों ने विजय का डंका बजाते हुए पंजाब में प्रवेश किया।

लाहौर की सन्धि—१८४६ ई० में लाहौर के स्थान पर सन्धि हो गई। दलीप सिंह को महाराजा बना दिया गया और एक अँग्रेज़ी अफ़सर उसकी देख-रेख के लिए नियुक्त किया गया। व्यास और सतलज के बीच का प्रान्त अँग्रेज़ों को मिल गया। सिक्खों की सेना की संख्या घटा दी गई। लाहौर में एक अँग्रेज़ी रेज़ीडेन्ट रहने लगा।

इस युद्ध में कम्पनी का धन तो बहुत खर्च हो गया ; पर अँग्रेज़ी साम्राज्य की सीमा पंजाब तक पहुँच गई। कम्पनी की आमदनी भी बढ़ गई। इसके अतिरिक्त एक और भी नये राज्य की नींव पड़ी। जम्मू के डोगरा वंशी गुलाब सिंह ने इस युद्ध में अंग्रेज़ों की बड़ी सहायता की थी। अतः अँग्रेज़ों ने ७५ लाख रुपया लेकर उसे काश्मीर का राजा बना दिया।

इस युद्ध के बाद ही १८४८ ई० में लार्ड हार्डिञ्ज इंगलैंड वापस चला गया।

प्रश्न

सिक्खों की पहली लड़ाई क्यों हुई? इस लड़ाई का क्या परिणाम हुआ?

अध्याय २३

लार्ड डलहौज़ी (१८४८–५६)

पूर्वार्द्ध

डलहौज़ी की गिनती भारत के प्रसिद्ध गवर्नर-जनरलों में है। उसने ८ वर्ष के अन्दर ही वे काम कर दिखलाये जिनको पढ़ कर अचरज होता है। तिस पर उसकी आयु केवल ३५ साल की ही थी और स्वास्थ्य उसका ठीक नहीं था। उसने केवल ब्रिटिश साम्राज्य की सीमा को ही नहीं बढ़ाया, किन्तु शासन को भी दृढ़ किया। उसकी प्रबन्ध-योग्यता भी किसी से कम न थी। उसे अपने ऊपर विश्वास था। वह ख़ूब सोच-समझ



लार्ड डलहौज़ी

कर नीति निकालता था और फिर उसी का अनुसरण करता था। उसका विश्वास था कि देशी नरेशों के राज्य में प्रजा सुखी और सन्तुष्ट नहीं रह सकती। सिर्फ़ अँग्रेज़ ही प्रजा को सुख-शान्ति दे सकते हैं। इसलिए वह सदा इस चिन्ता में ही लगा रहता कि किस प्रकार देशी नरेशों को हटा कर उनकी जगह अँग्रेज़ी साम्राज्य स्थापित किया जाय।

सिक्खों की दूसरी लड़ाई (१८४८-४९)—लार्ड हार्डिञ्ज ने सिक्खों को हरा कर उनसे लाहोर में सन्धि तो करली थी, पर अभी तक सिक्ख दबे न थे। आपस में ईर्ष्या-द्वेष और स्वार्थ के झगड़ों के कारण वे हार गये थे; परन्तु स्वतंत्रता का प्रेम उनके हृदय से न हटा था। अँग्रेज़ों का शासन उन्हें पसन्द न था और वे एक बार फिर अँग्रेज़ों से लड़ कर शक्ति आज़माना चाहते थे। विद्रोह की अग्नि उनमें धधक रही थी। केवल उभड़ने ही की देर थी।

लार्ड डलहौज़ी ने पंजाब की यह दशा देख कर मुलतान के शासक मूलराज से कर माँगा। मूलराज महाराजा दलीप-सिंह के अधीन एक गवर्नर था। उसने गवर्नर जनरल को लिखा कि मैं अपना पद त्याग करना चाहता हूँ। डलहौज़ी ने उसका त्याग-पत्र स्वीकार कर लिया और मुलतान का क़िला लेने के लिए लाहोर से दो अँग्रेज़ अफ़सरों को भेज दिया। इन अफ़सरों को मूलराज ने मरवा डाला और स्वयं विद्रोही हो गया। इस पर लड़ाई छिड़ गई।

लार्ड डलहौज़ी ने जनरल गफ़ के अधीन सेना भेजी। मुलतान घेर लिया गया। इसी बीच में कुल खालसा फ़ौज

विद्रोहियों से मिल गई। जनरल गफ़ ने चिलियानवाला के स्थान पर सिक्खों की सेना को पराजित किया; परन्तु अँग्रेज़ों की भी बड़ी हानि हुई। उनके बहुत से आदमी लड़ाई में मारे गये। १८४९ ई० में मुलतान भी ले लिया गया और मूलराज भी क़ैद कर लिया गया। अब अँग्रेज़ी सेना ने सिक्ख सेना पर फिर धावा बोल दिया। गुजरात के स्थान पर (चिनाब नदी के किनारे) बड़ी घमासान लड़ाई हुई। चार घंटे के अन्दर ही सिक्ख सेना तितर-बितर हो गई। गुजरात पर अँग्रेज़ों का अधिकार हो गया। फिर सिक्ख सेना का पीछा किया गया और अँग्रेज़ों ने उसको अफ़ग़ानिस्तान की सीमा तक खदेड़ कर पेशावर भी ले लिया।

लड़ाई का परिणाम—लड़ाई के बाद अब यह प्रश्न उठा कि पंजाब का क्या प्रबन्ध हो। डलहौज़ी ने पंजाब को अँग्रेज़ी राज्य में मिला लेना ही उचित समझा। इस प्रकार घमंड में चूर होकर सिक्ख अपनी स्वतंत्रता खो बैठे।

शासन-प्रबन्ध के लिए डलहौज़ी ने पंजाब में तीन आदमियों का एक बोर्ड नियत किया। प्रान्त को कई ज़िलों में बाँट दिया गया। उन ज़िलों में एक एक हाकिम नियुक्त कर दिया गया। भूमिकर घटा दिया गया। सामाजिक सुधार भी किया गया। बहुत सी कुरीतियाँ सिक्ख समाज से दूर कर दी गईं और नये नये स्कूल खोले गये। इन सुधारों से सिक्ख लोग अँग्रेज़ों के भक्त हो गये और ग़दर में उन्होंने उनका साथ दिया।

राजा दलीपसिंह को पेन्शन दे दी गई। कुछ समय बाद

वह विलायत चला गया। वहाँ उसने ईसाई धर्म स्वीकार कर लिया।

ब्रह्मा की दूसरी लड़ाई (१८५२ ई०)—१८५२ ई० में ब्रह्मा से भी लड़ाई छिड़ गई। कारण यह था कि ब्रह्मा के राजा ने यन्दाबू की सन्धि को पूरी तरह नहीं निभाया। जो अँग्रेज़ी दूत उसके दर्बार में रहता था उसके साथ उसका व्यवहार ठीक न था। फिर उसके राज्य में अँग्रेज़ व्यापारियों के साथ बड़ा अत्याचार होता था। इन व्यापारियों ने अँग्रेज़ों से सहायता माँगी। डलहौज़ी को जब यह हाल मालूम हुआ तब उसने लैम्बर्ट साहब को आवा नरेश के दर्बार में हर्जा माँगने के लिए भेजा। लैम्बर्ट जल सेना का एक अफ़सर था। उसने जाते ही बर्मा वालों के एक जहाज पर अधिकार कर लिया। बर्मा वालों ने गोली बरसाना शुरू कर दिया। इस प्रकार लड़ाई शुरू हो गई।

अँग्रेज़ी सेना ने १८५२ ई० में रंगून पर ख़ूब गोला बाज़ी करके उस पर अधिकार कर लिया। कुछ समय बाद जनरल गाडीवन ने प्रोम ले लिया। सारा पीगू अँग्रेज़ों के हाथ में आ गया। डलहौज़ी ने पीगू को अँग्रेज़ी राज्य में मिला कर उसका एक अलग प्रान्त बना दिया। रंगून को इस नए प्रान्त की राजधानी बनाया गया। प्रजा के हित के लिए बहुत से सुधार किये गये। अँग्रेज़ों के अधीन इस देश में भी उन्नति होनी शुरू हो गई।

इस लड़ाई से अँग्रेज़ी राज्य की सीमा बहुत बढ़ गई। अब बंगाल की खाड़ी का सारा किनारा अँग्रेज़ों के हाथ में आ गया और आवा का राज्य समुद्र तट से अलग हो गया। पीगू के व्यापार की भी बड़ी वृद्धि हुई।

शिकिम—१८५० ई० में शिकिम के राजा ने दो अँग्रेज़ अफ़सरों को पकड़ लिया। डलहौज़ी इस पर बहुत क्रुद्ध हुआ। उसने शिकिम की रियासत भी (नैपाल और भूटान के बीच का प्रान्त) अँग्रेज़ी राज्य से मिला ली।

डलहौज़ी और देशी रियासतें—देशी रियासतों से लार्ड वेलज़ली के समय में सहायक सन्धि हो गई थी। यह प्रथा उस समय तो बड़ी उपयोगी थी; पर अन्त में इसका परिणाम अच्छा नहीं निकला। देशी नरेश बड़े आराम तलब हो गये। दुर्व्यसनों में पड़ कर उन्होंने राजकाज छोड़ दिया। प्रजा के हित-अनहित का उन्हें ध्यान न रहा। डलहौज़ी यह दशा देख कर बड़ा दुखी हुआ। उसका विश्वास था कि राजा का कर्त्तव्य केवल साम्राज्य-विस्तार ही नहीं है; किन्तु प्रजा के दुःख निवारण करना और राज्य में शान्ति स्थापित करके उसकी उन्नति करना भी है। देशी नरेशों के चंगुल से प्रजा को छुड़ाने और उनके अत्याचारों से बचाने के लिए उसने एक नई नीति का अवलम्बन किया।

भारतवर्ष में इस समय दो प्रकार की रियासतें थीं। एक तो वे जो अँग्रेज़ों की स्थापित की हुई थीं। जैसे सतारा, नागपुर, झाँसी आदि और दूसरी वे जो अँग्रेज़ों के आने से पहिले ही से मौजूद थीं। जैसे ग्वालियर, इन्दौर आदि। डलहौज़ी ने अँग्रेज़ों की बनाई हुई रियासतों के लिए एक नया नियम बना दिया कि यदि उनमें से किसी राजा के कोई पुत्र न हो तो उत्तराधिकार के लिये बिना अँग्रेज़ी सरकार की आज्ञा के किसी को गोद लेने का कोई अधिकार न होगा। उसकी मृत्यु के बाद उसका

राज्य अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया जायगा। हिन्दुओं में गोद लेने की प्रथा सदा से चली आती थी और उनके शास्त्रों की भी ऐसी आज्ञा थी। डलहौज़ी ने किसी की भी न सुनी। उसने कहा कि कम्पनी भारत की साम्राज्ञी है। बिना उसकी सम्मति के गोद लिया हुआ बालक राज्य का अधिकारी नहीं हो सकता।

सतारा—इस नीति के अनुसार डलहौज़ी ने बहुत से छोटे छोटे राज्य अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिये। १८४८ ई० में सतारा के राजा की मृत्यु हो गई। उसके कोई पुत्र न था और उसने एक लड़के को गोद ले लिया था। डलहौज़ी ने गोद लिये हुए लड़के को राज्य से वञ्चित करके सतारा का राज्य अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया।

झाँसी—इसी समय झाँसी के राजा की भी मृत्यु हो गई। रानी ने एक बालक को गोद लिया। पर डलहौज़ी ने उसे अस्वीकार कर दिया। उसने झाँसी के राज्य पर भी अधिकार कर लिया।

नागपुर—१८५३ ई० में नागपुर के अन्तिम भोंसला राजा का देहान्त हो गया। उसके कोई पुत्र न था और न उसने किसी को गोद ही लिया था। डलहौज़ी ने उसके राज्य को अँग्रेजी राज्य में मिला कर मध्य प्रदेश का एक प्रान्त बना दिया। उसका प्रबंध एक चीफ़ कमिश्नर के सुपुर्द किया गया।

धोंधू पन्थ—धोंधू पन्थ अथवा नाना साहब पेशवा बाजी-राव का गोद लिया हुआ पुत्र था। १८५२ ई० में पेशवा की मृत्यु हो जाने पर नाना साहब ने डलहौज़ी से ८ लाख की

पेन्शन जो पेशवा को मिलती थी माँगी। डलहौज़ी ने साफ़ इन्कार कर दिया।

इसके अतिरिक्त और भी कई छोटे छोटे राज्य इस नीति से अँग्रेज़ी राज्य में सम्मिलित कर लिये गये।

स्वतन्त्र राज्य—स्वतन्त्र राज्यों के प्रति भी डलहौज़ी का बर्ताव अच्छा न था। उसका तो विश्वास था कि प्रजा को शान्ति और सुख केवल अँग्रेज़ी राज्य से ही मिल सकता है। इसलिए जहाँ कहीं उसे अवसर मिला उसने स्वतन्त्र राज्यों को भी हड़प लिया।

निज़ाम—निज़ाम का शासन अच्छा न था। उसने अँग्रेज़ों से सहायक सन्धि कर रक्खी थी। अँग्रेज़ों की जो फ़ौज उसके देश में रहती थी, उसका खर्चा भी उससे न दिया जाता था। आखिर उसे सेना के खर्च के लिए बरार का सूबा अँग्रेज़ों को दे देना पड़ा।

अवध—अवध में इस समय नवाब वाजिद अली शाह राज्य कर रहा था। उसे अपने आमोद प्रमोद से ही फुरसत न मिलती थी। उसके कर्मचारी लोग प्रजा पर बड़ा अत्याचार करते थे। प्रजा बड़ी दुखी थी। कई बार नवाब को चेतावनी दी गई; परन्तु उसने कुछ ध्यान न दिया। आखिर १८५६ ई० में डलहौज़ी ने सेना भेज कर अवध पर



वाजिद अली शाह

अधिकार कर लिया। नवाब को पेन्शन दे दी गई। वह कलकत्ते भेज दिया गया और अवध अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया गया।

डलहौज़ी की नीति का फल—डलहौज़ी ने देशी रियासतों को हड़पने के बहुत से उपाय किये। पंजाब और बर्मा पर लड़ाई लड़कर अधिकार किया। अधीन राज्यों को गोद लेने का अधिकार न देकर अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया। स्वतन्त्र राज्यों को दुर्व्यवस्था का बहाना करके छीन लिया। उसके समय में अँग्रेज़ी साम्राज्य की सीमा बहुत बढ़ गई। प्रजा भी देशी नरेशों के अत्याचारों से छूट गई; पर देशी नरेश जल-भुन कर खाक हो गये। हर एक नरेश को यही डर लगा रहता था कि कहीं उसकी बारी न आ जाये और किसी न किसी बहाने उसका राज्य हड़प लिया जाय। जिन राजाओं का राज्य छिन गया था वे तो बहुत ही बिगड़े हुए थे। मरता क्या न करता। उन्होंने प्रजा को भड़काना शुरू किया और अन्त में ग़दर करा दिया।

प्रश्न

१—लार्ड डलहौज़ी ने भारत में कौनसी नीति का अनुसरण किया? उसकी नीति का क्या फल हुआ?

२—पंजाब ब्रिटिश साम्राज्य में क्यों मिलाया गया? विस्तार पूर्वक लिखो।

३—बर्मा की दूसरी लड़ाई के क्या कारण थे? इस लड़ाई से अँग्रेज़ों को क्या लाभ हुआ?

४—लार्ड डलहौज़ी ने कौन कौन सी रियासतों को अँग्रेज़ी राज्य में मिलाया और किस किस तरह से? संक्षेप में लिखो।

अध्याय २४

लार्ड डलहौज़ी

उत्तरार्द्ध

१८५३ का आज्ञा-पत्र—१८५३ ई० में कम्पनी को अन्तिम आज्ञा-पत्र दिया गया। इसमें कोई अवधि नहीं नियत की गई। इंगलैण्ड की सरकार जब चाहे भारत का शासन कम्पनी से अपने हाथ में ले सकती थी। सञ्चालकों की संख्या घटा दी गई और उनके अधिकारों में भी कमी की गयी। बंगाल में एक लेफ़्टीनेन्ट गवर्नर नियुक्त कर दिया गया क्योंकि अँग्रेज़ी राज्य का विस्तार अब बहुत हो गया था और गवर्नर-जनरल का काम बहुत बढ़ गया था। गवर्नर जनरल की कौंसिल में ६ सदस्य भी बढ़ा दिये गये।

इस आज्ञापत्र से भारतवासियों के लिए ऊँचे ओहदे पाने का मार्ग भी खोल दिया गया। इंगलैण्ड में सिविल सर्विस की परीक्षा होने लगी। वहाँ जाकर और परीक्षा पास करके भारत-वासी बड़े बड़े पदों पर नियुक्त किये जा सकते थे।

सुधार और उन्नति—लार्ड डलहौज़ी ने केवल साम्राज्य-विस्तार ही नहीं किया, किन्तु सामाजिक सुधार और उन्नति

का भी बड़ा प्रयत्न किया। उसे पश्चिमी सभ्यता का बड़ा गर्व था। उसी का उसने ख़ूब प्रचार किया। इसमें सन्देह नहीं कि उसकी योजनाओं से भारतवासियों की बड़ी उन्नति हुई और अँग्रेज़ों का शासन और भी दृढ़ हो गया।

रेल की सड़क—डलहौज़ी ने इंगलैण्ड के धनिकों को उत्साहित करके भारतवासियों की सुविधा और सुख के लिए रेल की सड़क का निर्माण कराया। ईस्ट इण्डिया रेलवे और मद्रास रेलवे की नींव उसी के सामने पड़ी। सबसे पहले १८५३ ई० में बम्बई से थाना तक एक छोटी सी रेल की सड़क बनाई गई थी। १८५६ ई० तक २०० मील रेल की सड़क बनाई जा चुकी थी।

तार और डाक—डलहौज़ी ने ही सबसे पहले भारत में तार और डाक का उचित प्रबन्ध किया। इस समय तक डाक का कोई उचित प्रबन्ध न था। डाक हरकारों द्वारा भेजी जाती थी जिसमें बड़ी बाधाएँ पड़ती थीं और बहुत खर्चा होता था। बम्बई से कलकत्ता तक चिट्ठी जाने में एक रुपया ख़र्च हो जाता था। डलहौज़ी ने २ पैसे का टिकट बनवाया। अब उसी को लगाकर चिट्ठी जाने लगी। डाक का एक महकमा भी उसने बना दिया जिससे अब सरकार को बड़ी आमदनी है।

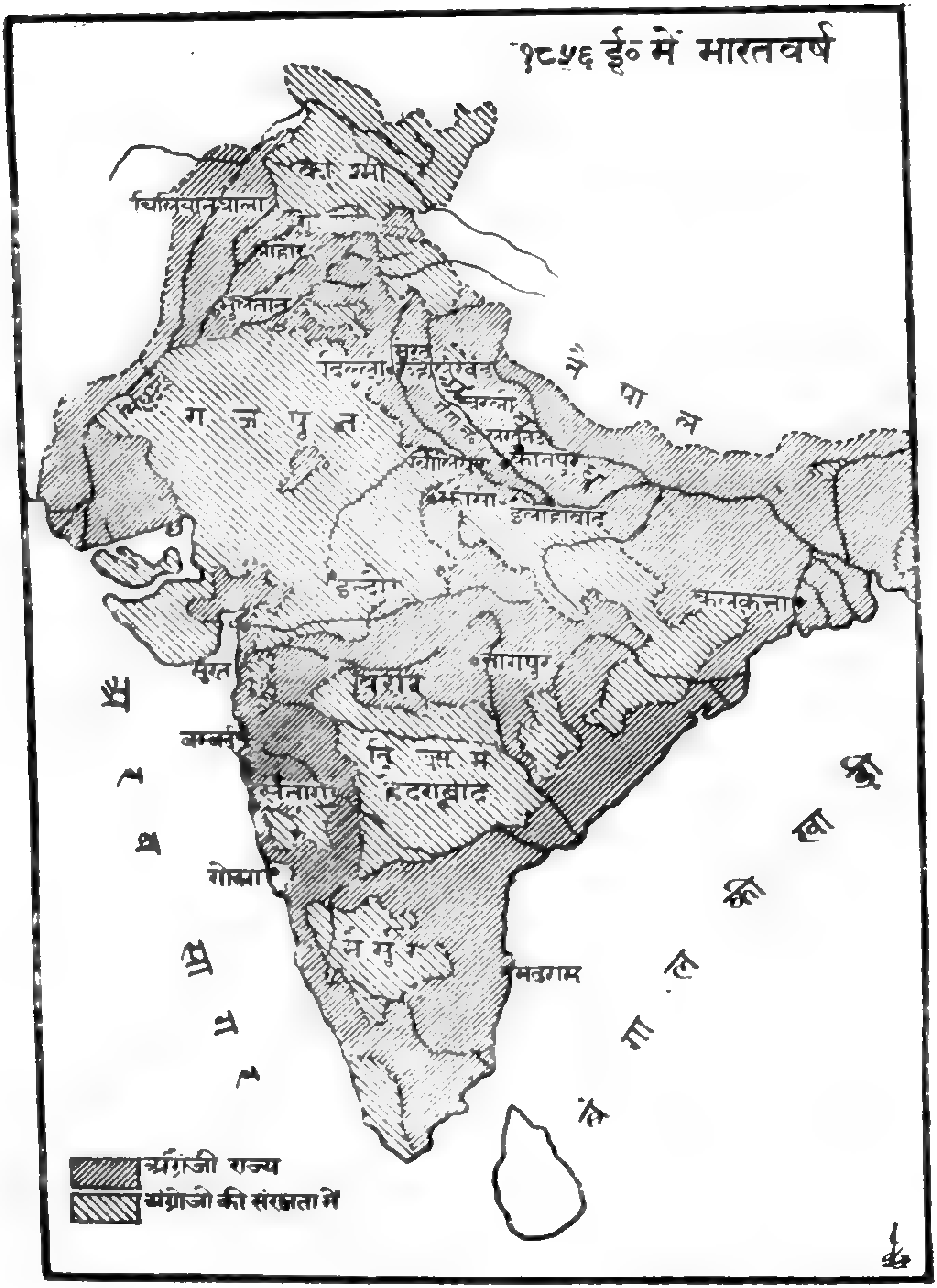
इमारत का महकमा—नहर, पुल और सड़कें आदि बनवाने के लिए डलहौज़ी ने एक महकमा खोला जो इमारत का महकमा कहलाता है। इस महकमा की आमदनी भी बढ़ा दी गई। अब तक इमारतों का काम एक फ़ौजी संस्था के हाथ में

था। इस काम में बहुत कम रुपया ख़र्च किया जाता था। डलहौज़ी ने इस फ़ौजी संस्था को तोड़ दिया। इमारतों का काम बहुत बढ़ गया। बड़ी बड़ी सड़कें बनवाई गईं जैसे ग्राण्ड ट्रंक रोड जो दिल्ली से कलकत्ता तक जाती है। गंगा की नहर भी बनवाई गई।

शिक्षा—१८५४ ई० में बोर्ड ऑफ़ कन्ट्रोल के प्रधान सर चार्ल्स वुड की रिपोर्ट भारत में भेजी गई। इसमें लिखा था कि शिक्षा का प्रचार करना सरकार का मुख्य कर्तव्य है। डलहौज़ी ने इस रिपोर्ट के अनुसार शिक्षा पर विशेष ध्यान देना शुरू कर दिया। बहुत से मदर्से खोले गये। सरकार से उनको आर्थिक सहायता मिलती थी। शिक्षा का एक महकमा भी बनाया गया और उसकी देख-भाल के लिए एक डाइरेक्टर नियुक्त कर दिया गया।

सामाजिक सुधार—समाज के सुधार करने की भी डलहौज़ी ने बड़ी चेष्टा की। उसने ऐसे क़ानून बनाये जिनसे धर्म परिवर्तन और विधवा विवाह करना न्याय संगत हो गया। इससे हिन्दुओं के हृदय को बड़ी चोट पहुँची। क्योंकि ये बातें उनके धर्म के विरुद्ध थीं। उनमें इससे बड़ा असन्तोष फैल गया।

डलहौज़ी का वापस जाना—१८५६ ई० में डलहौज़ी इंगलैंड को लौट गया। वास्तव में उसका शासन-काल बड़ा महत्वपूर्ण था। उसने भारत में अंग्रेज़ी राज्य का निर्माण किया और एक नये युग की नींव डाली। कहा जाता है कि उसकी योजनाओं और नीति से देश में असन्तोष फैला जिसका फल सन् १८५७ ई० का ग़दर हुआ; परन्तु वास्तव में ग़दर भी उसके



किये हुए काम को न मिटा सका। प्रजा की उन्नति करना वह

राजा का कर्तव्य समझता था। उसने जो कुछ भी किया इसी उद्देश्य से किया। यदि भारतवासियों ने उसका विरोध किया तो यह उनकी भूल थी। उसके समय में देश ने जितनी उन्नति की उतनी किसी और गवर्नर-जनरल के समय में नहीं की।

प्रश्न

१—लार्ड डलहौज़ी ने क्या क्या सुधार किये ? इन सुधारों का भारतवासियों पर क्या प्रभाव पड़ा ?

२—भारतवर्ष का एक नक़्शा खींचकर उसमें डलहौज़ी के समय का अँग्रेज़ों का राज्य-विस्तार दिखलाओ।

अध्याय २५

भारत का अन्तिम गवर्नर-जनरल

लार्ड कैनिंग

(१८५७ ई० का ग़दर)

लार्ड कैनिंग (१८५६–१८६२ ई०)—लार्ड डलहौज़ी के चले जाने के बाद लार्ड कैनिंग गवर्नर-जनरल नियुक्त हुआ। वह बड़ा योग्य और न्यायप्रिय पुरुष था। जिस समय वह भारत में आया चारों ओर शान्ति छाई हुई थी; परन्तु अन्दर ही अन्दर विद्रोह की अग्नि सुलग रही थी, जो अवसर पाकर एक दम भभक उठी। कैनिंग ने बड़ी योग्यता से इसका दमन किया और शीघ्र ही सारे देश में शान्ति स्थापित कर दी।



लार्ड कैनिंग

राज-विद्रोह—(१८५७ ई०) सन् ५७ का ग़दर लार्ड डलहौज़ी

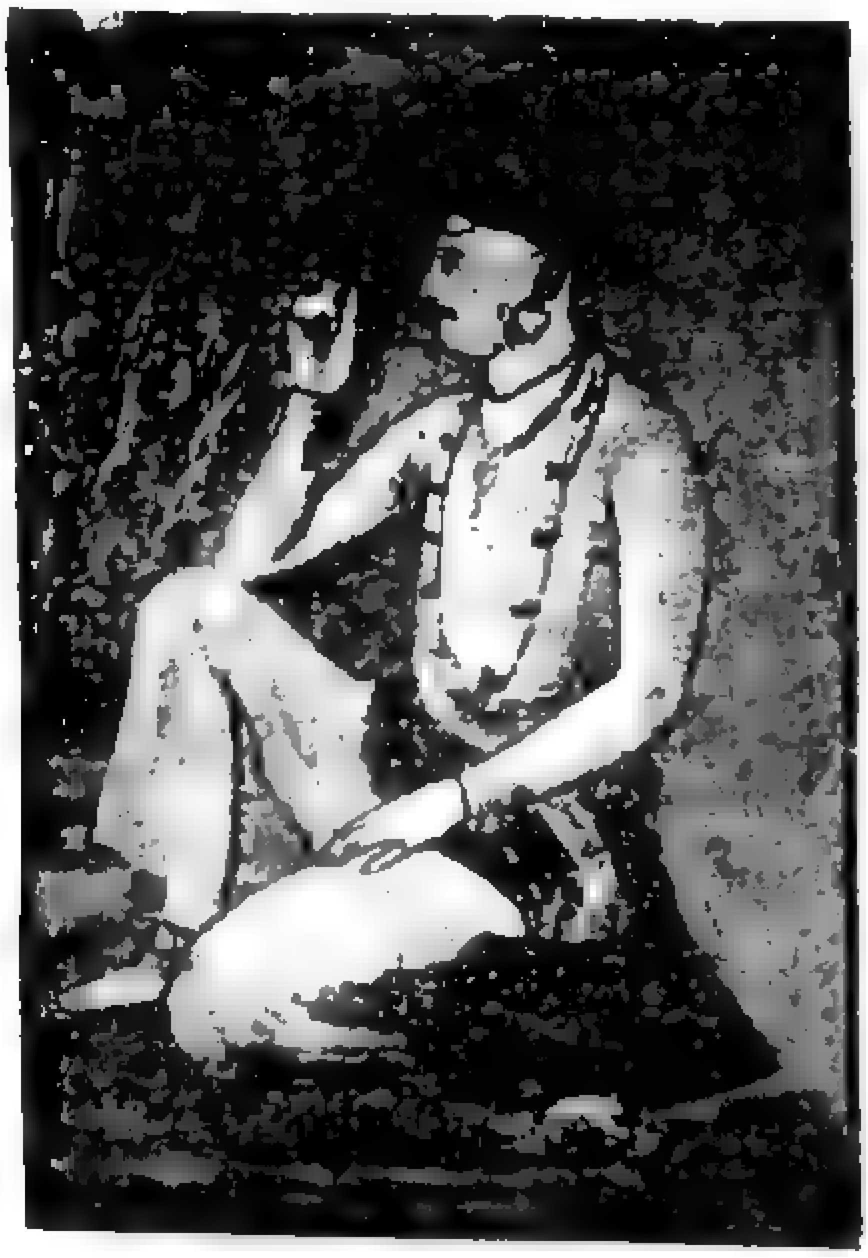
के समय के फैले हुए असन्तोष का फल था। बहुत से राजा और नवाब जिनके राज्य छीन लिये गये थे अँग्रेज़ों से जले-भुने बैठे थे। वे बदला लेने को फ़िक्र में थे। इधर डलहौज़ी के सुधार और योजनाओं ने और भी अशान्ति फैला दी थी। रेल और तार से लोग डरते थे। स्कूलों के खुल जाने से उनको सन्देह होता था कि यह ईसाई बनाने का उपाय किया जा रहा है। विधवा-विवाह और धर्म-परिवर्तन की आज्ञा मिल जाने से हिन्दू लोग और भी चिढ़ गये थे। वे समझते थे कि उनके धर्म पर आक्षेप किया जा रहा है और अँग्रेज़ लोग उनके शास्त्रों में दियासलाई लगाने की कोशिश कर रहे हैं। आजकल चारो ओर नेता लोग सामाजिक सुधार करने का प्रयत्न कर रहे हैं; परन्तु उस समय ऐसे सुधारों को लोग दूसरी दृष्टि से देखते थे और उनका महत्व भी नहीं समझ सकते थे।

इस समय एक और भी घटना हुई। फ़ौज के सिपाहियों को एक नई तरह के कारतूस दिये गये। ये कारतूस लगाने से पहले चिकने किये जाते थे। किसी ने यह अफ़वाह उड़ा दी कि यह कारतूस धर्म भ्रष्ट करने के लिए चर्बी मिलाकर बनाये गये हैं। सिपाहियों ने यह समझा कि अब उनके धर्म का ठिकाना नहीं रहा। वे एक दम भड़क उठे। उन्होंने विद्रोह कर डाला।

विद्रोह का आरम्भ—गदर की तय्यारी बहुत दिनों से हो रही थी। लार्ड कैनिंग को इसका बिल्कुल ही पता न था। यही कारण है कि विद्रोहियों को बहुत सफलता प्राप्त हुई। उन्होंने अँग्रेज़ों पर अत्याचार भी किये। कैनिंग इन विद्रोहियों का सामना करने के लिए बिल्कुल तय्यार नहीं था।

१० मई सन् १८५७ ई० को रविवार के दिन अकस्मात् मेरठ में ग़दर शुरू हुआ। अँग्रेज़ लोग गिर्जा घर गये हुए थे। विद्रोहियों ने जेल तोड़ डाला और क़ैदियों को मुक्त कर दिया। इसके बाद अँग्रेज़ों को बीन बीन कर मारना शुरू किया। मेरठ में मारकाट करके विद्रोही दिल्ली की ओर बढ़े। पहरेदार, सिपाही और अँग्रेज़ लोग जो दिल्ली के क़िले में रहते थे मार डाले गये। मुग़ल सम्राट बहादुर शाह को गद्दी पर बिठाल दिया गया।

विद्रोह का फैलना—शीघ्र ही पंजाब को छोड़ कर सारे उत्तरी भारत में ग़दर फैल गया। कोई भी छावनी ऐसी न थी जहाँ यह आग न भभकी हो। आगरे के क़िले पर भी विद्रोहियों का आक्रमण हुआ। कानपुर में नाना साहब बाग़ियों से मिल गया। उसने अँग्रेज़ स्त्री और बच्चों को विश्वास दिलाया कि यदि वे चुपचाप इलाहाबाद भाग जयँगे तो उनके प्राणों की रक्षा हो जायगी। वे लोग जाने के लिए तय्यार हुए। परंतु उसके साथियों ने उन पर गोली बरसाना शुरू कर दिया। मरे हुए लोगों को एक कुएँ में फेंक दिया गया। यह कुआँ आज तक मौजूद है। यह सैकड़ों निर्दोष स्त्री-पुरुषों की याद दिलाता है जिनको निर्दई नाना ने विश्वास-घात करके मरवा डाला था। लखनऊ में भी बड़ा उपद्रव मचा और विद्रोहियों ने वहाँ की रेज़ीडेन्सी को विध्वंस कर दिया।



नाना साहब

रुहेलखण्ड और मध्य भारत में भी ग़दर का खूब ज़ोर रहा।

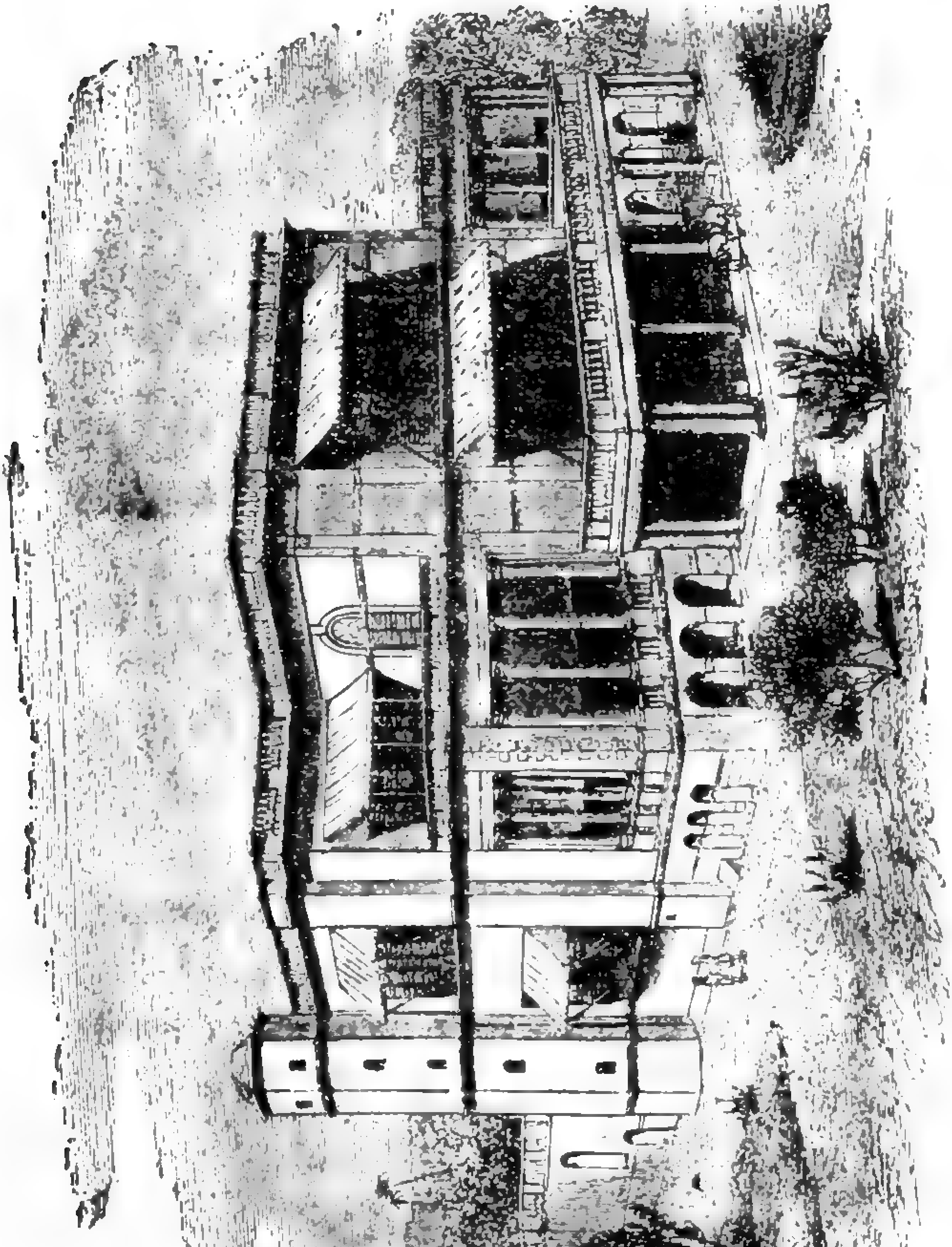


झाँसी की रानी

झाँसी में रानी लक्ष्मीबाई जो अँग्रेज़ों से चिढ़ी हुई थी रानी बन बैठी। बरेली में विद्रोहियों ने खान बहादुर ख़ाँ को जो रुहेला सर्दार हाफ़िज़ रहमतख़ाँ का पोता था नवाब बना दिया। यहाँ भी अँग्रेज़ मारे गये। ग्वालियर में भी सेना विद्रोही हो गई; पर सिन्धिया ने अँग्रेज़ों का ही साथ दिया।

ग़दर का अन्त—अभी विद्रोह आरम्भ हुए बहुत दिन नहीं हुए थे; परन्तु इतने ही समय में हज़ारों अँग्रेज़ तलवार की घाट उतार दिये गये थे। जो बच रहे थे उनको अपनी जान बचाना मुश्किल हो रहा था। आख़िर अँग्रेज़ों की सेनाएँ विद्रोहियों का सामना करने चलीं। गोरखों और सिक्खों ने भी उनको बड़ी सहायता दी। ७ अगस्त को निकलसन ने दिल्ली घेर लिया। महीने भर के अन्दर दिल्ली पर उसका अधिकार हो गया। बहादुर शाह को क़ैद करके रंगून भेज दिया गया। उसके लड़के और पोते मार डाले गये। इस विजय से अँग्रेज़ों का साहस बढ़ गया। उधर इलाहाबाद से जनरल हैवलक कानपुर पहुँचा। उसने नाना साहब को हराया। नाना साहब जंगल में भाग गया और फिर उसका पता न लगा। उसके बाद अँग्रेज़ों ने लखनऊ और बरेली पर भी अधिकार कर लिया।

इसी समय सर ह्यू रोज़ ने मध्यप्रदेश पहुँच कर रानी का



लखनऊ की रेजीडेन्सी (गदर से पहले)

पीछा करना शुरू किया। रानी विद्रोहियों के नेता तांतिया टोपी

से मिल गई थीं। रोज़ ने कूंच के स्थान पर दोनों को हराया। तान्तिया टोपी पकड़ लिया गया और फाँसी पर लटका दिया गया। रानी बहादुरी से लड़ती हुई मारी गई। १८५६ ई० तक चारों ओर शान्ति स्थापित हो गई।



कानपुर का कुआँ

कम्पनी का अन्त—ग़दर का अन्त होते ही कम्पनी का भी अन्त हो गया। भारत का शासन कम्पनी के हाथ से ले लिया गया। महारानी विक्टोरिया भारत की राजराजेश्वरी हो गईं। इस समय से भारत के गवर्नर-जनरल को वाइसराय की भी उपाधि दी गई।

प्रश्न

१—१८५७ ई० के ग़दर के क्या कारण थे? संक्षेप में लिखो।

२—ग़दर का कुछ थोड़ा सा हाल लिखो और बताओ कि यह किस प्रकार दबा दिया गया।

अध्याय २६

भारत का पहला वाइसराय

लार्ड कैनिंग (१८६२ ई० तक)

लार्ड कैनिंग का स्वभाव—लार्ड कैनिंग अब गवर्नर-जनरल से वाइसराय कहलाने लगा। वह बड़ा शान्ति स्वभाव और न्यायप्रिय व्यक्ति था। विद्रोह तो दमन कर दिया गया था ; परन्तु बदला लेने की अग्नि अँग्रेज़ों के हृदय में भभक रही थी। उन लोगों ने बहुतेरा दुन्द मचाया कि हिन्दुस्तानियों को विद्रोह का मज़ा चखा दिया जावे ; पर कैनिंग ने एक न सुनी। उसने कहा कि मैं न्याय से ही काम लूँगा। ऐसा राक्षसी काम कदापि न होने दूँगा। किया भी उसने ऐसा ही। निस्सन्देह कैनिंग का यह काम अत्यन्त सराहनीय है और उसकी सज्जनता, योग्यता और बुद्धिमानी का परिचय देता है।

महारानी विक्टोरिया की घोषणा—१ नवम्बर १८५८ ई० को महारानी विक्टोरिया ने एक घोषणा की जो भारत के मुख्य मुख्य स्थानों में पढ़कर सुनाई गई। इस घोषणा में महारानी ने प्रेमपूर्ण शब्दों में भारतीय प्रजा को सम्बोधन करके कहा कि अँग्रेज़ों का उद्देश्य भारतीयों को ईसाई बनाने का नहीं है। किसी के धर्म में आक्षेप न किया जायेगा। हर स्त्री-पुरुष को धर्म के

मामले में पूर्ण स्वतन्त्रता है। जाति, वर्ण अथवा रंग का भी कोई भेद-भाव नहीं रक्खा जायगा। सारी प्रजा के साथ समानता का व्यवहार किया जायगा। हर मनुष्य को उसकी योग्यता के अनुसार सरकारी ओहदे और अधिकार दिये जा सकेंगे। इस घोषणा में महारानी ने देशी नरेशों को भी विश्वास दिलाया कि डलहौज़ी की नीति का पालन नहीं किया जायगा। उनको गोद लेने का पूर्ण अधिकार है। उनकी मान मर्यादा, अधिकार और प्रतिष्ठा का सदा ध्यान रक्खा जायगा। भारत का शासन अब इंगलैंड की सरकार के हाथ में होगा : परन्तु कम्पनी ने जो देशी नरेशों से सन्धियाँ की हैं, उनका पालन किया जायगा।



महारानी विक्टोरिया

महारानी की इस घोषणा का बड़ा प्रभाव पड़ा। अब लोगों को अँग्रेज़ों पर विश्वास होने लगा। वे विक्टोरिया को अपनी

महारानी समझने लगे। उनको विश्वास हो गया कि महारानी को प्रजा के हित-अनहित और सुख-दुख का भी ध्यान है।

कैनिंग के समय में सुधार—कैनिंग के समय में भी भारत में बहुत से सुधार किये गये। सबसे पहले क़ानून का सुधार हुआ। क़ानून की साफ़ साफ़ व्याख्या कर दी गई। लार्ड मेकाले ने ज़ाब्ता दीवानी और ज़ाब्ता फ़ौज़दारी के क़ानून बनाये। उनके अनुसार काम होने लगा। कम्पनी की सदर अदालतें तोड़ दी गईं और उनकी जगह कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में हाई कोर्ट खुले। लगान का भी क़ानून पास हुआ जिससे १२ वर्ष तक एक खेत जोतने वाला कृषक मौरूसी हक़दार कर दिया गया। शिक्षा-प्रचार में भी बड़ी उन्नति हुई। कलकत्ता, बम्बई और मद्रास में यूनिवर्सिटियाँ खोली गईं। कुछ समय बाद लाहौर और इलाहाबाद में भी यूनिवर्सिटियाँ स्थापित की गईं।

कैनिंग ने सेना-सुधार की ओर विशेष ध्यान दिया क्योंकि विद्रोह के समय सेना में ख़राबियाँ होने के कारण बड़ी हानि हुई थी। इस समय दो प्रकार की सेनाएँ थीं, एक तो कम्पनी की और दूसरी महारानी विक्टोरिया की। कैनिंग ने दोनों सेनाओं को एक कर दिया। भारतवासी सैनिकों की संख्या कम कर दी गई। अँग्रेज़ अफ़सरों के अधिकार बढ़ा दिये गये। उनकी शिक्षा का भी पूरा प्रबन्ध किया गया।

इंडियन कौंसिल्स एक्ट (१८६१)—पार्लियामेन्ट ने १८६१ ई० में भारत की शासन व्यवस्था सुधारने के लिए एक क़ानून बनाया जो इंडियन कौंसिल्स एक्ट कहलाता है। इसके अनुसार बम्बई और मद्रास की प्रेसिडेन्सियाँ अपने प्रान्त के शासन के

लिए क़ानून बना सकती थीं। वाइसराय की व्यवस्थापिक सभा में भी कुछ परिवर्तन कर दिया गया। इसमें आधे गैर सरकारी मेम्बर होने लगे। हिन्दुस्तानी लोग भी इसके मेम्बर होकर अपने देश की उन्नति के लिए क़ानून बना सकते थे। इस प्रकार सरकार देश के मामलों में देश के प्रतिनिधियों से भी सलाह लेने लगी।

लार्ड कैनिंग ने बड़े परिश्रम से भारत का शासन किया था। अब उसका स्वास्थ्य बिगड़ चला। १८६२ ई० में वह इंगलैण्ड को लौट गया।

प्रश्न

१—महारानी विक्टोरिया ने क्या घोषणा की? इसका भारतवासियों पर क्या प्रभाव पड़ा?

२—लार्ड कैनिंग ने क्या क्या सुधार किये? विस्तार पूर्वक लिखो।

अध्याय २७

लार्ड एल्गिन और लार्ड लारेन्स

लार्ड एल्गिन—(१८६२—६३) लार्ड कैनिंग के बाद लार्ड एल्गिन भारत का वाइसराय नियुक्त किया गया। उसके समय में कोई विशेष घटना नहीं हुई। पश्चिमी सीमा के पास वहाबियों ने विद्रोह किया; पर वह दबा दिया गया। १८६३ ई० में लार्ड एल्गिन की मृत्यु हो गई।

लार्ड लारेन्स—(१८६३—१८६६ ई०) एल्गिन के बाद लार्ड लारेन्स वाइसराय हुआ। वह पहले पंजाब का गवर्नर रह चुका था। वहाँ पर उसने ग़दर के दिनों में अपनी योग्यता से पूर्ण शान्ति रक्खी थी। वह लार्ड कैनिंग के सुधार के काम को जारी रखना चाहता था और उसी की नीति का अनुसरण करना चाहता था; पर एक घटना ऐसी हुई कि शीघ्र ही उसे सीमा प्रान्त की ओर ध्यान देना पड़ा।

अफ़ग़ानिस्तान—१८६३ ई० में अफ़ग़ानिस्तान के अमीर दोस्त मुहम्मद की मृत्यु हो गई। उसके लड़कों में गद्दी के लिए झगड़ा होने लगा। लारेन्स ने इन झगड़ों में कोई भाग न लिया। वास्तव में वह इसके प्रतिकूल कर नहीं सकता था। क्योंकि रूस की शक्ति बराबर बढ़ती जा रही थी। ऐसी दशा में अफ़ग़ानों से झगड़ा मोल लेना उचित न था। लारेन्स संतोष किये बैठा रहा। जब शेरअली विजयी होकर सिंहासन पर बैठ गया तब उसने उसको अमीर मान लिया और उससे मित्रता कर ली।



आगरा में लार्ड लारेंस के दरबार में भारतीय नरेश

लारेन्स की यह नीति ठीक न थी। अफ़ग़ानी लोग उससे नाराज़ हो गये। वे समझने लगे कि अँग्रेज़ लोगों में स्वार्थ कूट कूट कर भरा हुआ है।

भूटान—उत्तर पूर्व की सीमा की ओर भूटान में भी एक झगड़ा हो गया। भूटान के राजा ने अँग्रेज़ी राजदूत का अपमान किया था और कुछ आदमियों को कैद भी कर लिया था। लारेन्स ने एक सेना उससे लड़ने को भेजी। राजा हार गया और उसने सन्धि कर ली। क़ैदी लोग मुक्त कर दिये गये।

उड़ीसा का अकाल—१८६५—६६ ई० में वर्षा न होने के कारण उड़ीसा में एक बहुत बड़ा दुर्भिक्ष पड़ा। लाखों आदमी इस अकाल में मर गये। सरकार की ओर से कोई सहायता न पहुँच सकी क्योंकि रेल आदि का ठीक प्रबन्ध न था। इस अकाल को देख कर सरकार ने नहरें, सड़कें आदि बनवाना शुरू कर दिया जिससे भविष्य में ऐसी दुर्घटना न हो। अकाल के कारणों की जाँच करने के लिए एक कमेटी भी बैठी। 'फ़ेमिन इन्स्योरेंस फ़न्ड' भी खोला गया जिससे ऐसे अवसर पर धन से सहायता की जा सके।

दर्बार—लार्ड लारेन्स ने १८६६ ई० में आगरा में दर्बार किया और भारतीय नरेशों को विश्वास दिलाया कि सरकार उनसे मित्रता का व्यवहार रखना चाहती है।

१८६६ ई० में लार्ड लारेन्स इंगलैण्ड चला गया। उसकी जगह लार्ड मेयो वाइसराय नियुक्त किया गया।

प्रश्न

लार्ड लारेन्स के विषय में तुम क्या जानते हो ? संक्षेप में लिखो।

अध्याय २८

लार्ड मेयो

(१८६९–१८७२ ई०)

लार्ड मेयो आयरलैण्ड का रहने वाला था। उसने देश की दशा सुधारने का बड़ा उद्योग किया। खेती का एक नया महकमा खोला जिसका काम खेती की उन्नति करना था। मेयो ने सरकार की आर्थिक दशा भी सुधारने का प्रयत्न किया भिन्न भिन्न महकमों की कड़ी देख-रेख की गई। उनमें अपव्यय रोका गया। कुछ टैक्स भी बढ़ा दिये गये। इससे सरकार की आमदनी बढ़ गई।



लार्ड मेयो

शासन-प्रबंध—लार्ड मेयो ने १८७० ई० में शासन प्रबंध में बड़ा सुधार किया। उसने यह नियम कर दिया कि हर एक प्रान्त की

आमदनी उसी प्रान्त में रहे। उसमें से एक नियत रक़म प्रान्तीय सरकार बिना वाइसराय की आज्ञा लिये हुए ५ साल तक खर्च कर सकती है। जेलखाना, पुलिस और सड़कों की देख-रेख आदि के महकमे भी प्रान्तीय सरकार को सौंप दिये गये। इससे बड़ी सुविधा हो गई। बड़ी सुगमता से काम होने लगा और खूब उन्नति होने लगी।

लार्ड मेयो की नीति—लार्ड मेयो ने भारत में आते ही अम्बाला में एक दर्बार किया। इसमें अफ़ग़ानिस्तान का शासक शेरअली भी आया। वाइसराय ने उसका बड़ा आदर-सत्कार किया। दोनों में मित्रता हो गई।

देशी नरेशों के शासन की ओर भी लार्ड मेयो ने बहुत ध्यान दिया। अलवर राज्य में राजा के अत्याचारों से प्रजा बहुत दुःखी थी। लार्ड मेयो ने एक कौंसिल नियुक्त कर दी और राजा के सब अधिकार छीन कर उस कौंसिल को सौंप दिये।

मेयो ने राजकुमारों की शिक्षा के लिए अजमेर में एक कालेज स्थापित किया जो 'मेयो कालेज' कहलाता है। यहाँ पर बड़े बड़े सरदारों के लड़कों को भी शिक्षा दी जाती है जिससे वे लोग अपनी रियासतों का उचित प्रबन्ध कर सकें।

ड्यूक आफ़ एडिनबरा का आगमन—१८६६ ई० में महारानी विक्टोरिया के द्वितीय पुत्र ड्यूक आफ़ एडिनबरा ने भारतवर्ष में पदार्पण किया। भारतीय प्रजा ने बड़ी प्रसन्नता से उनका स्वागत किया। जगह जगह उत्सव मनाये गये। उनके आने से भारत सरकार और देशी नरेशों में और भी मित्रता बढ़ गई।

लार्ड मेयो की मृत्यु—१८७२ ई० में लार्ड मेयो अन्डमन द्वीप में क़ैदियों की दशा देखने गया हुआ था। वहाँ दुर्भाग्यवश एक पठान क़ैदी ने उसे मार डाला।

प्रश्न

१—लार्ड मेयो ने शासन प्रबंध में क्या सुधार किया? उसका क्या फल हुआ?

२—लार्ड मेयो की नीति क्या थी?

३—लार्ड मेयो के समय में क्या क्या विशेष घटना हुई।

अध्याय २९

लार्ड नार्थब्रुक

(१८७२—१८७६ ई०)

१८७२ ई० में लार्ड नार्थब्रुक भारत का वाइसराय बना कर भेजा गया। व्यापार और अर्थ सम्बन्धी मामलों में इसे बड़ी रुचि थी। इसने मेयो का कार्य जारी रक्खा और आर्थिक दशा सुधारने का प्रयत्न किया।



लार्ड नार्थ ब्रुक

लार्ड नार्थब्रुक स्वतंत्र व्यापार की नीति का अनुयायी था। उसने बाहर से आने वाले माल पर चुंगी लगाई। इस का इंगलैंड के व्यापारियों ने विरोध किया; पर इसने किसी की न सुनी। गेहूँ पर से भी चुंगी हटा ली गई। अब गेहूँ बाहर को जाने लगा। इसके समय में बिहार में

अकाल पड़ा ; किन्तु प्रबन्ध ऐसा उचित था कि प्रकोप बढ़ नहीं सका।

बड़ौदा—बड़ौदा में गायकवाड़ का शासन बहुत ख़राब था। वहाँ अँग्रेज़ी रेज़ीडेन्ट कर्नल फ़ेरे मार डाला गया था। लार्ड नार्थब्रुक ने वहाँ की जाँच करने के लिए एक कमीशन बैठाया जिसमें महाराजा जयपुर और महाराजा ग्वालियर भी थे। राजा गद्दी से उतार दिया गया और उसकी जगह उसका एक सम्बन्धी गद्दी पर बिठाल दिया गया।

युवराज का आगमन—१८७५ ई० में युवराज जो बाद में एडवर्ड सप्तम कहलाये भारत में आये। बड़ी धूमधाम से उनका स्वागत किया गया। कलकत्ते में एक बड़ा दर्बार हुआ जिसमें बड़े बड़े राजा महाराजा और सरदार लोग युवराज का सम्मान करने के लिए इकट्ठे हुए।

अफ़ग़ानिस्तान—अफ़ग़ानिस्तान से नार्थब्रुक का वही सम्बन्ध था जो लार्ड लारेन्स का रहा था। इस समय रूस ने खीवा पर आक्रमण किया। इससे भयभीत होकर अमीर ने अँग्रेज़ों से सहायता माँगी। लार्ड नार्थब्रुक ने सहायता देना अस्वीकार कर दिया। इस पर इंगलैंड से नये भारत-सचिव लार्ड सैलिसबरी ने वाइसराय को लिखा कि अफ़ग़ानिस्तान की रक्षा का भार अँग्रेज़ों के हाथ में ले लिया जावे और वहाँ एक रेज़ीडेन्ट रख दिया जाय। नार्थब्रुक इस नीति से सहमत न हुआ। वह अपना पद त्याग करके इंगलैंड चला गया।

प्रश्न

[illegible] नार्थब्रुक के विषय में तुम क्या जानते हो ? संक्षेप में लिखो।

अध्याय ३०

लार्ड लिटन

(१८७६-१८८० ई०)

सन् १८७६ ई० में लार्ड लिटन वाइसराय होकर आया। वास्तव में उसमें शासन करने की अथवा राजनैतिक मामलों के समझने की योग्यता न थी; परन्तु इङ्गलैंड के प्रधान सचिव लार्ड डिज़रेली के कहने से वह भेजा गया।



लार्ड लिटन

अफ़ग़ानिस्तान—लार्ड लिटन को भारत में आते ही अफ़ग़ानों से निपटना पड़ा। वह अफ़ग़ानिस्तान के अमीर से सन्धि करना चाहता था। अमीर भी सन्धि करने के लिए तय्यार था; किन्तु अमीर अँग्रेज़ों का किसी प्रकार का भी दबाव नहीं सह सकता

था और न अपने यहाँ अँग्रेज़ी रेज़ीडेन्ट ही रखने को तय्यार था। इसी समय अँग्रेज़ों ने क्वेटा पर अधिकार कर लिया। क्वेटा ले लेने से अँग्रेज़ों को बोलन दर्रे के द्वारा कन्दहार पर आक्रमण करना सहल हो गया। अमीर शेर अली इस से चिढ़ गया। उसने रूस से मित्रता करनी शुरू कर दी। रूस से एक राज-दूत उसके दर्बार में आया जिसका बड़ा आदर सत्कार किया गया। लार्ड लिटन ने भी एक दूत उसके दर्बार में भेजा पर उसे अफ़ग़ानियों ने दर्रे खैबर में हो कर निलकने ही न दिया। रूस और अफ़ग़ानिस्तान की मित्रता हो जानेसे अँग्रेज़ों को पश्चिमोत्तर की ओर से डर हो गया। इसलिए लार्ड लिटन को लड़ाई की घोषणा करनी पड़ी।

अफ़ग़ानों की दूसरी लड़ाई—१८७८ ई० में लार्ड लिटन ने अफ़ग़ानिस्तान में फ़ौजें भेजीं। शेर अली अपना देश छोड़ कर तुर्किस्तान भाग गया। जलालाबाद और कन्दहार पर अँग्रेज़ों का अधिकार हो गया। १८७६ ई० में शेर अली के बड़े लड़के याकूब ख़ाँ ने गंडमक के स्थान पर अँग्रेज़ों से सन्धि कर ली। उसके दर्बार में एक अँग्रेज़ी रेज़ीडेन्ट रख दिया गया। अफ़ग़ानिस्तान की विदेशी नीति अँग्रेज़ों के हाथ में आ गई। अँग्रेज़ों के राज्य में उत्तर-पश्चिम के दर्रे भी सम्मिलित कर लिये गये। क्वेटा में अँग्रेज़ों की एक छावनी बन गई।

अफ़ग़ानियों को बस में रखना सहल न था। वे बड़े उद्दण्ड और लड़ाके थे। कुछ ही दिनों के बाद उन्होंने अँग्रेज़ी रेज़ीडेन्ट और उसके साथियों को मार डाला। इस पर फिर लड़ाई छिड़ गई।

१८७६ ई० में फिर सेना भेजी गई। क़न्दहार पर अधिकार कर लिया गया। याक़ूब ख़ाँ ने हथियार रख दिये। काबुल भी जीत लिया गया। लार्ड लिटन अफ़ग़ानिस्तान को टुकड़ों में विभाजित करना चाहता था; पर उसकी एक न चली। इंगलैंड की सरकार ने उसकी नीति पसन्द न की और उसको त्याग-पत्र देना पड़ा।

लार्ड लिटन के शासन काल में प्रजा अथवा सरकार किसी को भी विशेष लाभ नहीं हुआ। उसके समय में दक्षिण में अकाल पड़ा। लिटन ने भूखों को सहायता पहुँचाने का बहुत कुछ प्रबन्ध किया। लगभग एक करोड़ पौण्ड खर्च हुआ। फ़ेमिन कमीशन भी बैठाला गया; परन्तु दुर्भिक्ष का प्रकोप न घटा। ५० लाख के करीब आदमी मर गये।

लार्ड लिटन ने एक काम ऐसा किया जिसके कारण प्रजा उससे बड़ी असन्तुष्ट हो गई। उसने एक क़ानून पास किया जो 'वर्नाक्युलर प्रेस ऐक्ट' कहलाता है। इससे देशी समाचार पत्रों की स्वतन्त्रता छिन गई।

दिल्ली दर्बार—१८७७ ई० में लार्ड लिटन ने दिल्ली में एक दर्बार किया जिसमें बड़े बड़े राजा महाराजा इकट्ठे हुए। इसमें महारानी विक्टोरिया के क़ैसरे हिन्द की उपाधि धारण करने की घोषणा की गई। सब लोगों ने उसे भारत की साम्राज्ञी स्वीकार किया। इसी साल लार्ड लिटन द्वारा अलीगढ़ में सर सैयद अहमदख़ाँ के प्रयत्न से एक कालेज खोला गया जिससे अब मुस्लिम यूनिवर्सिटी बनी है।



सर सैय्यद अहमद ख़ाँ

१८८० ई० में लार्ड लिटन इंगलैंड चला गया और लार्ड रिपन उसकी जगह पर भेजा गया।



मुसलिम युनिवर्सिटी

प्रश्न

१—लार्ड लिटन ने अफ़ग़ानिस्तान के प्रति कौन सी नीति का अवलम्बन किया? इसका क्या फल हुआ?

२—अफ़ग़ानिस्तान की दूसरी लड़ाई के क्या कारण थे? संक्षेप में लिखो।

३—लार्ड लिटन के शासनकाल का वर्णन करो।

४—वर्नाक्युलर प्रेस ऐक्ट और दिल्ली दर्बार पर संक्षेप में नोट लिखो।

५—मुसलिम युनीवर्सिटी का संस्थापक कौन था?

अध्याय ३१

लार्ड रिपन

(१८८०-१८८४ ई०)

लार्ड रिपन इंगलैंड के उदार-दल का मेम्बर था। इसलिए उसने भारत में भी उदार शासन की नीति पर काम किया। उसको भारतवासियों से सहानुभूति थी। वह ऐसे शासन की नींव डालना चाहता था जिसमें भारतवासी भी भाग ले सकें। इस उद्देश्य को पूरा करने के लिए उसने कई कानून बनाये।



लार्ड रिपन

अफ़ग़ान युद्ध का अन्त— अभी तक अफ़ग़ागिस्तान में शान्ति स्थापित नहीं हुई थी। इसलिए भारत में सुधार करने से पहले अफ़ग़ानिस्तान का प्रबन्ध करना आवश्यक था। शेर अली मर चुका था। लार्ड रिपन ने १८८० ई० में उसके भतीजे अब्दुल रहमान ख़ाँ को अमीर स्वीकार कर

लिया और विश्वास दिलाया कि समय पड़ने पर भारत सरकार उसे सहायता देगी। इसके बाद अँग्रेज़ी सेनाएँ अफ़ग़ानिस्तान से लौटा ली गईं। दोनों देशों में मित्रता हो गई।

रिपन के सुधार—प्रेस की स्वतन्त्रता—लार्ड रिपन ने लिटन के पास किये हुए वर्नाक्युलर प्रेस ऐक्ट को रद्द करके प्रेस को पूर्ण स्वतन्त्रता दे दी। अब भारतवासी निश्शंक हो कर अपने लेख समाचार-पत्रों में प्रकाशित करा सकते थे परंतु ऐसा करने में यदि वे किसी क़ानून के प्रतिकूल चलते तो उनको दण्ड अवश्य मिलता।

शिक्षा की उन्नति—रिपन के समय तक प्रारम्भिक शिक्षा का कोई उचित प्रबन्ध न था। उसने एक 'कमीशन' द्वारा जाँच कराकर बहुत से स्कूल और पाठशालाएँ खोलीं जिनको सरकार से सहायता मिलने लगी।

स्थानीय स्वराज्य—१८८२-८३ ई० में रिपन ने ऐसे कई क़ानून पास किये जिनसे भारतवासियों को स्थानीय स्वराज्य के बहुत अधिकार मिले। म्यूनिसिपैलिटियों के अधिकार बढ़ा दिये गये उनको आंतरिक प्रबन्ध की स्वतन्त्रता दे दी गई। तहसीलों में लोकल बोर्ड स्थापित किये गये। देहात की सफ़ाई, शिक्षा आदि का प्रबन्ध डिस्ट्रिक्ट बोर्डों के हाथ में दे दिया गया। सरकार की ओर से धन की भी सहायता की गई। इन सुधारों से समाज पर बड़ा अच्छा प्रभाव पड़ा।

देशी राज्य—रिपन ने देशी राज्यों से सदा मित्रता का व्यवहार किया। उनके मामलों में उसने कभी हस्तक्षेप नहीं किया। मैसूर का राजा उसके समय में बालिग हो गया था।

अतः उसका राज्य जो १८३१ ई० से अँग्रेज़ों के हाथ में चला गया था उसे लौटाल दिया गया।

इलबर्ट बिल—लार्ड रिपन ने अपने उदार चरित्र और सुधारों से थोड़े ही समय में भारतवासियों को अपने बस में कर लिया। वह बहुत अच्छा वाइसराय था और प्रजा उसे बहुत चाहती थी। उसका व्यवहार सब के साथ एक साँ था। उसने यह भी कोशिश की कि अदालतों में हिन्दुस्तानियों और अँग्रेज़ों के साथ समान व्यवहार होने लगे और अपने क़ानूनी सदस्य इलबर्ट से एक मसविदा बनवाया कि हिन्दुस्तानी मैजिस्ट्रेट अँग्रेज़ अपराधियों का भी फ़ैसला कर सकें; यह क़ानून इलबर्ट बिल कहलाता है। इङ्गलैण्ड में इसका बड़ा विरोध हुआ और यह पास न हो सका। अन्त में यह तय हुआ कि हिन्दुस्तानी मैजिस्ट्रेट अँग्रेज़ जूरी की सहायता से गोरे अपराधियों का मुक़दमा कर सकते हैं।

१८८४ ई० में लार्ड रिपन विलायत को लौट गया। उसकी जगह लार्ड डफ़रिन वाइसराय नियुक्त हुआ।

प्रश्न

१—लार्ड रिपन ने क्या क्या सुधार किये? संक्षेप में लिखो।

२—स्थानीय स्वराज्य किसे कहते हैं? इससे भारतवासियों को क्या लाभ हुआ?

अध्याय ३२

लार्ड डफ़रिन

(१८८४ ई० से १८८८ ई० तक)

लार्ड डफ़रिन भी रिपन की तरह बड़ा योग्य शासक था। उसे अनुभव भी बहुत था क्योंकि वह कनाडा का गवर्नर रह चुका था। वह टर्की, मिश्र, श्याम आदि देशों में भी रहा था और इसलिए एशिया के रहने वालों के स्वभाव से भली भाँति परिचित था। उसके समय में बंगाल, अवध और पंजाब के किसानों के अधिकारों की रक्षा के लिए कई क़ानून पास किये गये।



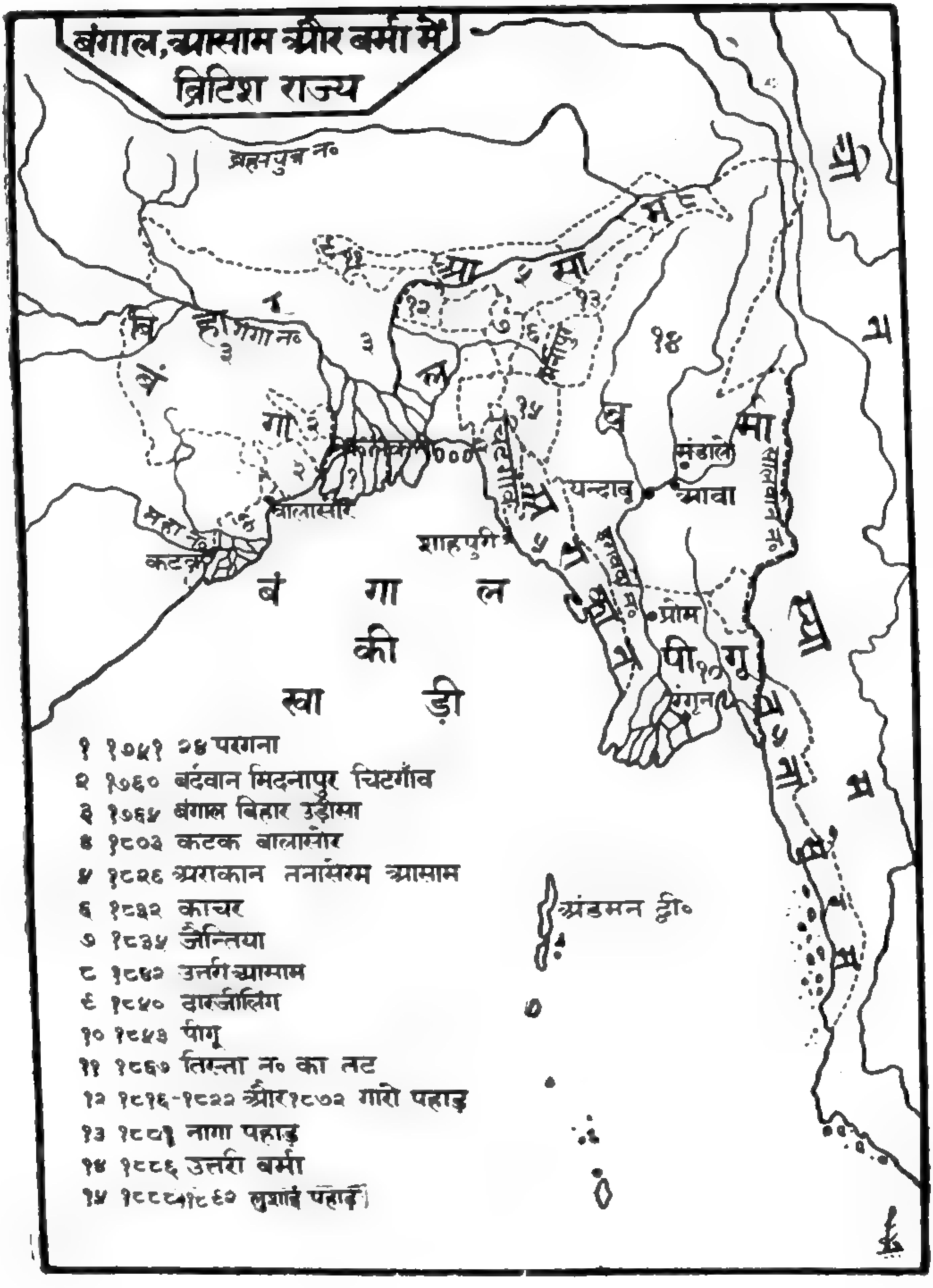
लार्ड डफ़रिन

पञ्जदेह की घटना—१८८५ ई० में रूस की सेना और अफ़ग़ानिस्तान की सेना से पञ्जदेह के स्थान पर मुठभेड़ हो

गई। रूस की शक्ति इस समय बहुत बढ़ी हुई थी। उसने अपनी सीमा भी बहुत बढ़ा ली थी। रूस की सेना ने पञ्जदेह पर अधिकार कर लिया और अफ़ग़ानियों को वहाँ से निकाल दिया। यह देख कर लार्ड डफ़रिन अफ़ग़ानिस्तान की सहायता के लिए उद्यत हो गया; परन्तु लड़ाई की नौबत न आई। आसानी से झगड़ा तय हो गया। रूस और अफ़ग़ानिस्तान के बीच की सीमा नियत हो गई। इस घटना से भारत सरकार और अफ़ग़ानिस्तान के बीच घनिष्ठता बढ़ गई।

ब्रह्मा की तीसरी लड़ाई—१८८५ ई० में लार्ड डफ़रिन को ब्रह्मा से भी लड़ाई लड़नी पड़ी। कारण यह था कि ब्रह्मा के राजा थीबो ने फ्रांस से मित्रता कर ली थी। ब्रह्मा के राजा को लिखा गया कि फ्रांस से अपना सम्बन्ध विच्छेद कर ले। उसने उस पर कुछ ध्यान न दिया; उलटा 'बम्बई—ब्रह्मा की व्यापारिक कम्पनी' पर जुर्माना कर दिया। इस पर युद्ध आरम्भ हो गया। अँग्रेज़ी सेना ने थीबो की राजधानी माण्डले पर अधिकार कर लिया। राजा क़ैद करके भारत भेज दिया गया और उत्तरी ब्रह्मा अँग्रेज़ी राज्य में मिला लिया गया। ब्रह्मा को अँग्रेज़ी राज्य में मिलाने से अँग्रेज़ों के राज्य-विस्तार की नीति का अन्त हो गया क्योंकि अब भारत में कोई ऐसा प्रदेश न था जो उनके अधीन न हो।

देशी नरेश—देशी राजाओं से लार्ड डफ़रिन ने वही व्यवहार किया जो रिपन ने किया था। उसने ग्वालियर का क़िला सिन्धिया को लौटा दिया। मोरार भी सिन्धिया को दे दिया गया और इसके बदले में अँग्रेज़ों को झाँसी का प्रान्त मिल गया। इससे देशी नरेशों के दिल में अँग्रेज़ों के प्रति श्रद्धा बढ़ गई।



बंगाल, आसाम और बर्मा में
ब्रिटिश राज्य
ब्रह्मपुत्र न०
आ ८ सा म
बि हा र
गंगा न०
बं गा
चिटगाँव
बालासोर
महा नदी
कटक
शाहपुरी
यन्दाबू
मंडाले
आवा
प्रोम
पी गू
रंगून
बं गा ल
की
खा ड़ी
अंडमन द्वी०
१ १७५७ २४ परगना
२ १७६० बर्दवान मिदनापुर चिटगाँव
३ १७६५ बंगाल बिहार उड़ीसा
४ १८०३ कटक बालासोर
५ १८२६ अराकान तनासरम आसाम
६ १८३२ काचर
७ १८३५ जैन्तिया
८ १८४२ उत्तरी आसाम
९ १८५० दार्जलिंग
१० १८५३ पीगू
११ १८६७ तिस्ता न० का तट
१२ १८१६-१८२२ और १८७२ गारो पहाड़
१३ १८८१ नागा पहाड़
१४ १८८६ उत्तरी बर्मा
१५ १८८८-१८९० लुशाई पहाड़

कांग्रेस—डफ़रिन के समय का सबसे महत्वपूर्ण कार्य था १८८५ ई० में इंडियन नेशनल कांग्रेस का स्थापित होना; जिसने राष्ट्रीय आन्दोलन का बीज बो दिया। कांग्रेस का विस्तारपूर्वक वर्णन हम आगे चलकर करेंगे; परन्तु इतना जानना लाभदायक होगा कि इस संस्था को मिस्टर ए० ओ०



ए० ओ० ह्यूम

ह्यूम ने स्थापित किया था और इसका उद्देश्य था जनता की आवाज़ को सरकार के कानों तक पहुँचाना। माननीय दादा भाई नौराज़ी के उद्योग से कांग्रेस का पहला अधिवेशन उमेशचन्द्र बनर्जी के सभापतित्व में १८८५ ई० में बम्बई में हुआ। लार्ड डफरिन १८८८ ई० में विलायत को चला गया। इसके समय में भारत-वासियों ने बड़ी उन्नति की।

स्त्री चिकित्सा—इसके समय में स्त्री चिकित्सा की ओर विशेष ध्यान दिया गया। इस के लिए एक कोष खोला गया जो 'लेडी डफरिन फ़न्ड' कहलाता था।



दादा भाई नौरोज़ी

महारानी विक्टोरिया की जुबिली—इसी के समय में महारानी विक्टोरिया ने १८८७ ई० में अपने शासन का ५० वाँ साल पूरा किया था। भारत में भी महारानी की जुबिली बड़ी धूमधाम से मनाई गई।

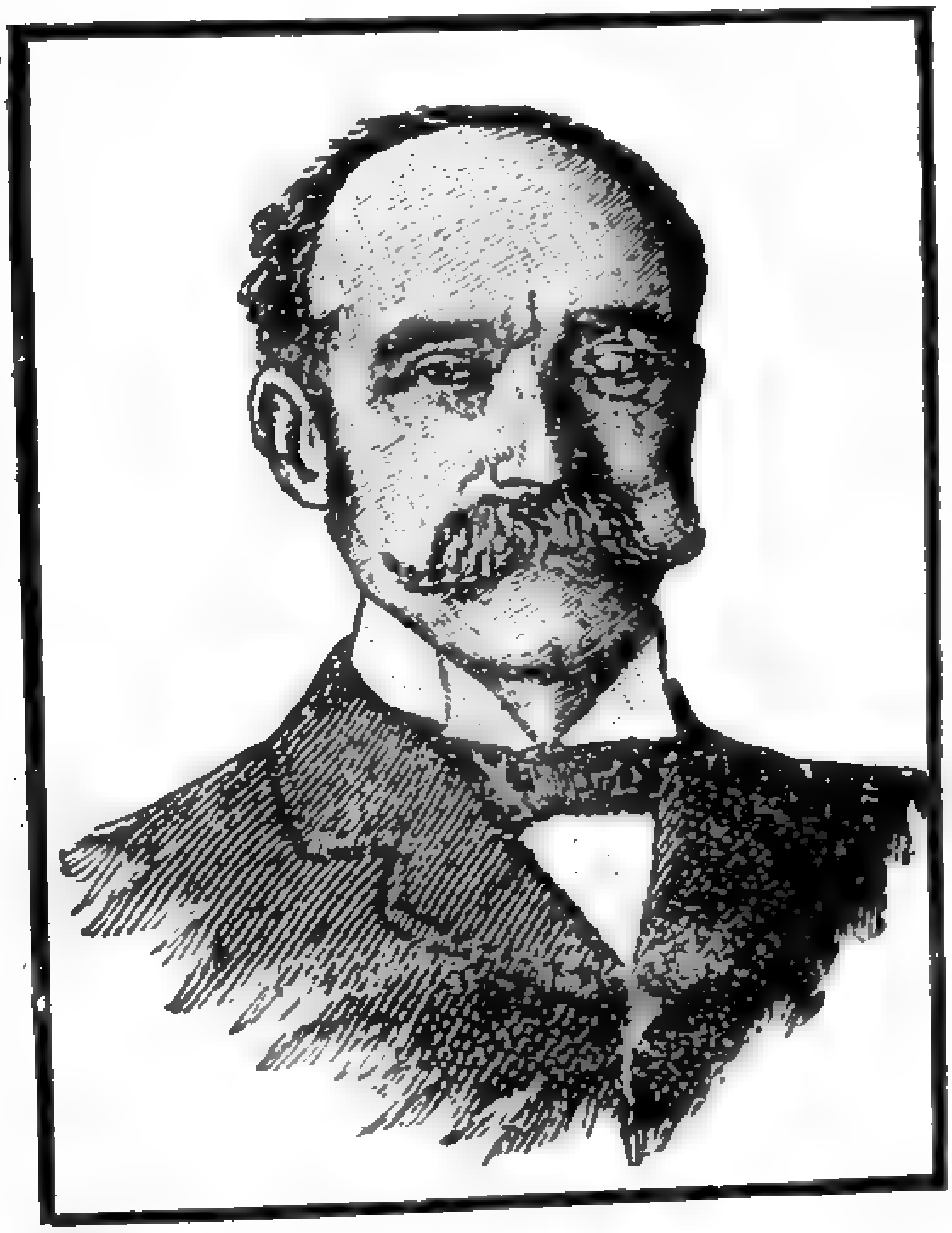
प्रश्न

लार्ड डफरिन को बर्मा से क्यों लड़ना पड़ा? लड़ाई का क्या परिणाम हुआ?

अध्याय ३३

लार्ड लैन्सडौन और लार्ड एल्गिन

लार्ड लैन्सडौन—(१८८८—१८९४) लार्ड डफरिन के बाद लार्ड लैन्सडौन वाइसराय हुआ। इसके समय में देश में शान्ति रही और कोई विशेष घटना नहीं हुई। इसका ध्यान विशेष कर पश्चिमोत्तर के सीमा प्रान्तों की रक्षा करने की ओर था। इसने बिलोचिस्तान की एक अलग रियासत कर दी। क़िलात के ख़ाँ के साथ सन्धि करके पहाड़ी दर्रों में चमन तक रेल निकाली और सड़कें बनवाईं जिससे फ़ौज भेजने में आसानी हो। इस प्रकार भारत की पश्चिमोत्तर सीमा ख़ूब सुरक्षित हो गई और अँग्रेज़ लोग अफ़ग़ानिस्तान की सारी सीमा पर देख-रेख कर सकते थे।



लार्ड लैन्सडौन

मनीपुर के राजा से लड़ाई—१८६०–६१ ई० में वाइसराय को मनीपुर के राजा से लड़ने के लिए सेना भेजनी पड़ी। मनीपुर आसाम में एक छोटी सी रियासत है। यहाँ पर राजगद्दी के लिए झगड़ा हुआ था। अँग्रेज़ों के हस्तक्षेप करने पर कई अँग्रेज़ी अफ़सर मार डाले गये। अन्त में मनीपुर का राजा हार गया और एक बालक गद्दी पर बैठाया गया। एक अँग्रेज़ी अफ़सर उसकी देख रेख के लिये रख दिया गया।

इंडियन कौंसिल ऐक्ट १८९२—१८६२ ई० में इंगलैंड की पर्लियामेंट में एक क़ानून पास किया गया जिससे प्रान्तों की व्यवस्थापिका सभाओं के मेम्बर बढ़ा दिये गये। व्यापार मण्डल, यूनिवर्सिटी, म्यूनिसिपैलिटी और डिस्ट्रिक्ट बोर्ड को अपने प्रतिनिधि चुनकर कौंसिल में भेजने का अधिकार मिल गया। मेम्बरों को आय-व्यय के चिट्ठे पर बहस करने और सरकारी अफ़सरों से सवाल पूँछने का अधिकार भी दिया गया।

लार्ड एल्गिन द्वितीय (१८६४–१८६६) १८६४ ई० में भूतपूर्व गवर्नर-जनरल लार्ड एल्गिन का पुत्र एल्गिन द्वितीय वाइसराय बना कर भेजा गया। इसके समय में भारत पर बहुत सी दैवी आपत्तियाँ आईं। १८६६ ई० में बड़ा भयंकर प्लेग फैला और बहुत से आदमी इसमें नष्ट हुए। १८६७ ई० में संयुक्त प्रान्त, मध्य प्रदेश, बिहार और पंजाब में एक बड़ा अकाल पड़ा। सरकार ने इन आपत्तियों के रोकने का भरसक यत्न किया, परन्तु फिर भी बहुत से घर साफ़ हो गये।

पश्चिमोत्तरी सीमा—एल्गिन के समय में पश्चिमोत्तरी सीमा पर भी झगड़े हुए। पहाड़ी जातियों ने विद्रोह किया और

लूट-मार करना शुरू कर दिया। अफ़रीदियों ने खैबर का दर्रा ही बिल्कुल रोक लिया। मोहमन्दों ने पेशावर के आस पास धावा



लार्ड एल्गिन द्वितीय

कर दिया। आखिर वाइसराय को विद्रोह दमन करने के लिए सेना भेजनी पड़ी। तीराह के स्थान पर अफ़्रीदी हार गये। बड़ी मुश्किल से शान्ति स्थापित की गई।

१८९९ में लार्ड एलगिन द्वितीय इंगलैण्ड को लौट गया।

प्रश्न

१८९२ ई० के कौंसिल ऐक्ट से भारत वासियों को क्या अधिकार [illegible] मिले ? संक्षेप में लिखो।

अध्याय ३४

लार्ड कर्ज़न

(१८९९–१९०५)

१८९९ ई० में लार्ड कर्ज़न वाइसराय नियुक्त हुआ। इसको बहुत से देशों का अनुभव था। सारे एशिया के देशों में घूमने से और बड़े बड़े बादशाह और राजा-महाराजाओं से मिलने से इसे पूर्वीय देशों का पूरा पूरा ज्ञान हो गया था। भारत में भी वह चार बार आ चुका था और एक साल इण्डिया आफिस में भी रहा था। इसलिए भारतीय शासन के हर मामले से भली-भांति परिचित था। यह बड़ा योग्य बुद्धिमान और परिश्रमी था। इसने थोड़े समय के अन्दर ही हर महकमे में कुछ न कुछ सुधार किया। परन्तु यह लार्ड डलहौज़ी



लार्ड कर्ज़न

की तरह बड़ा उतावला था। इसके सुधारों का फल यह हुआ कि प्रजा में असन्तोष फैल गया।

अकाल—इसके आते ही भारत में फिर अकाल पड़ा। इसका ज़ोर गुजरात में अधिक था। इसने अकाल-पीड़ितों को बहुत सहायता पहुँचाई और हर प्रकार से उनके कष्ट निवारण का प्रयत्न किया।

विदेशी नीति—१९०१ ई० में अफ़ग़ानिस्तान का अमीर अब्दुरहमान मर गया। उसका लड़का हबीबुल्लाह गद्दी पर बैठा। लार्ड कर्ज़न ने उससे भी मित्रता कर ली। इसी समय तिब्बत का राजा रूस से मैत्री कर रहा था। कर्ज़न ने सेना भेज कर तिब्बत के राजा को रूस से सम्बन्ध तोड़ देने के लिए बाध्य किया। उसने सीमा प्रान्तों का भी उचित प्रबन्ध किया। पश्चिमोत्तर सीमा का एक नया प्रान्त बना दिया और वहाँ की जातियों को नौकर रख लिया। इस प्रकार कर्ज़न ने उत्तर-पश्चिम की सीमा पर शान्ति स्थापित कर दी।

दिल्ली दरबार—२२ जनवरी १९०१ ई० को महारानी विक्टोरिया का स्वर्गवास हो गया। उनका बड़ा लड़का एडवर्ड सप्तम गद्दी पर बैठा। १९०३ ई० में सम्राट् के राज्याभिषेक के उपलक्ष्य में दिल्ली में एक दर्बार किया। इसमें बहुत से राजा महाराजा और बड़े बड़े लोग सम्मिलित हुए। बड़ी धूमधाम से उत्सव मनाया गया और सम्राट् के गुण गाये गये।

सुधार-कृषक सम्बन्धी—कर्ज़न ने अनेकों सुधार किये। किसानों की रक्षा का उसे विशेष ध्यान था। पंजाब में यह प्रथा

थी कि ऋण चुकाने में किसान की ज़मीन बिक जाती थी।



एडवर्ड सप्तम

लार्ड कर्ज़न ने एक ऐसा क़ानून पास कर दिया जिससे महाजन किसान की ज़मीन ऋण में नहीं ले सकता था।

भूमिकर सम्बन्धी भी बहुत से सुधार किये गये। बन्दोबस्त की अवधि बढ़ाई गई। लगान बढ़ाने के लिए नियम बनवाये गये। फसल देख कर लगान लिया जाने लगा। सहायक पूंजी समितियां स्थापित की गईं। एक कृषि का माहकमा खोला गया। इन सब सुधारों से खेती की बड़ी उन्नति हुई।

सेना और पुलिस—सेना और पुलिस में भी सुधार हुआ। सिपाहियों का वेतन बढ़ा दिया गया। उनकी शिक्षा का उचित प्रबन्ध किया गया। देशी नरेशों के राजकुमारों को फ़ौजी शिक्षा देने के लिए एक 'इम्पीरियल केडेट कोर' भी खोला गया।

शिक्षा—यूनिवर्सिटियों की दशा बहुत अच्छी न थी। उनके उचित प्रबन्ध के लिए एक कमीशन नियुक्त किया जिसकी रिपोर्ट के अनुसार यूनिवर्सिटियों का प्रबन्ध बहुत कुछ सरकार के हाथ में चला गया। स्कूलों की देख-रेख भी अधिक होने लगी। इससे शिक्षित समाज में असन्तोष फैला क्योंकि वे चाहते थे कि यूनिवर्सिटियाँ स्वतन्त्र रहें।

व्यापार—कर्ज़न के समय में व्यापार में बड़ी उन्नति हुई। व्यापार और कला-कौशल की उन्नति के लिए एक नया महकमा खोला गया। उसने नमक के ऊपर कर भी घटा दिया जिससे गरीबों को बड़ा लाभ हुआ और व्यापार ख़ूब बढ़ा।

बंग-विच्छेद—कर्ज़न ने एक काम ऐसा भी किया जिससे सारे देश में और विशेषकर बंगाल में खलबली पड़ गई। उसने शासन-प्रबन्ध की आसानी के लिए बंगाल के दो टुकड़े कर के दो प्रान्त बना दिये। इस का बड़ा विरोध हुआ। सारे देश में अशान्ति फैल गई। बंगाली लोग तो बहुत ही बिगड़े। उनका कहना था कि सरकार उनके देश के टुकड़े कर के उनकी राष्ट्रीयता को दबाना चाहती है। बड़ी बड़ी सभाएँ हुईं। षड्यन्त्र रचे गये। क्रान्ति दल वालों ने बम्ब फेंके। अनेकों की जानें गईं; परन्तु विच्छेद न टूटा और आन्दोलन दबा दिया गया। फिर भी राष्ट्रीयता की अग्नि जल्दी नहीं बुझी। वह धीरे धीरे सुलगती

रही और बंगाली लोग हर प्रकार के राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेने के लिए तय्यार हो गये।

लार्ड कर्ज़न का पद-त्याग—१९०५ ई० में लार्ड कर्ज़न और फ़ौज के कमांडार इनचीफ़ लार्ड किचनर में झगड़ा हो गया। भारत सचिव ने किचनर का पक्ष लिया। इस पर कर्ज़न ने त्याग पत्र दे दिया और वह इङ्गलैण्ड को लौट गया।

प्रश्न

१—लार्ड कर्ज़न ने क्या क्या सुधार किये ? संक्षेप में लिखो।

२—बंग-विच्छेद का भारतवासियों पर क्या प्रभाव पड़ा ?

अध्याय ३५

लार्ड मिन्टो द्वितीय (१६०५–१६१०)

लार्ड मिन्टो १६०५ ई० में भारत में आया। इस समय देश में बड़ी अशान्ति फैल रही थी। बहुत सी गुप्त सभाएँ स्थापित हो गईं थीं जिनका उद्देश्य शासन को पलट देना था। सरकारी अफ़सरों पर बम्ब फेंके जाते थे। कांग्रेस ने भी सरकार का विरोध शुरू कर दिया था। श्री गोपाल कृष्ण गोखले, फ़ीरोज़शाह मेहता, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, बाल गंगाधर तिलक आदि कांग्रेस के नेता विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार करके भारत को अपने पैरों पर खड़ा करना चाहते थे। मुसलमान लोग भी अब कांग्रेस में भाग लेने लगे। इन



लार्ड मिन्टो द्वितीय

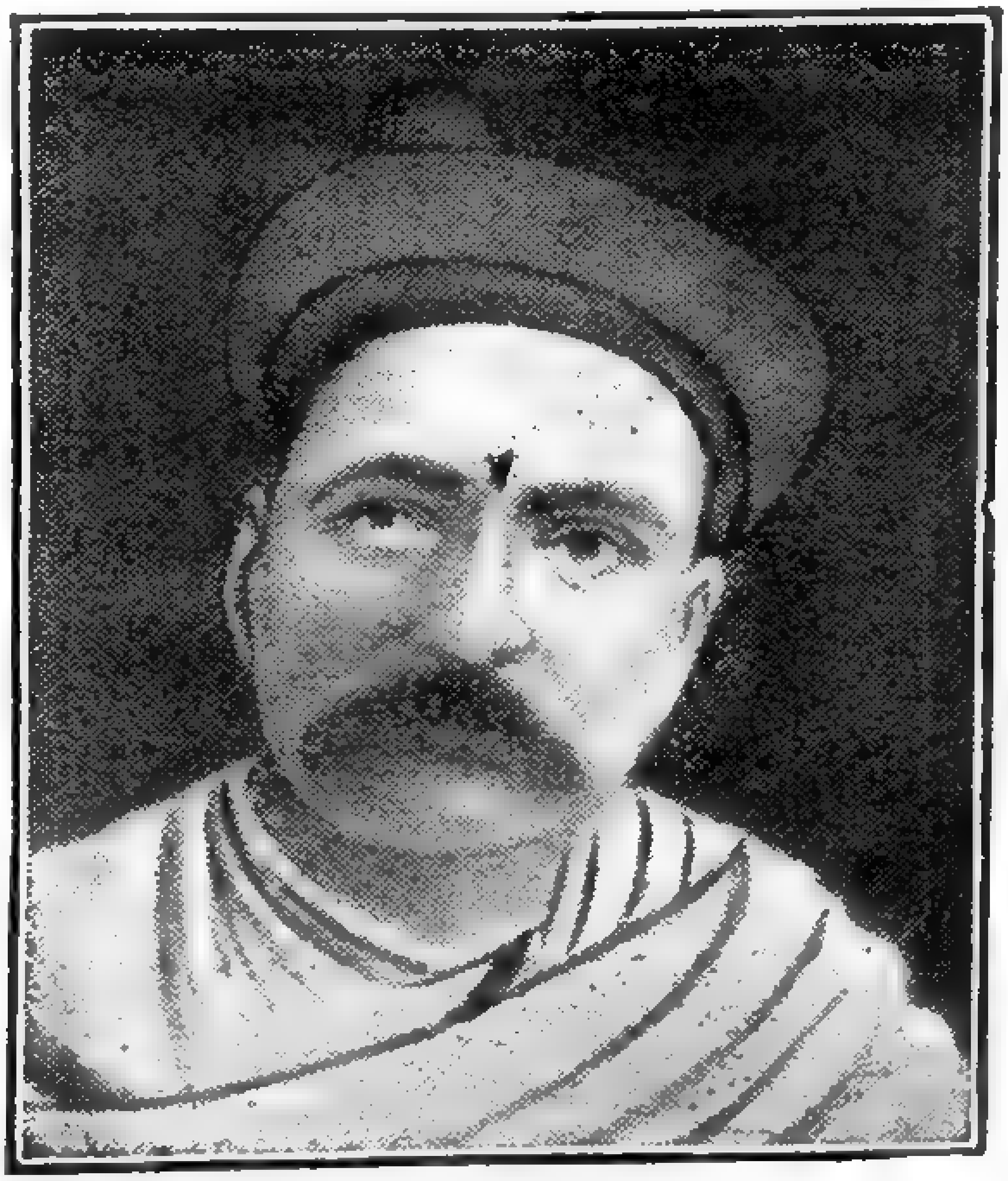
जटिल समस्याओं के सामने भारत में शान्तिपूर्वक शासन करना आसान न था।



गोपाल कृष्ण गोखले

लार्ड मिन्टो बड़ा योग्य और बुद्धिमान व्यक्ति था। उसने बड़े धैर्य से काम लिया। अत्याचार और हत्याकारी आन्दोलन को

रोकने के लिए उसने विद्रोहियों के साथ कठोर व्यवहार तो अवश्य किया ; पर वह जानता था कि बिना शासन-सुधार किये और भारतवासियों को कुछ अधिकार दिये शान्ति न होगी। इसी



लोकमान्य तिलक

समय इंगलैंड में भी उदार दल का शासन हो गया था। भारत-सचिव भारतवासियों के प्रति सहानुभूति रखते थे। लार्ड मिन्टो और भारत-सचिव लार्ड मोर्ले ने मिल कर एक क़ानून की योजना की १९०९ ई० में यह क़ानून पास हो गया।

मार्ले-मिन्टो रिफ़ार्म—इस नये क़ानून के अनुसार जो भारत के शासन में सुधार हुए वे 'मार्ले-मिन्टो रिफ़ार्म' के नाम से प्रसिद्ध हैं। वायसराय की कार्य्यकारणी सभा (एक्ज़ीक्यूटिव कौंसिल) में एक हिन्दुस्तानी मेम्बर भी नियुक्त किया गया।

व्यवस्थापिका सभा (लेजिस्लेटिव कौंसिल) के मेम्बरों की संख्या २१ से बढ़ा कर ६० कर दी गई जिसमें २५ ग़ैर सरकारी मेम्बर होते थे। गैर सरकारी मेम्बरों के अधिकार भी बढ़ा दिये गये। प्रान्तीय कौंसिलों के मेम्बरों की संख्या भी लग-भग दोगुनी कर दी गई जिसमें ग़ैर सरकारी मेम्बर अधिक होते थे। उनके भी अधिकार बढ़ा दिये गये। मुसलमान और सिक्खों के प्रतिनिधि अलग अलग चुने जाते थे। भारतसचिव की कौंसिल में भी हिन्दुस्तानी नियुक्त किये जाने लगे।

इन सुधारों ने भारतवासियों की माँगों को पूरा न किया। दूसरे इनमें कुछ त्रुटियाँ भी रह गई थीं। फल यह हुआ कि सरकार के विरुद्ध आन्दोलन बढ़ता ही रहा।

१९१० ई० में सम्राट् एडवर्ड सप्तम की मृत्यु हो गई। उन की जगह हमारे वर्तमान सम्राट् जार्ज पञ्चम गद्दी पर बैठे। इसी साल लार्ड मिन्टो भी इंगलैंड को चला गया और लार्ड हार्डिञ्ज द्वितीय वाइसराय के पद पर नियुक्त किया गया।

प्रश्न

मार्लो-मिन्टो रिफार्म से भारतवासियों को क्या अधिकार मिले? संक्षेप में लिखो।

अध्याय ३६

लार्ड हार्डिञ्ज द्वितीय

(१९१०–१९१६ ई० तक)

सम्राट् का भारत में आगमन–१९११ ई० में सम्राट् जार्ज पंचम और साम्राज्ञी मेरी ने भारत में पदार्पण किया। इंगलैंड के राजा का भारत में आने का यह पहला ही अवसर था। इनके आने पर बड़ा आनन्द मनाया गया। जगह जगह उत्सव हुए। दिल्ली में एक बड़ा दर्बार किया गया जहाँ राजा-महाराजा, सेठ-साहूकारों ने बड़ी धूमधाम से उनका स्वागत किया।

इस दर्बार में सम्राट् ने घोषणा की कि दिल्ली फिर भारत की राजधानी बनाई गई। बिहार और उड़ीसा का एक नया प्रांत बना दिया गया। पूर्वी बंगाल और आसाम का सूबा तोड़ दिया गया। दक्षिणी बंगाल फिर पुराने बंगाल में मिला दिया गया। इस पर बंगाली लोग बहुत प्रसन्न हुए और सम्राट् और लार्ड हार्डिञ्ज की प्रशंसा करने लगे।

इसी समय से 'विक्टोरिया क्रास' नामक पदक का अधिकारी भारत-वासियों को भी बना दिया गया। भारतवासी

गद्-गद् हो गये और उनके हृदय में सम्राट् के प्रति श्रद्धा और भक्ति बढ़ गई।

लार्ड हार्डिंज पर बम्ब—लार्ड हार्डिंज भारतीय प्रजा को बहुत प्रिय हो गया था। राष्ट्रीय आन्दोलन बहुत कुछ दब गया था, परन्तु फिर भी क्रान्ति दल वाले कभी कभी दुष्कर्म कर ही डालते थे। २२ दिसम्बर १९१२ ई० को दिल्ली में प्रवेश करते समय किसी ने हार्डिंज पर बम्ब फेंका सौभाग्यवश वह बच गया; पर उसका रक्षक मारा गया। इस घटना का हार्डिंज पर कोई प्रभाव न पड़ा। वह सदा भारतवासियों से दया का ही बर्ताव करता रहा।



लार्ड हार्डिंज द्वितीय

सुधार—हार्डिंज ने भारतवासियों की उन्नति के लिए बहुत उद्योग किया। उनकी शिक्षा के लिए बहुत से स्कूल खोले बहुत से अस्पताल भी खुले। नौकरियों की जाँच के लिए एक कमेटी बिठलाई गई जो पब्लिक सर्विसेज़ कमीशन कहलाती है। व्यापार और कला-कौशल की उन्नति पर भी विचार किया गया। जिसकी जाँच के लिए एक कमेटी नियत की गई जो 'इन्डस्ट्रियल कमीशन' कहलाई।

योरोपीय महायुद्ध—१९१४ ई० में योरोप में एक बड़ा भारी युद्ध आरम्भ हुआ। २८ जुलाई १९१४ ई० को आस्ट्रिया के राजकुमार को सर्विया के कुछ विद्रोहियों ने मार डाला था। इस पर आस्ट्रिया और सर्विया के बीच लड़ाई छिड़ गई। जर्मनी ने भी अपनी शक्ति बढ़ाने और भारत पर अधिकार करने की इच्छा से आस्ट्रिया का साथ दिया। धीरे धीरे योरोप की हर जाति और देश के लोग इस युद्ध में सम्मिलित हो गये। बाद में अमेरिका ने भी जर्मनी के विरुद्ध लड़ाई की घोषणा कर दी। एक ओर जर्मनी आस्ट्रिया, टर्की, बलगेरिया आदि राज्य थे और दूसरी ओर इंगलैंड, फ्रांस, इटली, बेल्जियम, अमेरिका आदि। इस लड़ाई में भारतवासियों ने भी भाग लिया और बड़ी बहादुरी दिखाई। भारतीय सेनाएँ फ्रांस, टर्की, मिश्र, अरब, इराक़ आदि देशों में भेजी गई। वहाँ उन्होंने बड़ी वीरता से शत्रुओं का सामना किया। राजपूत, सिक्ख, पठान, गोरखे आदि भारत की वीर जातियों ने लड़ाई के मैदान में शत्रुओं के छक्के छुड़ा दिये। सेठ-साहूकारों ने अपनी थैलियाँ खोल दीं। देशी नरेशों ने केवल धन अथवा सेना देकर ही नहीं सहायता दी; किन्तु कई ने स्वयं युद्ध में जाकर भाग लिया। भारतीय सेना की सहायता से ही अँग्रेज़ों ने बग़दाद, दमिश्क, यरूशलम आदि देशों पर अधिकार कर लिया। ऐसा भीषण युद्ध योरोप के इतिहास में पहिले कभी नहीं हुआ था। इसका प्रभाव सारे संसार पर पड़ा। भारत सरकार को भी इसी के कारण १२ करोड़ रुपया के करीब उधार लेना पड़ा।

१९१६ ई० में लार्ड हार्डिञ्ज इंगलैंड चला गया। उसकी जगह लार्ड चेम्स फोर्ड आया।

प्रश्न

१—भारत में सम्राट् के आगमन का कुछ हाल लिखो।

२—सम्राट् ने क्या घोषणा की? भारतवासी उससे क्यों प्रसन्न हुए?

३—लार्ड हार्डिञ्ज द्वितीय के विषय में तुम क्या जानते हो? उसके शासन-काल का कुछ हाल लिखो।

४—योरोपीय महायुद्ध में भारतवासियों ने सरकार की क्या सहायता की?

५—योरोपीय महायुद्ध में कौन किधर था?

अध्याय ३७

लार्ड चेम्सफ़ोर्ड

(१९१६–१९२१ ई० तक)

राष्ट्रीय आन्दोलन—जिस समय लार्ड चेम्सफोर्ड भारत में आया योरोपीय महायुद्ध जारी था। इधर भारत में राष्ट्रीय आन्दोलन की एक नई लहर अपना काम कर रही थी। १९१६ ई० में लखनऊ कांग्रेस में श्रीमती एनी बीसेंट ने होमरूल आन्दोलन (स्वराज्य) का बीड़ा उठाया। लोकमान्य तिलक ने भी उनका पूरा साथ दिया। इसी समय मुसलमानों ने तुर्की सुलतान के साथ जो जर्मनी की तरफ़ से अंग्रेजों से लड़ रहा था और मुसलमानों का खलीफ़ा था सहानुभूति प्रकट की। उन्होंने अपनी



एनी वेसेंट

एक सभा स्थापित कर ली जो 'ख़िलाफ़त' कहलाई। इसका उद्देश्य भी वही था जो कांग्रेस का। कुछ दिनों बाद कांग्रेस और ख़िलाफ़त दोनों मिल कर काम करने लगे। लार्ड चेम्सफ़ोर्ड को ऐसे समय में बड़ी कठिनाई का सामना करना पड़ा। इधर तो उसे भारत की स्थिति सम्हालने का उद्योग करना पड़ा और उधर योरोपीय युद्ध में सहायता भेजनी पड़ी। भारत सचिव मिस्टर मांटेग्यू ने भी ऐसे समय में बड़ी योग्यता और धैर्य से काम लिया। १९१७ ई० में उन्होंने घोषणा कर दी कि ब्रिटिश सरकार का उद्देश्य धीरे धीरे भारत को उत्तरदायित्वपूर्ण शासन (रेसपान्सिब्बिल गवर्नमेन्ट) देना है। इस घोषणा से आन्दोलन मन्द पड़ गया। उसी साल मिस्टर मांटेग्यू ने भारत में पधार कर और देश के बड़े बड़े नेताओं और प्रतिष्ठित व्यक्तियों से मिल कर शासन-प्रबन्ध की जाँच की। १९१८ ई० में मांटेग्यू-चेम्सफ़ोर्ड रिपोर्ट तैयार होकर प्रकाशित हो गई।



मिस्टर मांटेग्यू

पेरिस की सन्धि—१९१९ ई० में महायुद्ध समाप्त हो गया और पेरिस के स्थान पर सन्धि हो गई। अब तो भारतवासियों की दृष्टि इंगलैण्ड की ओर लग गई। भारतवासियों ने इस महायुद्ध में सरकार की बड़ी सहायता की थी। अतएव वे यह

जानने के लिए बड़े उत्सुक हो उठे कि देखें अब सरकार हमको इसके बदले में क्या देती है।

अफ़ग़ानिस्तान की चौथी लड़ाई १९१९—अफ़ग़ानिस्तान का अमीर हबीबुल्लाह मार डाला गया। उसके बाद उसका लड़का नसरुल्लाह अमीर हुआ; परंतु थोड़े ही दिनों बाद गद्दी से उतार दिया गया। तब उसका छोटा भाई अमानुल्लाह गद्दी पर बैठा। इस समय भारत में गड़बड़ी फैल रही थी। यह देख कर अफ़ग़ानी सेना ने भारत की ओर बढ़ना शुरू कर दिया; परंतु अँग्रेज़ी सेना ने उसे हरा दिया। तब अफ़ग़ानिस्तान से सन्धि हो गई।

गवर्नमेन्ट आफ इन्डिया ऐक्ट—१९१९ ई० में मांटेग्यू-चेम्सफोर्ड रिपोर्ट के अनुसार इंगलैण्ड की पार्लियामेन्ट में एक नया क़ानून पास हुआ जो गवर्नमेन्ट आफ़ इण्डिया ऐक्ट कहलाता है। इसने भारत के शासन में बड़े सुधार किये। वर्तमान समय में भारत का शासन इसी ऐक्ट के अनुसार होता है जिसका वर्णन अगले परिच्छेद में सविस्तार किया जायगा।



लार्ड चेम्सफोर्ड

यहाँ पर इतना कह देना आवश्यक है कि इस ऐक्ट से भारत में क़ानून बनाने के लिये दो सभायें स्थापित हुईं। एक को कौंसिल

आफ़ स्टेट कहते हैं और दूसरी को लेजिस्लेटिव असेम्बली। इन सभाओं में सरकार के नियुक्त किये हुए तथा प्रजा द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि होते हैं। प्रान्तीय सरकार के शासन में भी बहुत कुछ अदल बदल किया गया है। इसके पहले प्रान्तीय शासन गवर्नर की एक्ज़ीक्युटिव कौंसिल ही करती थी। परन्तु अब से प्रजा को भी शासन का कुछ अधिकार मिल गया। कौंसिल के ग़ैर सरकारी सदस्यों में से मिनिस्टर बनाये जाते हैं और यह लोग शिक्षा, कृषि, कला कौशल, स्वास्थ्य रक्षा, आदि मुहकमों की देख भाल करते हैं। परंतु अब सन् १९३५ ई० में एक नया गवर्नमेंट ऑफ इंडिया ऐक्ट पास हुआ है जिससे सन् १९१९ ई० का ऐक्ट रद्द हो गया है। अतः भविष्य में इसी नये ऐक्ट के अनुसार शासन होगा।

राष्ट्रीय आन्दोलन का नया रूप—सरकार ने भारतवासियों की आशाओं को पूरा करने का भरसक प्रयत्न किया। उनको 'गवर्नमेन्ट आफ इण्डिया ऐक्ट' से नये नये अधिकार दिए। एक हिन्दुस्तानी लार्ड सिनहा को बिहार और उड़ीसा का गवर्नर भी नियुक्त किया। इम्पीरियल वार कैबिनेट में, जो एक सभा थी और साम्राज्य के लड़ाई के कामों का प्रबन्ध करने के लिए नियुक्त हुई थी, भारतीय प्रतिनिधि महाराजा बीकानेर और सर एस० पी० सिनहा का बड़ा मान किया गया। शिक्षा आदि का भी सुधार किया गया; फिर भी राष्ट्रीय आन्दोलन बन्द नहीं हुआ। इस आन्दोलन को रोकने के लिए एक नया ऐक्ट पास किया गया जो रौलेट ऐक्ट कहलाता है। इसने जनता को और भी भड़का दिया। जहाँ तहाँ इसका विरोध होने लगा। महात्मा गाँधी ने सत्याग्रह आन्दोलन शुरू कर दिया। पंजाब में

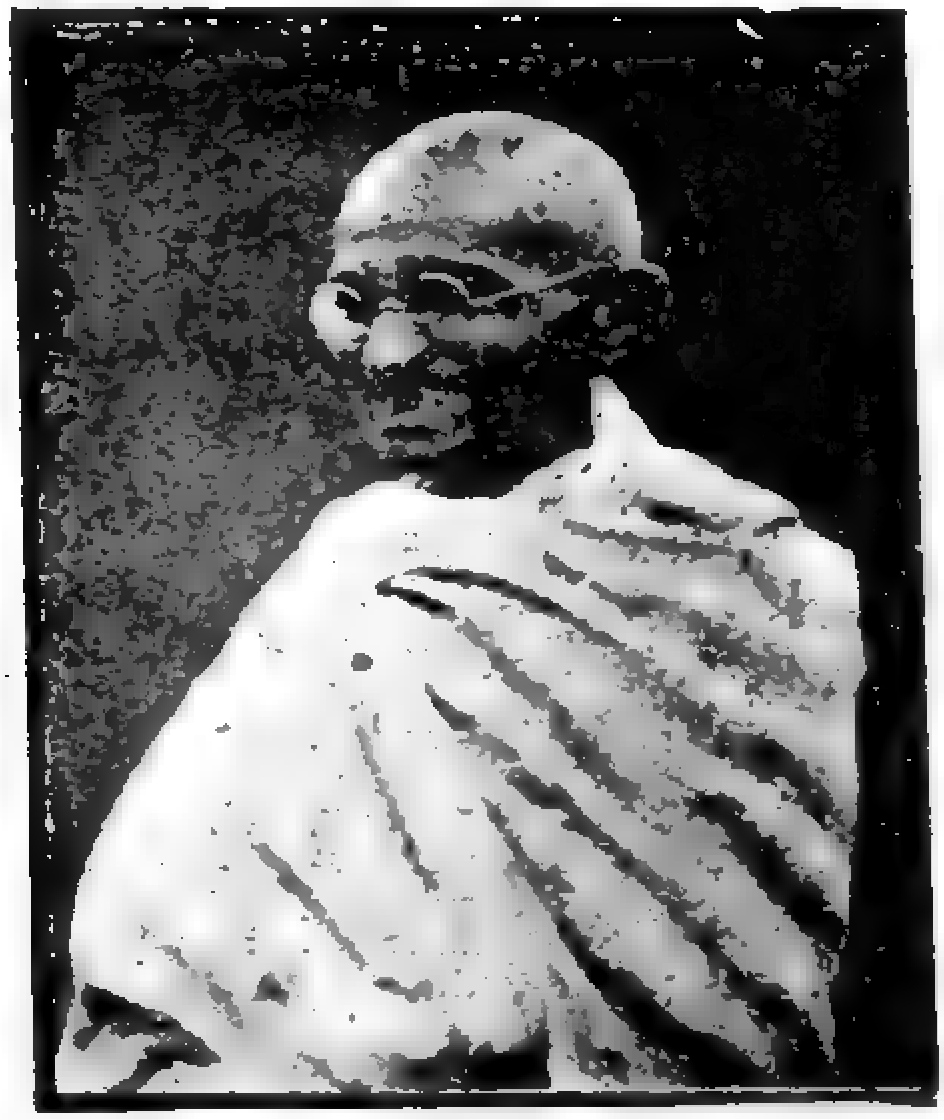
इसका बहुत ज़ोर बढ़ा। लाहौर, अमृतसर और गुजरानवाला में उपद्रव हो गये। पंजाब की सरकार ने वहाँ पर मार्शल ला



लार्ड सिनहा

जारी कर दिया जिससे कोई सभा न हो सके। फिर भी जालियाँ-वाला बाग़ में सभा की गई। इस पर गोली चलाई गई। जनता में असन्तोष फैल गया। हिन्दू-मुसलमान सब एक हो गये। सारे देश में अशान्ति फैल गई। सरकारी अदालतें, स्कूल, विदेशी कपड़े आदि के बहिष्कार पर ज़ोर दिया गया। लार्ड चेम्सफोर्ड ने इस आन्दोलन को दबाने का बहुत प्रयत्न किया; परन्तु यह

बराबर ज़ोर पकड़ता गया। १६२१ ई० में लार्ड चेम्सफोर्ड विलायत



महात्मा गाँधी

चला गया। उसकी जगह लार्ड रीडिंग भेजा गया।

प्रश्न

लार्ड चेम्सफ़ोर्ड के शासन-काल का कुछ वृत्तान्त लिखो।

अध्याय ३८

लार्डरीडिंग

(१९२१–२६ ई० तक)

असहयोग का अन्त––लार्ड रीडिंग बड़ा अनुभवी और योग्य शासक था। जब वह भारत में आया असहयोग आन्दोलन का बड़ा ज़ोर था। कई जगह भीषण हत्याकाण्ड हुए थे। लार्ड रीडिंग ने भारत की स्थिति पर ख़ूब विचार करके दमन करना शुरू कर दिया। कांग्रेस के बड़े-बड़े नेता महात्मा गांधी, मौलाना मोहम्मदअली, मौलाना शौकतअली आदि जेल में भेज दिये गये। इधर हिन्दू-मुसलमानों के झगड़े भी शुरू हो गए और कांग्रेस में दलबन्दियाँ हो गईं। इस प्रकार शीघ्र ही राष्ट्रीय आन्दोलन का अन्त हो गया। देश में शान्ति छा गई। महात्मा गांधी दो साल बाद जेल से छोड़ दिये गये। फिर भी कोई



मौलाना मोहम्मदअली

गड़बड़ी न हुई । टर्की में कमाल पाशा ने ख़िलाफ़त का अन्त कर दिया था। इससे भारत के मुसलमानों में भी वह जोश न रहा । हिन्दू और मुसलमान एक न हो सके ।



प्रिंस आफ़ वेल्स

प्रिंस का आगमन—१९२१ में प्रिंस आफ़ वेल्स भारत में पधारे। उनका बड़ा स्वागत किया गया और जहाँ तहाँ उत्सव मनाये गये।



लार्ड रीडिंग

नाभा नरेश का गद्दी से उतारा जाना—१९२१ ई० में पंजाब के अकालियों में अशान्ति फैली। गुरुद्वारों के सुधार के लिए एक सभा स्थापित की गई। बब्बर अकालियों का संगठन किया गया। वे गुरुद्वारे जबर्दस्ती छीनने लगे। मार-काट शुरू हो गई। नाभा और पटियाला के राजाओं में भी झगड़ा हो गया। भारतीय सरकार ने झगड़ा बढ़ता देख कर हस्तक्षेप करना शुरू किया। उपद्रवी अकाली गिरफ़्तार कर लिये गये। नाभा नरेश ने अपना राज्य भारत सरकार को सौंप दिया।

सुधार—रीडिंग के समय में बहुत से सुधार भी किये गये। आर्थिक दशा सुधारने के लिए 'इंचकेप कमेटी' बिठाई गई। सेना की शिक्षा की ओर भी ध्यान दिया गया। सैण्डहर्स्ट कालेज में दस जगहें हिन्दुस्तानियों के लिये रखी गईं। ली कमीशन ने सिविल सर्विस के सभ्यों का भी वेतन बढ़ा दिया।

उपनिवेश कमीशन—भारत लीग आफ़ नेशन्स का सदस्य हो गया था। इससे उसकी प्रतिष्ठा बहुत बढ़ गई थी। १९२२ ई० में भारत सरकार ने मिस्टर श्रीनिवास शास्त्री को न्यूज़ीलैंड, आस्ट्रेलिया, कनाडा आदि उपनिवेशों में भारतवासियों की दशा जाँचने के लिए भेजा। इनका वहाँ बड़ा स्वागत हुआ।



श्रीनिवास शास्त्री

लार्ड अर्विन और लार्ड विलिंगडन—१९२६ ई० में लार्डरीडिंग विलायत को लौट गया। उसकी जगह लार्ड अर्विन (१९२६—३१) वाइसराय हुआ। उसका शासनकाल बड़ा महत्वपूर्ण है। उसके समय में १९२९ ई० में महात्मा गान्धी ने सरकारी क़ानून तोड़ने का बीड़ा उठाया। कांग्रेस ने बहुत ज़ोर पकड़ा और सैकड़ों आदमी जेल में भर दिये गये। अन्त में अर्विन ने अपने उदार चरित्र और शील स्वभाव से प्रजा को अपने हाथ में कर ही लिया। इसी समय में विलायत में राउन्ड टेबिल कान्फ़रेंस (गोल मेज़ सभा) नाम की सभा दो बार बैठी। इसमें सरकार, प्रजा तथा रियासतों के प्रतिनिधि मौजूद थे। इन सब ने मिल कर इस बात पर विचार किया कि भारत में स्वराज्यसम्बन्धी क्या क्या सुधार किये जावें। यह लार्ड अर्विन

की ही युक्ति का फल था कि कांग्रेस से समझौता हो गया और महात्मा गान्धी ऐसे कट्टर असहयोगी दूसरी गोल मेज़ कान्फरेंस में



लार्ड अर्विन



लार्ड विलिंगडन

सम्मिलित हुए परन्तु इससे पहले ही लार्ड अर्विन विलायत वापिस चला गया था। उसकी जगह १९३१ में लार्ड विलिंगडन भारत का वाइसराय हो कर आये। आज कल यही हमारे वाइसराय हैं।

प्रश्न

१—लार्ड रीडिंग के समय में क्या क्या सुधार हुए ?

२—लार्ड अर्विन का शासन-काल क्यों महत्वपूर्ण समझा जाता है ?

अध्याय ३९

भारत की शासन-पद्धति

(१) **सम्राट, पार्लियामेन्ट और कैबिनेट**—भारत ब्रिटिश साम्राज्य का एक भाग है। इसलिए यहाँ का शासन इंगलैण्ड के राजा और वहाँ की पार्लियामेन्ट के अधीन है। वहाँ का राजा भारतवर्ष का सम्राट् है; परन्तु वह बिना पार्लियामेन्ट की अनुमति के कुछ नहीं कर सकता। पार्लियामेन्ट दो बड़ी सभाओं में विभक्त है, जिनमें से एक का नाम 'हाउस आफ़ लार्ड्स' और दूसरी का नाम 'हाउस आफ़ कामन्स है' पहिली सभा के सदस्य बड़े बड़े धनाढ्य और अमीर तथा चर्च के पदाधिकारी होते हैं। दूसरी सभा के सदस्य साधारण जनता द्वारा चुन कर भेजे जाते हैं।

पार्लियामेन्ट को बहुत अधिकार हैं। वही ब्रिटिश साम्राज्य के लिये क़ानून आदि बनाती है। वह विशेषतः एक बहुत बड़ी सभा होने के कारण स्वयं शासन प्रबन्ध नहीं कर सकती, इसलिए इस कार्य को करने के लिये कुछ मंत्री चुने जाते हैं। उनमें एक प्रधान मन्त्री होता है वही अन्य मंत्रियों को चुनता है। इस-मंत्रि मण्डल का नाम कैबिनेट है। वास्तव में शासन प्रबंध इसी के हाथ में रहता है।

भारतवर्ष के शासन के लिए भी एक मंत्री होता है जिसे भारत सचिव कहते हैं। यह भी कैबिनेट का एक सदस्य होता है। इसको सहायता के लिए एक सभा होती है जिसमें अधिक से अधिक १२ मेम्बर हो सकते हैं ' उनमें से आधे ऐसे होते हैं जो कुछ समय तक भारतवर्ष में रह चुके हों, परंतु सन १९३५ ई० के नये एक्ट के अनुसार यह सभा तोड़ दी जायगी, इसके स्थान में भारत सचिव अपने लिये कम से कम तीन और अधिक से अधिक छः सलाहकार नियुक्त करेगा। भारत सचिव के तीन मुख्य कार्य होते हैं। भारत के बड़े बड़े शासकों और कर्मचारियों को नियुक्त करना, कुल देश के राज्य-प्रबन्ध की देख भाल करना और देश के लिए आवश्यकतानुसार क़ानून बनाने की योजना करना।

(२) वाइसराय और उसकी सहकारी सभाएँ— भारत सचिव को इंगलैंड से शासन करने में सुगमता नहीं हो सकती। इसलिए एक बड़े पदाधिकारी की आवश्यकता होती है जो भारत में रह कर शासन प्रबंध कर सके। इस काम के लिये एक वाइसराय रखा जाता है। भारतसचिव और पार्लियामेन्ट का कार्य केवल देख-भाल और निगरानी करना है। शासन का भार वायसराय के ऊपर है और उसी के ऊपर समस्त उत्तरदायित्व है।

वाइसराय की सहायता के लिए सहकारी सभाएँ हैं। एक सभा प्रबंध कारिणी सभा कहलाती है जिसमें तीन भारत-वासी होते हैं आजकल इसके आठ सदस्य हैं, वाइसराय इसी की सहायता से देश का शासन करता है। इस सभा की बैठक प्रत्येक

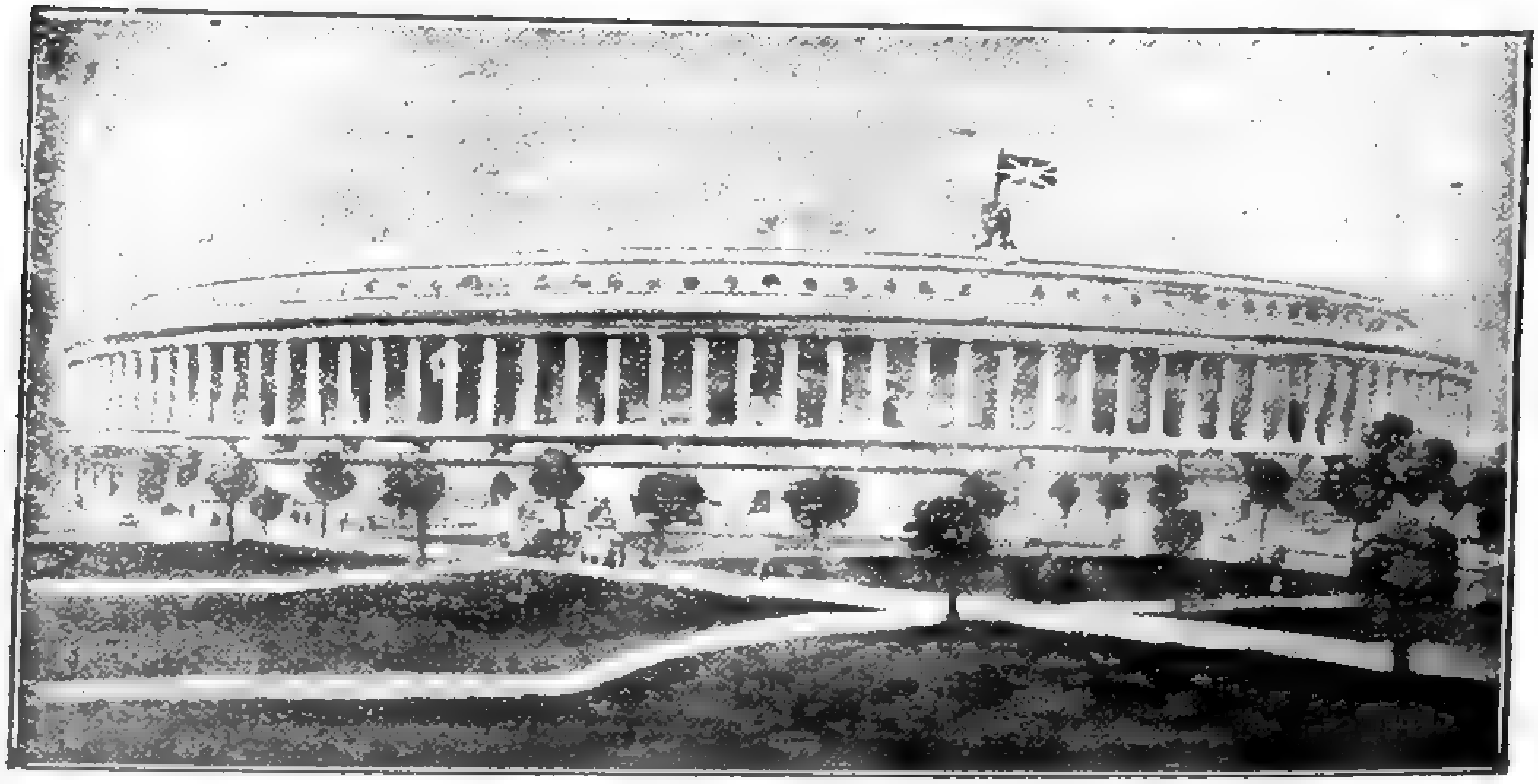
सप्ताह में एक बार अवश्य होती है। इसका सभापति स्वयं वाइसराय ही होता है। वाइसराय कभी कभी आवश्यकतानुसार सभासदों की इच्छा के विरुद्ध भी कार्य कर सकता है। इस सभा के प्रत्येक सदस्य को अलग-अलग कार्य सौंपा जाता है। वाइसराय स्वयं विदेशीय विभाग का काम करता है। इस विभाग का कार्य देशी रियासतों और विदेशी राज्यों से सम्बन्ध रखता है।

"होम मेम्बर" अदालत, पुलिस, जेल इत्यादि महकमों का कार्य देखता है। "अर्थ सचिव" आय और व्यय का हिसाब रखता है। अन्य सदस्य क़ानून, व्यापार, कला, कृषि, शिक्षा, इत्यादि का काम देखते हैं। "सेनाध्यक्ष" भी इस सभा का सदस्य है। वह सेना के बारे में अपने विचार अन्य सदस्यों के सामने पेश करता है और सेना का सब काम देखता है।

नये क़ानून के अनुसार वाइसराय की सहायता के लिये मंत्रियों की एक सभा रहेगी जिसे कौंसिल आफ़ मिनिस्टर्स कहेंगे। इनके मंत्रियों को वाइसराय स्वयं चुनेगा परन्तु इनको संघ की किसी व्यवस्थापिका सभा का सदस्य होना पड़ेगा नहीं तो छः महीने से अधिक ये मंत्री नहीं रह सकते। इनकी संख्या दस से अधिक नहीं हो सकती।

पहले क़ानून बनाने के लिये केवल एक ही सभा थी। परन्तु १९१९ के ऐक्ट ने दो सभायें स्थापित कर दीं। एक को कौंसिल आफ़ स्टेट कहते हैं और दूसरी को लेजिस्लेटिव एसेम्बली। पहली सभा में ६० सदस्य होते हैं जिनमें से ३३ प्रजा चुनती है और २७ वाइसराय नियुक्त करता है। इसका चुनाव प्रति पाँचवें वर्ष होता है। लेजिस्लेटिव एसेम्बली के अधिकतर

सदस्य प्रजा द्वारा ही चुने जाते हैं। इस में १४० सदस्य होते हैं परंतु अधिक भी हो सकते हैं। और सिर्फ़ ४० ही वाइसराय द्वारा नियुक्त होते हैं। इसका चुनाव प्रति तीसरे वर्ष होता है। दोनों सभाएँ अपने अपने सभापति चुनती हैं।



एसम्बली भवन देहली

प्रत्येक क़ानून साधारणतः दोनों सभाओं द्वारा पास होने के बाद व्यवहार में लाया जाता है। ये सभाएँ क़ानून बनाने के अतिरिक्त सरकार के वार्षिक आय और व्यय के लेखे पर भी विचार करती हैं और अपनी अपनी मति के अनुसार उसमें कमी बेशी भी कर सकती हैं। इन सभाओं के सदस्य सरकार के शासन के बारे में हर प्रकार के प्रश्न पूँछ सकते हैं; परन्तु कोई सदस्य ऐसा प्रश्न नहीं पूँछ सकता जिससे दूसरे व्यक्ति की निन्दा हो। यह आवश्यक नहीं है कि जो क़ानून ये सभाएँ पास कर दें वे

जारी ही हो जावें क्योंकि क़ानून जारी करने के लिए वाइसराय और भारत-सचिव की आज्ञा आवश्यक है।

इन सभाओं की कार्यवाही सरकारी गज़ट में छप जाती है। कोई बात गुप्त नहीं रक्खी जाती। इन सभाओं की बैठकों में जन साधारण भी आज्ञा लेकर जा सकते हैं और वाद-विवाद सुन सकते हैं।

नये क़ानून के अनुसार भी दो सभायें रहेंगी एक का नाम कौंसिल आफ़ स्टेट होगा और दूसरी का हाउस आफ़ असेम्बली या फेडरल असेम्बली। कौंसिल आफ़ स्टेट में १५६ प्रतिनिध ब्रिटिश भारत से और अधिक से अधिक १०४ प्रतिनिधि रियासतों से लिए जायँगे। यह सभा चिरस्थायी होगी पर साधारणतः इसके एक तिहाई सदस्य प्रत्येक तीसरे वर्ष छोड़ दिया करेंगे, फेडरल असेम्बली में २५० प्रतिनिधि ब्रिटिश भारत से और अधिक से अधिक १२५ प्रतिनिधि रियासतों से लिए जायँगे। यह सभा पांच वर्ष रहा करेगी।

(३) **प्रान्तीय सरकार**—भारत सरकार केवल थोड़ा सा काम करती है और बाक़ी काम सूबे की सरकार को ही करना पड़ता है।

भारत में इस समय १५ सूबे हैं। १० सूबे यानी बंगाल, बम्बई, मद्रास, संयुक्त प्रदेश, पंजाब, विहार और उड़ीसा, मध्य प्रदेश, आसाम ब्रह्मा और पश्चिमोत्तर सीमा प्रदेश, बड़े हैं और इनका हाकिम गवर्नर कहलाता है। बाकी ५ सूबे बृटिशबिलूचिस्तान, अजमेर मारवाड़ा, दिल्ली, कुर्ग, एन्डमन

और नीकोबार द्वीप समूह छोटे हैं और इनका हाकिम चीफ़ कमिश्नर कहलाता है।

नये कानून के अनुसार ब्रह्मा भारत से पृथक कर दिया जायगा और ग्यारह बड़े सूबे होंगे जिनके गवर्नर शासन करेगा वे मद्रास, बंबई, बंगाल, संयुक्त प्रान्त, पंजाब, बिहार, मध्यप्रान्त और बरार, आसाम, पश्चिमोत्तर प्रदेश, उड़ीसा और सिंध होंगे।

प्रत्येक बड़े सूबे में गवर्नर की सहायता के लिए दो सभाएँ होती हैं। प्रबन्धकारिणी सभा छोटी होती है और उसमें अधिक से अधिक ४ सदस्य होते हैं जिनमें आधे भारत-वासी होते हैं। हर एक सूबे में गवर्नर, मन्त्रियों (मिनिस्टर्स) को नियुक्त करता है; परन्तु वे लेजिस्लेटिव कौन्सिल के सदस्य होने चाहिये। इसलिए उनका पद पर बना रहना कौन्सिल पर ही निर्भर होता है। शासन के कुछ विभाग जैसे शिक्षा, स्वास्थ्य रक्षा, कृषि, कला-कौशल इन्हीं मंत्रियों के अधिकार में होते हैं।

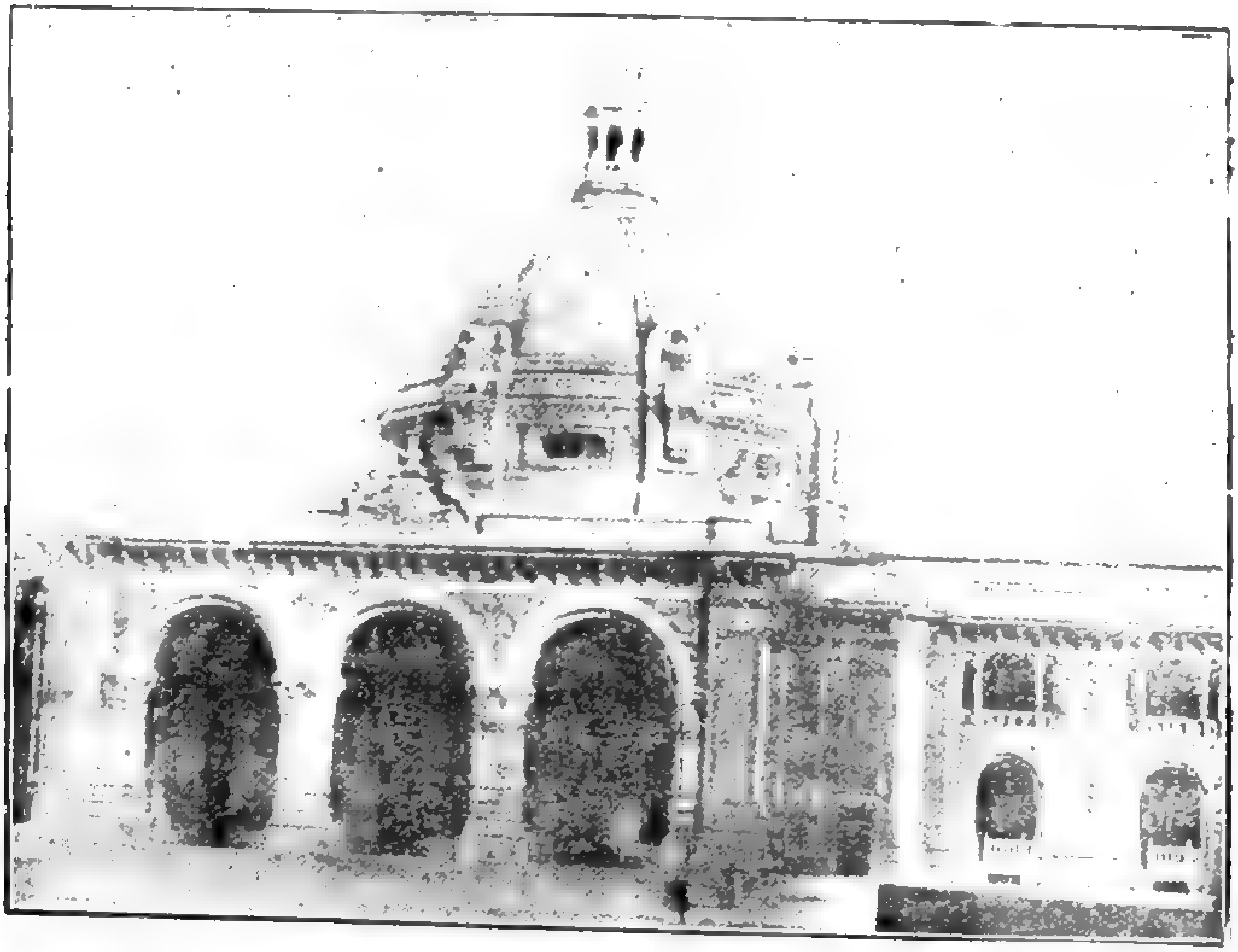
नये कानून के अनुसार गवर्नर की सहायता के लिये मंत्रियों की एक सभा होगी जिसको कौंसिल ऑफ मिनिस्टर्स कहेंगे अर्थात् वर्तमान प्रबन्ध कारिणी सभा न रहेगी।

हर बड़े सूबे में क़ानून बनाने के लिये एक सभा होती है जिसे लेजिस्लेटिव कौंसिल कहते हैं। इस सभा में भिन्न भिन्न प्रान्तों में भिन्न भिन्न संख्या के सदस्य होते हैं; परन्तु अधिकतर सदस्य प्रजा की वोट द्वारा ही चुने जाते हैं। यह सभा तीन साल तक रहती है और अपना सभापति भी स्वयं चुनती है।

लार्ड वेलेज़ली	१८०० ई० – १८०५
लार्ड हेस्टिंग्ज़	१८१३ –
विलियम बैंटिंक	१८२८ – १८३५
लार्ड डलहौज़ी	१८४८ – १८५६
वाइसराय	१८५८ –

१८०२	बसीन की सन्धि
१८०९	अमृतसर की सन्धि
१८१३	कम्पनी का नया आज्ञा पत्र
१८१६	सिगौली की सन्धि
१८१९	पिण्डारी दमन
१८२६	यन्दाबू की सन्धि
१८२९	सती का बन्द होना
१८३१	रणजीत सिंह से सन्धि
१८३३	कम्पनी का नया आज्ञापत्र
१८३९	रणजीत सिंह की मृत्यु
१८४३	सिंध पर अधिकार
१८४६	लाहौर की सन्धि
१८४९	पंजाब पर अधिकार
१८५२	बर्मा की दूसरी लड़ाई
१८५७	ग़दर
१८६२	आखरी मुग़ल बादशाह बहादुर शाह की मृत्यु
१८६९	वाइसराय की शेरअली से भेंट
१८७५	युवराज का आगमन
१८७८	अफ़ग़ानिस्तान की दूसरी लड़ाई
१८८७	महारानी विक्टोरिया की जुबली
१९०१	महारानी विक्टोरिया की मृत्यु
१९०५	बंग विच्छेद
१९११	दिल्ली दरबार
१९१४	योरोपीय महायुद्ध
१९१९	गवर्नमेन्ट आफ़ इण्डिया ऐक्ट
१९२१	असहयोग आन्दोलन
१९३०	राष्ट्रीय आन्दोलन
१९३१	गान्धी अर्विन सन्धि

यह सभा अपने सूबे के लिए क़ानून बनाती है; परन्तु कोई क़ानून बिना गवर्नर और वाइसराय की आज्ञा के जारी नहीं किया जा सकता। साधारण काम स्वयं गवर्नर भी कर सकता है; परन्तु बड़े कामों एवं क़ानून बनाने में वाइसराय की आज्ञा लेना अनिवार्य है। सभा, केन्द्रीय सभा की तरह, प्रान्तीय सरकार के सालाना आय-व्यय के लेखे पर भी विचार करती है और उसे



कौंसिल चेम्बर लखनऊ

घटा-बढ़ा भी सकती है। इस सभा का प्रत्येक सदस्य सरकार के कामों के बारे में प्रश्न पूछ सकता है।

नये क़ानून के अनुसार बड़े प्रान्तों में मदरास, बंबई, बंगाल, संयुक्त प्रांत, बिहार और आसाम में दो सभाएँ

होंगी अर्थात् लेजिस्लेटिव कौंसिल और लेजिस्लेटिव असेम्बली और शेष प्रांतों में एक एक सभा होगी जो लेजिस्लेटिव कौंसिल असेम्बली कहलायगी। एक असेम्बली पांच वर्ष तक रहेगी और कौंसिल स्थायी होगी परन्तु उसके एक तिहाई सदस्य प्रत्येक तीसरे वर्ष छोड़ देंगे।

छोटे सूबों में चीफ़ कमिश्नर सब से बड़ा हाकिम होता है। उसकी सहायता के लिए कोई सभा नहीं होती। इन सूबों में भारत सरकार का अधिक हस्ताक्षेप होता है। एक प्रकार से ये भारत सरकार द्वारा ही शासित होते हैं।

(४) ज़िला—हर सूबे में कई ज़िले होते हैं ज़िले का सबसे बड़ा हाकिम कलक्टर कहलाता है। उसको बहुत से अधिकार होते हैं। उसकी मदद के लिए बहुत से और भी अफ़सर होते हैं, जैसे डिप्टी कलेक्टर, सुपरिन्टेन्डेन्ट पुलिस, जेल के हाकिम, इन्जीनियर इत्यादि। कलेक्टर अपने ज़िले की देख-भाल करता है तथा मालगुज़ारी वसूल करता है। वह मैजिस्ट्रेट भी होता है और मामूली मुकदमे सुनता है। वह ज़िले में शान्ति स्थापित रखता है। वह ज़िले भर की अन्य संस्थाओं का भी निरीक्षण करता है।

सुविधा के लिए प्रत्येक ज़िले के भी छोटे छोटे भाग कर दिए गये हैं, जिनको तहसील कहते हैं। फिर एक तहसील में कई परगने होते हैं। हर एक तहसील में एक तहसीलदार होता है उसका मुख्य कर्त्तव्य मालगुज़ारी वसूल करना है। वह एक छोटे दर्जे का मजिस्ट्रेट भी होता है और उस हैसियत से छोटे छोटे मुकदमा सुनता है। प्रत्येक तहसील का प्रबंध

साधारणतः एक डिप्टी कलक्टर को सौंपा जाता है जो हाकिम परगना कहलाता है। वह एक ऊँचे दर्जे का मजिस्ट्रेट होता है और साधारणतः अपनी तहसील पर वही अधिकार रखता है जो कलक्टर ज़िला पर रखता है। तहसीलदार की मदद के लिए नायब तहसीलदार, क़ानूनगो एवं पटवारी आदि होते हैं।

शासन की सुविधा के लिए किसी किसी सूबे में कई ज़िलों को मिलाकर कमिश्नरी बना दी जाती है, जो एक कमिश्नर के आधीन होती है। उसका मुख्य काम सिर्फ़ कलक्टरों के काम की निगरानी करना है। वह माल के मुक़दमों की अपीलें भी सुनता है।

(५) स्थानीय स्वराज्य--ब्रिटिश सरकार ने भारतवासियों को राज्य व्यवस्था से परिचित कराने के लिए कुछ स्थानीय स्वराज्य दिया है। सन् १८८४ ई० में लार्ड रिपन द्वारा म्युनि- सिपैल और डिस्ट्रिक्टबोर्डों के आंतरिक प्रबन्ध में भारतवासियों को कुछ स्वतन्त्रता मिली थी। यही स्थानीय स्वराज्य कहलाता है। सन् १९१९ के ऐक्ट में यह अधिकार कुछ और बढ़ गया।

अब हर ज़िले में एक ज़िला बोर्ड होता है जिसके सदस्य जनता द्वारा चुने जाते हैं। यह अपना सभापति भी चुनते हैं। इसका मुख्य काम शिक्षा का प्रबंध स्वास्थ्य का प्रबंध सड़कों और पुलों की रक्षा करना आदि है। इसकी मुख्य आमदनी मालगुज़ारी के दशांश, घाटों और मवेशीखानों इत्यादि के कर से होती है।

शहरों और बड़े बड़े क़स्बों में म्यूनिसिपैल बोर्ड क़ायम हो गये हैं। इसके सदस्य भी प्रजा द्वारा चुने जाते हैं। इसका सभापति भी

सदस्यों द्वारा चुना जाता है। इसके मुख्य कार्य शहर में सफ़ाई रखना, रोशनी का प्रबन्ध करना, शिक्षा का प्रबंध करना जनता के स्वास्थ्य को सँभालना इत्यादि हैं। चुंगी की आय उसके लगाये हुए करों से होती है। बड़े बड़े कार्यों में प्रान्तीय सरकार भी म्युनिसिपैलिटियों की मदद करती है।

इस स्थानीय स्वराज्य से प्रजा को बड़ा लाभ हुआ है। क्योंकि उनको स्वयं अपना शासन करने का अवसर मिला है और उनको अपने उत्तरदायित्व पर कार्य करने का अभ्यास हुआ है। इसका भविष्य बड़ा उज्ज्वल है, क्योंकि भारतवासी इस भाँति स्वराज्य प्राप्त कर सकेंगे।

प्रश्न

१—भारतीय सरकार का शासन किस प्रकार होता है? कैबिनेट और पार्लियामेन्ट का भारतीय सरकार से क्या सम्बन्ध है?

२—प्रान्तीय सरकार का शासन किस प्रकार होता है? संक्षेप में लिखो।

३—स्थानीय स्वराज्य किसे कहते हैं? इसका कुछ हाल लिखो।

अध्याय ४०

देश-रक्षा

सेना—प्राचीन काल में केवल स्थल सेना ही काम में लाई जाती थी; परन्तु अब तीन प्रकार की सेना होती है। स्थल सेना, जलसेना और वायुसेना। सब सेना भारत सरकार की निगरानी में रहती है। उसका सबसे बड़ा अफ़सर प्रधान सेनापति अथवा कमाण्डर-इन-चीफ़ कहलाता है। वह भी प्रबन्ध कारिणी सभा का एक सदस्य है और वाइसराय को सेना के विषय में परामर्श देता है।

भारतवर्ष के लिए ब्रिटिश सिपाहियों और अफ़सरों की शिक्षा इंगलैण्ड ही में होती है। उसके लिए भारत को ही धन देना पड़ता है। अब हिन्दुस्तानी अफ़सर भी वहाँ जाने लगे हैं और भारत में देहरादून में एक सैनिक शिक्षा के लिए विद्यालय खोला गया है। इसमें इंगलैण्ड के विख्यात कालेज सैण्डहर्स्ट में प्रवेश करने के लिए नवयुवकों को योग्य शिक्षा दी जाती है।

पुलिस—कम्पनी के समय में पुलिस का प्रबन्ध अच्छा नहीं था। ग़दर के बाद सरकार ने पुलिस का सुधार करने में बहुत रुपया खर्च किया। पुलिस का प्रबन्ध प्रान्तीय सरकार द्वारा

होता है। प्रत्येक प्रान्त में पुलिस का एक सब से बड़ा अफ़सर होता है जिसको 'इन्सपेक्टर जनरल आफ़ पुलिस' कहते हैं। उसके अधीन डिप्टी इन्सपेक्टर जनरल होते हैं। प्रत्येक ज़िले में एक सुपरिण्टेण्डेण्ट होता है जो ज़िला पुलिस का हाकिम होता है। उसकी सहायता के लिए डिप्टी और असिस्टेन्ट सुपरिण्टेण्डेण्ट, इन्सपेक्टर, सब इन्सपेक्टर आदि अफ़सर होते हैं। इनके नीचे सिपाही होते हैं गाँव में एक चौकीदार रहता है जो गाँव की चौकसी रखता है।

हर प्रान्त में, राजद्रोह, षड्यन्त्र, जालसाज़ी इत्यादि बड़े बड़े अपराधों की खोज करने के लिए सी० आई० डी० या खुफ़िया पुलिस नामक विभाग रहता है। ये लोग साधारण वेष में ही रहते हैं। ये शहर में गुप्त स्थानों या जुआ के अड्डों इत्यादि का भी पता लगाते हैं। इनका बड़ा हाकिम एक यूरोपियन अफ़सर होता है जो डिप्टी इन्पेक्टर जनरल के ओहदे का होता है।

न्याय—हिन्दुस्तान में पहिले आजकल की सी अदालतें नहीं थीं। साधारणतः राजा स्वयं न्याय करता था और उसके नीचे अन्य राज्य पदाधिकारी भी इस काम के लिये होते थे। परन्तु अँग्रेज़ी राज्य में इस विभाग में बड़ा परिवर्तन हुआ न्याय के लिए अदालतें स्थापित हुईं और सरकार से वेतन पाने वाले हाकिम नियुक्त किये गए।

हमारी आजकल की आदलतें सन् १८६१ ई० के ऐक्ट द्वारा स्थापित हुई थीं। यहाँ की ऊँची अदालतें 'हाईकोर्ट' हैं। ये कलकत्ता, मदरास, बम्बई, इलाहाबाद, पटना, लाहौर और रंगून में हैं। इनमें जजों की संख्या बीस तक हो सकती है और

फौजदारी के मुहकमों में जूरी से फ़ैसला किया जाता है। यह कचहरी सब से ज्यादा सज़ा दे सकती है। इसके जजों की नियुक्ति सम्राट स्वयं करते हैं, उनके वेतन, पेन्शन आदि के नियम भारत मंत्री द्वारा ही बनाये गये हैं और वही उनको घटा बढ़ा सकता है। इस प्रकार ये कोर्ट भारत सरकार के अधीन नहीं होते और इनके क़ानूनों में संशोधन सिर्फ सम्राट के द्वारा ही किया जा सकता है।

अवध में चीफ कोर्ट है तथा कुछ सूबों में जुडीशल कमिश्नरों के कोर्ट हैं। ये कोर्ट कुछ कुछ हाई कोर्टों की तरह ही हैं। परंतु इनके अधिकार कुछ कम हैं।

हाईकोर्ट या चीफ़कोर्ट के नीचे ज़िला जज का न्यायालय होता है। वह दीवानी और फ़ौजदारी दोनों प्रकार के मुकदमे देख सकता है। फ़ौजदारी का काम करते समय वह सेशन्स जज कहलाता है।

प्रत्येक ज़िले में एक ज़िला एवं सेशन्स न्यायाधीश होता है। उसके अधीन फौजदारी के मुक़दमें करने के लिए तीन दर्जे के मजिस्ट्रेट होते हैं। दीवानी के मुक़दमें करने के लिए प्रत्येक ज़िले में सदरआला, मुन्सिफ इत्यादि होते हैं जो सब ज़िला न्यायाधीश के अधीन काम करते हैं। कहीं कहीं अदालत खफ़ीफ़ा भी स्थापित की गई है जो छोटे छोटे मामलों को जल्दी व कम खर्च में तै करती है। इनका निर्णय अन्तिम होता है।

आजकल के क़ानून में अपील करने की भी बहुत गुंजाइश रहती है। हाईकोर्ट तक के फैसले की अपील बादशाह की

प्रीवी काउन्सिल में हो सकती है। इसका निर्णय अन्तिम होता है। फिर इसकी कहीं अपील नहीं होती। यदि यह अदालत भारत में ही हो तो बड़ी सुविधा हो जाये और प्रजा व्यर्थ के खर्च और झंझट से बच जाय।

नये कानून के अनुसार भारतवर्ष के लिये एक फेडरलकोर्ट खोला जायगा। इसमें हाईकोर्टों के फ़ैसलों की अपील भी हो सकेगी। इसके फ़ैसलों की अपली प्रिवी कौंसिल में होगी।

पंचायतें—न्याय के काम में सरकार को पंचायतों से भी बहुत मदद मिलती है। वास्तव में पंचायतों की संस्था बड़ी पुरानी है। प्राचीन समय में ये गाँव के झगड़े निबटाने के अतिरिक्त गाँव के सुधार का भी उद्योग करती थीं। राजा केवल जटिल मामलों ही को तय करता था। मुसलमान बादशाहों ने भी इनको क़ायम रक्खा। अँग्रेज़ी राज्य में भी पंचायतों की उपयोगिता सिद्ध हो गई है। १९२० ई० में पंचायत ऐक्ट पास हुआ जिसका उद्देश्य फिर पंचायत को क़ायम करना था। आज कल की पंचायतें क़ानूनी सभाएँ हैं जिनके फ़ैसले क़ानून की दृष्टि से देखे जाते हैं। इनमें पाँच या सात सदस्य होते हैं। ये ज़िले के हाकिम द्वारा गाँव के छोटे छोटे झगड़े तै करने के लिए और गाँव में शान्ति रखने के लिये स्थापित की जाती हैं।

पंचायतें गाँव वालों का बहुत उपकार कर सकती हैं। वे गाँवों में सफ़ाई आदि रख सकती हैं। शिक्षा का प्रचार कर सकती हैं। गाँवों की कुरीतियों आदि को दूर कर सकती हैं और कृषक लोगों को इस बात पर बाध्य कर सकती हैं कि वे साफ़ रहें और अपने घरों को स्वच्छ रक्खें।

जेल—पहले जेलों की दशा बड़ी शोचनीय थी। अपराधियों को ठूंस ठूंस कर भर दिया जाता था। उनके साथ बड़ा अमानुषिक व्यवहार किया जाता था। न उन्हें समय पर भोजन मिलता था और न उनके स्वास्थ्य की ही चिन्ता की जाती थी। परन्तु अब दशा बदल गई है। प्रत्येक सूबे की सरकार के अधीन एक 'इन्सपेक्टर जनरल आफ़ प्रिज़न्स' रहता है जो सब जेलखानों की निगरानी करता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक ज़िले में जेलों की निगरानी के लिए कुछ अफ़सर रहते हैं। ज़िले के अन्य बड़े बड़े कर्मचारी भी जेल की देख-भाल कर सकते हैं। अब एक काउन्सिल का ग़ैर सरकारी सदस्य भी इस कार्य के लिए नियुक्त किया जाने लगा है। ये लोग जेल को देखकर उसकी दशा की रिपोर्ट करते हैं और सरकार उनकी बुराइयों को दूर करती है।

सरकार का अभिप्राय जेल बनाने से यह है कि जो अभियुक्त वहां पर भेजा जाय वह वहाँ से कुछ ऐसा कार्य सीख कर निकले कि वह फिर अपराध न करे। इसी लिए हम देखते हैं कि प्रत्येक जेल में क़ैदियों का स्वभाव एवं आचरण सुधारने का प्रयत्न किया जाता है। उनको ऐसे काम सिखलाये जाते हैं जैसे फर्श बनाना, बढ़ई का काम, दर्जी का काम इत्यादि जिससे कि वे जेल से छूटने के बाद अपना जीवन भली प्रकार से बिता सकें। वे फिर अभियुक्त न बनें एवं सुयोग्य नागरिक बनकर अपना जीवन बितायें।

जेलों के प्रबन्ध की ओर सरकार ने हाल में विशेष ध्यान दिया है। क़ैदियों की अच्छी तरह से देख-भाल की जाती है।

उनके स्वास्थ्य की ओर पूरी निगरानी रक्खी जाती है। इसके लिए प्रायः दो डाक्टर रहते हैं। अभियुक्तों को सुबह से शाम तक ९ घंटे ही काम करना पड़ता है। उन्हें दिन में दो बार खाना मिलता है और सुबह नाश्ते के लिए कुछ चने मिलते हैं। दिन में क़ैदी जेलखाने के अन्दर चाहे जहाँ घूम सकते हैं, परन्तु रात्रि में उन्हें अपनी कोठरियों में ही बन्द रहना पड़ता है। कोठरियाँ हवादार होती हैं और उनमें ज़्यादा तादाद में क़ैदी नहीं रक्खे जाते। जो क़ैदी अच्छी तरह से रहते हैं उनको समय से पहिले ही छोड़ दिया जाता है। स्त्रियों का जेल अलग होता है और उनके जमादार वगैरह स्त्रियाँ ही होती हैं। उनसे भी काम लिया जाता है।

पंद्रह वर्ष से कम आयु के बालकों को जेल में नहीं रक्खा जाता। उनके लिये रिफ़ार्मेटरी स्कूल बने हुए हैं जहाँ वे पढ़ते भी हैं और कुछ दस्तकारी भी सीखते हैं। हमारे प्रांत में चुनार जिला मिर्ज़ापुर में ऐसा स्कूल है। ज़्यादातर बालकों को धमका कर उनके संरक्षकों को सौंप दिया जाता है।

प्रश्न

१—भारतवर्ष की रक्षा के लिये सरकार ने क्या क्या उपाय किये हैं? संक्षेप में लिखो।

२—पंचायतों के विषय में तुम क्या जानते हो? संक्षेप में लिखो।

अध्याय ४१

देशी रियासतें

देशी रियासतों से भारतवर्ष के उन भागों का अभिप्राय है जिनका आन्तरिक शासन वहाँ के ही राजा और सरदार करते हैं। इन रियासतों का सम्बन्ध ब्रिटिश भारत से वाइसराय के द्वारा है। अर्थात् यदि रियासतों के राजा या सरदार कोई ऐसा कार्य करें जिसका असर ब्रिटिश भारत के मनुष्यों पर पड़े तो उन्हें वाइसराय की अनुमति लेनी पड़ती है। देशी रियासतों की तीन श्रेणियाँ हैं। प्रथम श्रेणी में बड़ी बड़ी रियासतें हैं। इन रियासतों का भारत सरकार से सीधा सम्बन्ध है; इनमें से प्रत्येक में एक रेज़ीडेन्ट रहता है। दूसरी श्रेणी में रियासतों के समूह हैं जिनको एजेन्सी कहते हैं; इनमें से प्रत्येक में वाइसराय का एक एजेन्ट रहता है। तीसरी श्रेणी में सैकड़ों छोटी छोटी रियासतें हैं। ये अधिकतर प्रान्तीय सरकारों के अधीन हैं। इनमें से कुछ में पोलिटिकल एजेन्ट रहते हैं और शेष की देख भाल ज़िले का कलक्टर या कमिश्नरी का कमिश्नर ही कर लेता है।

देशी रियासतों के निवासी अपने अपने नरेश की प्रजा हैं। यहाँ के राजा अपनी प्रजा से मालगुज़ारी इत्यादि वसूल करते

एवं दीवानी और फ़ौजदारी के मामलों के फैसले करते हैं। कहीं कहीं पर राजाओं के सिक्के भी चलते हैं; परन्तु वे सिर्फ़ रियासत की हद में ही चलते हैं। ब्रिटिश भारत में उनको सरकारी रुपया ही काम में लाना पड़ता है।

देशी रियासतों के प्रति सरकार की नीति है कि जब तक वे सरकार के प्रति राजभक्त बनी रहें और पुरानी सन्धियों का पूर्णतया पालन करती रहें तब तक सरकार उनकी रक्षा करेगी और उनके कार्य में अधिक हस्तक्षेप न करेगी। प्रत्येक राजा को वाइसराय की अनुमति एवं उचित परामर्श लेना आवश्यक ही नहीं, परन्तु अनिवार्य है। वे सरकार की अनुमति के बिना एक दूसरे से राजनैतिक व्यवहार नहीं कर सकते एवं नियत फ़ौज से ज़्यादा फ़ौज नहीं रख सकते।

जब कभी दो रियासतों अथवा रियासत और प्रान्तीय सरकार या भारत सरकार में कोई झगड़ा होता है तो उसकी जाँच के लिये वाइसराय एक कमीशन नियुक्त करता है जो इस झगड़े की जाँच करे।

सन् १९२१ से एक नरेन्द्रमण्डल की स्थापना हो गई है। जो विषय सब रियासतों से सम्बन्ध रखते हैं उन पर इस संस्था की सम्मति माँगी जाती है। यह एक प्रकार की सभा है जो वाइसराय को देशी रियासतों के बारे में सलाह देती है; परन्तु इससे अब तक कोई विशेष लाभ नहीं हुआ है।

अनेक स्थानों में रियासतों का शासन प्रबंध ब्रिटिश भारत के शासन प्रबंध से ख़राब था। परन्तु हर्ष की बात है कि अब

राजा लोग बहुत चेत गये हैं और शासन सुधार में लग गये हैं। इनमें विशेषकर हैदराबाद, मैसूर, बड़ौदा इंदौर और ग्वालियर ने इस ओर बहुत ध्यान दिया है। भारत का भविष्य-राज्यविधान अब कानून के रूप में आ गया है। इसके अनुसार एक संघ शासन (फेडरल गवर्नमेंट) स्थापित होगा जिसमें रियासतें भी सम्मिलित होंगी। उसकी उपयोगिता बहुत कुछ इन देशी रियासतों पर निर्भर रहेगी। आशा है कि देशी रियासतें के भारत के शासन-विधान में आ जाने से समस्त भारत फिर एकता के सूत्र में बँध जावेगा।

प्रश्न

१—भारत सरकार का देशी रियासतों से क्या सम्बन्ध है ? संक्षेप में लिखो।

२—नये कानून ने उनके लिये क्या नई व्यवस्था की है ?

अध्याय ४२

राजा और प्रजा

कर्त्तव्य—हर एक राजा का मुख्य कर्त्तव्य देश की रक्षा करना और देश में शान्ति स्थापित रखना है। देश के शत्रु दो प्रकार के होते हैं। एक तो बाहरी, जो देश पर आक्रमण करके लूट-मार करते हैं और दूसरे वह जो देश के अन्दर ही होते हैं। जैसे विद्रोही सरदार, चोर लुटेरे आदि। बाहरी शत्रुओं से प्रजा को बचाने के लिए एक बड़ी सेना की आवश्यकता होती है और भीतरी शत्रुओं को दबाने के लिए योग्य शासन-प्रबन्ध, न्याय और पुलिस आदि का उचित प्रबंध होना आवश्यक है। हम पढ़ चुके हैं कि भारत सरकार ने हमारी रक्षा का कैसा अच्छा प्रबन्ध किया है और अपने योग्य शासन-प्रबन्ध से, अपनी विशाल सेना से और अपने उचित न्याय से शान्ति और सुख का साम्राज्य स्थापित कर दिया है।

इसके अतिरिक्त राजा के और भी बहुत से कर्त्तव्य हैं। जैसे प्रजा को कर्त्तव्यशील बनाना, उसकी शिक्षा का उचित प्रबन्ध करना, उसके कष्टों को दूर करना और हर प्रकार से उसकी उन्नति की कोशिश करना। प्राचीन समय में रक्षा का ही काम इतना ज़बरदस्त होता था कि प्रजा की उन्नति की ओर बहुत कम

ध्यान दिया जाता था। इसमें सन्देह नहीं कि बहुत से ऐसे बड़े बड़े राजा-महाराजा हो गये हैं जिन्होंने प्रजा के सुख और उन्नति के लिए बहुत कुछ किया; परन्तु उनका काम बहुत दिनों तक कायम न रह सका। शीघ्र ही किसी बाहरी आक्रमण ने अथवा आन्तरिक विद्रोह ने उनका किया कराया काम मिट्टी में मिला दिया। हमको यह देखना चाहिये कि हमारी ब्रिटिश सरकार ने इन कर्त्तव्यों का कहाँ तक पालन किया है।

किसानों की दशा—भारत एक कृषि प्रधान देश है। यहाँ के लोग अधिकतर गाँवों में रहते और खेती बारी करते हैं। इसलिए देश की उन्नति किसानों की उन्नति पर ही निर्भर है। आजकल भारतीय किसानों की दशा अत्यन्त शोचनीय है। उन्नति करना तो अलग रहा, उनको पेट भर भोजन भी नहीं मिलता। ये बिचारे दिन-रात अपना पसीना बहा कर जो कुछ भी पैदा करते हैं सब महाजन को सूद में ही दे देते हैं। महाजन इन पर तरह तरह के अत्याचार करते हैं। अन्त में महाजन इनकी सब ज़मीन आदि हड़प लेते हैं। ये गली गली भीख मांगते और ठोकरें खाते फिरते हैं। इन महाजनों के पंजे से बचने के लिए अभी हाल में हमारी सरकार ने एग्रीकलचरेल रिलीफ़ ऐक्ट आदि अनेक कानून पास किए हैं। इनके अतिरिक्त ज़मींदारों के अत्याचार से बचाने के लिये कानून द्वारा किसानों की बड़ी रक्षा की गई है।

सहयोगी सभाएँ—भारतीय सरकार ने किसानों की रक्षा का और उनको महाजन के चंगुल से छुड़ाने का उचित प्रबन्ध किया है। जगह जगह सहयोगी सभाएँ खोल दी गई हैं। ये सभाएँ किसानों को कम से कम व्याज पर रुपया देती हैं।

प्रत्येक किसान कुछ हिस्से खरीद कर इन सभाओं का मेम्बर हो सकता है और कम ब्याज पर रुपया ले सकता है। इससे किसानों को दो लाभ होते हैं :—एक कम ब्याज पर क़र्ज़ मिल सकता है, दूसरा इस ब्याज की आमदनी से जो लाभ होता है वह भी इन्हीं लोगों में बट जाता है और किसानों को सहायता पहुँचाता है।

इन सभाओं का प्रत्येक प्रान्त में एक बड़ा अफ़सर होता है। उसके नीचे बहुत से अफ़सर होते हैं जो गाँव गाँव घूम कर इनका प्रचार करते हैं और सहयोग का लाभ दिखा कर उनके हृदय में इनके प्रति श्रद्धा पैदा करते हैं। यद्यपि अज्ञानता के कारण अभी तक किसानों ने इन संस्थाओं से पूरा लाभ नहीं उठाया है; परन्तु इसमें सन्देह नहीं कि ये सभाएँ भविष्य में बड़ी लाभदायक होंगी। साथ ही साथ शिक्षा प्रचार से भारतीय किसान भी और देशों के किसानों की तरह शिक्षित, धनवान और सभ्य हो रहे हैं।

कृषि विभाग—किसानों की त्रुटियों को दूर करने के लिए सरकार ने एक कृषि विभाग भी बनाया है। यह सन् १९१९ के ऐक्ट के अनुसार प्रान्तीय मन्त्रियों के हाथ में दे दिया गया है। कृषि विभाग की ओर से जगह जगह 'फ़ार्म' भी बने हुए हैं। फ़ार्म एक अफ़सर के अधीन होता है जो आस पास के गाँवों में जाकर खेती करने की नवीन प्रणालियों और नये नये यन्त्रों का प्रचार करता है। किसानों को खेती करके दिखाया जाता है कि किस प्रकार वे अच्छे बीज से अधिक अनाज पैदा कर सकते हैं। उनको यन्त्रों का इस्तेमाल बताया जाता है और भिन्न भिन्न प्रकार

की खादों की उपयोगिता बताई जाती है। इस प्रकार इन 'फ़ार्मों' से किसानों को बहुत लाभ हो सकता है।

कृषि विभाग ने जगह जगह कृषि पाठशालाएँ भी खोल रक्खी हैं। हमारे प्रान्त में बुलन्दशहर में एक ऐसी पाठशाला है जहाँ हिन्दुस्तानी भाषा में शिक्षा दी जाती है और कृषि सम्बन्धी बड़ी बड़ी उपयोगी बातें बताई जाती हैं।

इसके अतिरिक्त समय समय पर कृषि सम्बन्धी मेले और प्रदर्शनियाँ भी होती हैं। इन मेलों में अच्छे से अच्छे बीज, हल, मशीन, खाद, मवेशी आदि इकट्ठे किये जाते हैं। मैजिक लैन्टर्न द्वारा बीजों के रोग आदि किसानों को समझाये जाते हैं जिससे कि वे खेती में उन्नति कर सकें।

अकाल—किसानों का सबसे बड़ा शत्रु अकाल है। वर्षा न होने से खेती नहीं होती और सैकड़ों किसान भूखों मर जाते हैं। इतिहास देखने से पता लगता है कि मुसलमान बादशाहों के समय में ऐसे ऐसे भीषण अकाल पड़े कि आदमी आदमी को खाने लगे। माँ-बाप पेट के लिए अपने बच्चों को बेंच डालते थे। जगह जगह लाशों के ढेर लग जाते थे। इन बादशाहों ने अकालों को रोकने के बड़े प्रयत्न किये; परन्तु कुछ फल न हुआ। हर्ष की बात है कि वर्तमान समय में वैज्ञानिक आविष्कारों की सहायता से ब्रिटिश सरकार ने अकाल के प्रकोप को बहुत कुछ कम कर दिया है।

अकाल को रोकने के लिए और अकाल-पीड़ितों की रक्षा के लिए सरकार ने बड़ा यत्न किया है। जगह जगह नहरें खुदवा दी हैं जिससे खेती हो सके। अकाल के समय मालगुज़ारी

अथवा लगान में बहुत कुछ छूट कर दी जाती है। तकावी बाँटी जाती है और अनेक तरह से उनको सहायता पहुँचाई जाती है। ऐसे समय पर सहायता पहुँचाने के लिए सरकार के पास कुछ रुपया अलग रहता है जो 'फ़ेमीन रिलीफ़ फ़राड' कहलाता है। ज़िले का अफ़सर बड़े बड़े धनाढ्यों को इकट्ठा करके एक कमेटी बनाता है और इस प्रकार धन से सहायता पहुँचाई जाती है। इसके अतिरिक्त ऐसे समय पर कोई न कोई ऐसा काम भी सरकार की ओर से छेड़ दिया जाता है जिससे मज़दूरी करके लोग पेट पाल सकें। सच पूछो तो अकाल को रोकने में पहले किसी बादशाह ने भी इतनी सफलता नहीं प्राप्त की जैसी वर्तमान सरकार ने प्राप्त की है।

स्वास्थ्य-रक्षा—मनुष्यों के सुख दुःख अधिकतर उनके स्वास्थ्य के ऊपर निर्भर हैं। इस लिए भारत सरकार ने स्वास्थ्य-रक्षा की ओर भी विशेष ध्यान दिया है। इसे सरकार ने दो मोहकमों में बाँट दिया है। एक मोहकमा तो रोगियों के इलाज के लिए है और दूसरा स्वास्थ्य के बारे में शिक्षा देने और बीमारी को फैलने से रोकने के लिए। रोगियों की चिकित्सा के लिए जगह जगह अस्पताल खुले हुए हैं जहाँ गरीबों को मुफ़्त दवा मिलती है। स्त्रियों के लिए अलग अस्पताल बने हुए हैं। जब कोई बीमारी फैलती है तब उसके रोकने का भी उपाय किया जाता है। सरकारी अफ़सर घूम घूम कर इन रोगों से बचने के उपाय बताते हैं। मैजिक लालटेनों से रोगों की उत्पत्ति के कारण दिखाये जाते हैं। टीके लगाये जाते हैं और सफ़ाई की ओर ध्यान दिया जाता है जिससे बीमारी न फैल सके।

इसके अतिरिक्त लोगों का स्वास्थ्य ठीक रखने के लिए हर प्रकार से उत्साहित किया जाता है। कहीं कहीं 'बेबी वीक' भी मनाया जाता है जिसमें सबसे तनदुरुस्त बच्चे को इनाम दिया जाता है। स्कूलों में ड्रिल कराया जाता है। लड़कों का स्वास्थ्य देखने के लिए डाक्टर रहते हैं। इस प्रकार हर तरह का यत्न किया जाता है कि हमारी भावी सन्तान स्वस्थ और बलवान हो।

शिक्षा—प्रत्येक सभ्य राज्य का यह धर्म है कि वह अपनी प्रजा को सुशिक्षित बनावे। इसी लिए ब्रिटिश सरकार ने भी शिक्षा का एक विभाग बनाया है। सन् १९१९ के ऐक्ट के अनुसार वह विभाग भी मंत्रियों के हाथ में आ गया है।

प्रारम्भिक शिक्षा छोटे छोटे प्राइमरी स्कूलों में दी जाती है जिसमें लिखना-पढ़ना हिसाब-किताब आदि सिखाया जाता है जो सब श्रेणी के लोगों के लिए लाभदायक है। शहरों में बड़े बड़े हाई स्कूल बने हुए हैं जहाँ अँग्रेज़ी शिक्षा दी जाती है। इन स्कूलों को सरकार की ओर से भी सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त जिलों में ऐसे स्कूल भी हैं जिनका कुल खर्चा सरकार ही देती है।

ऊँचे दर्जे की शिक्षा के लिए बड़े बड़े कालेज और विश्व-विद्यालय बने हुए हैं। इनको भी सरकार की ओर से सहायता मिलती है। भारत में इस समय कलकत्ता, बम्बई, मद्रास, पंजाब, आदि १७ विश्व विद्यालय हैं। हमारे प्रांत में इलाहाबाद, बनारस, लखनऊ, अलीगढ़ और आगरा में विश्वविद्यालय हैं।

इस शिक्षा के अतिरिक्त सरकार ने विशेष शिक्षा और

कला-कौशल सम्बन्धी शिक्षा की ओर भी ध्यान दिया है। इन्जीनियरी, डाक्टरी, कृषि आदि के भी कालेज हैं। कहीं कहीं बढ़ई, लोहार आदि का काम सिखाने के लिये भी स्कूल खुले हुए हैं।

सरकार का स्त्री-शिक्षा का कार्य भी सराहनीय है। जगह जगह स्कूल और कालेज खोले गये हैं जहाँ अध्यापिकाएँ पढ़ाती हैं। लड़कियों को उत्साहित किया जाता है कि वे भी पढ़ें; कहीं कहीं तो अनिवार्य शिक्षा प्रणाली का भी प्रयोग किया गया है। अतएव अब स्त्रियाँ बड़ी उन्नति कर रही हैं और वे वकालत, डाक्टरी, अध्यापन आदि का भी काम करने लगी हैं और मैजिस्ट्रेट भी होती हैं तथा कौंसिलों, म्युनिसिपैल और डिस्ट्रिक्ट बोर्डों की सदस्या भी होती हैं।

किसी देश का भविष्य बहुत कुछ शिक्षा ही पर निर्भर है। जब तक भारतवासी शिक्षा की ओर ध्यान नहीं देते उन्नति नहीं हो सकती। सरकार किसी को शिक्षा पाने के लिए बाध्य नहीं कर सकती। यदि आज भारतवासी अन्य देश के लोगों की तरह शिक्षित होते तो देश की यह दशा न होती।

प्रश्न

सरकार ने हमारी उन्नति के लिए क्या क्या उपाय किये हैं? संक्षेप में लिखो।

अध्याय ४३

ब्रिटिश शासन काल पर एक दृष्टि

मुग़ल साम्राज्य के नष्ट भ्रष्ट हो जाने पर भिन्न भिन्न जातियों ने भारत में साम्राज्य स्थापित करने का यत्न किया ; परन्तु सब निष्फल रहे। केवल अँग्रेज़ ही सफल हुए। इन्होंने अपने बाहुबल, अपनी बुद्धिमानी तथा अपनी योग्यता से समस्त भारतवर्ष पर विजय पाई और थोड़े ही काल में एक शान्ति पूर्ण राज्य स्थापित कर दिया।

अँग्रेज़ों ने आकर भारतवर्ष को संसार का एक टुकड़ा बना दिया। अब तक इस देश का संसार ही निराला था। सारे भूखण्ड से पृथक यह अपनी ही धुन में मस्त था। विदेशों से इसका संबंध हो जाता था परंतु वह बहुत कम और उसका प्रभाव भी बहुत ही कम पड़ता था। अँग्रेज़ों ने इसका योरोपीय देशों से घनिष्ठ सम्बन्ध करा दिया। भारत वर्ष ब्रिटिश साम्राज्य का एक भाग हो गया। भिन्न भिन्न जातियों से इसका समागम होने लगा। फल यह हुआ कि हर क्षेत्र में घोर परिवर्तन हो गया। भारतवर्ष आज वह भारतवर्ष नहीं है जो १०० वर्ष पहले था। इसकी सारी काया ही पलट गई है।

राजनैतिक--सब से बड़ा परिवर्तन राजनैतिक क्षेत्र में हुआ। जिस समय अँग्रेज़ लोग आये उस समय यहाँ पर राष्ट्रीय एकता और देश सेवा का नाम भी न था और जो कुछ भावपूर्व काल के थे भी वे लुप्त हो चुके थे। १८८५ में मिस्टर ह्यूम ने कांग्रेस की नींव डाली। बड़े समारोह से इसका जलसा मनाया गया। सब प्रान्तों के प्रतिनिधि इकट्ठे हुए। परस्पर के समागम से प्रान्तीय विभिन्नता दूर हो गई। भारतीय शासन-सुधार की ध्वनि होने लगी। एकता का बीज बो दिया गया।

२० वर्ष बाद मिस्टर गोखले, लोकमान्य तिलक, लाला लाजपत राय आदि महापुरुषों ने मि० ह्यूम के लगाये हुए वृक्ष को खूब सींचा। कांग्रेस दिन दिन ज़ोर पकड़ती गई। इसमें एक गर्म दल पैदा हो गया। ये लोग केवल शासन-सुधार से ही सन्तुष्ट न हुए। ये भारत में पूर्ण स्वराज्य स्थापित करना चाहते थे।



लाला लाजपतराय

कांग्रेस का ज़ोर बराबर बढ़ता ही रहा। हिन्दू और मुसलमान सब एक स्वर से स्वराज्य माँगने लगे। महात्मा गाँधी ने १९२१ ई० में असहयोग आन्दोलन शुरू किया। पंडित मोतीलाल नेहरू, श्रीयुत सी०

आर० दास, मौलाना मोहम्मदअली और मौलाना शौक़तअली ने उनकी बड़ी सहायता की। सारे देश में बड़ी उथल-पुथल मच गई।



पं० मोतीलाल

असहयोग आन्दोलन किस प्रकार दबा दिया गया इसका हाल तुम पहले पढ़ चुके हो। इस आन्दोलन ने यह अवश्य सिद्ध कर दिया कि भारतवासी एकता के सूत्र में बंध चुके हैं। राजनैतिक जागृति हो चुकी है। १९२९ ई० में कांग्रेस ने फिर ज़ोर पकड़ा। अब की बार महात्मा गाँधी ने सरकारी क़ानूनों के तोड़ने का बीड़ा उठाया। इसके बाद जो कुछ हुआ वह हमारी

आँखों के सामने है और उसे लिखने की आवश्यकता नहीं। हर्ष की बात है कि सरकार ने भी भारतवासियों की माँग को पूरा करने का वचन दिया है।

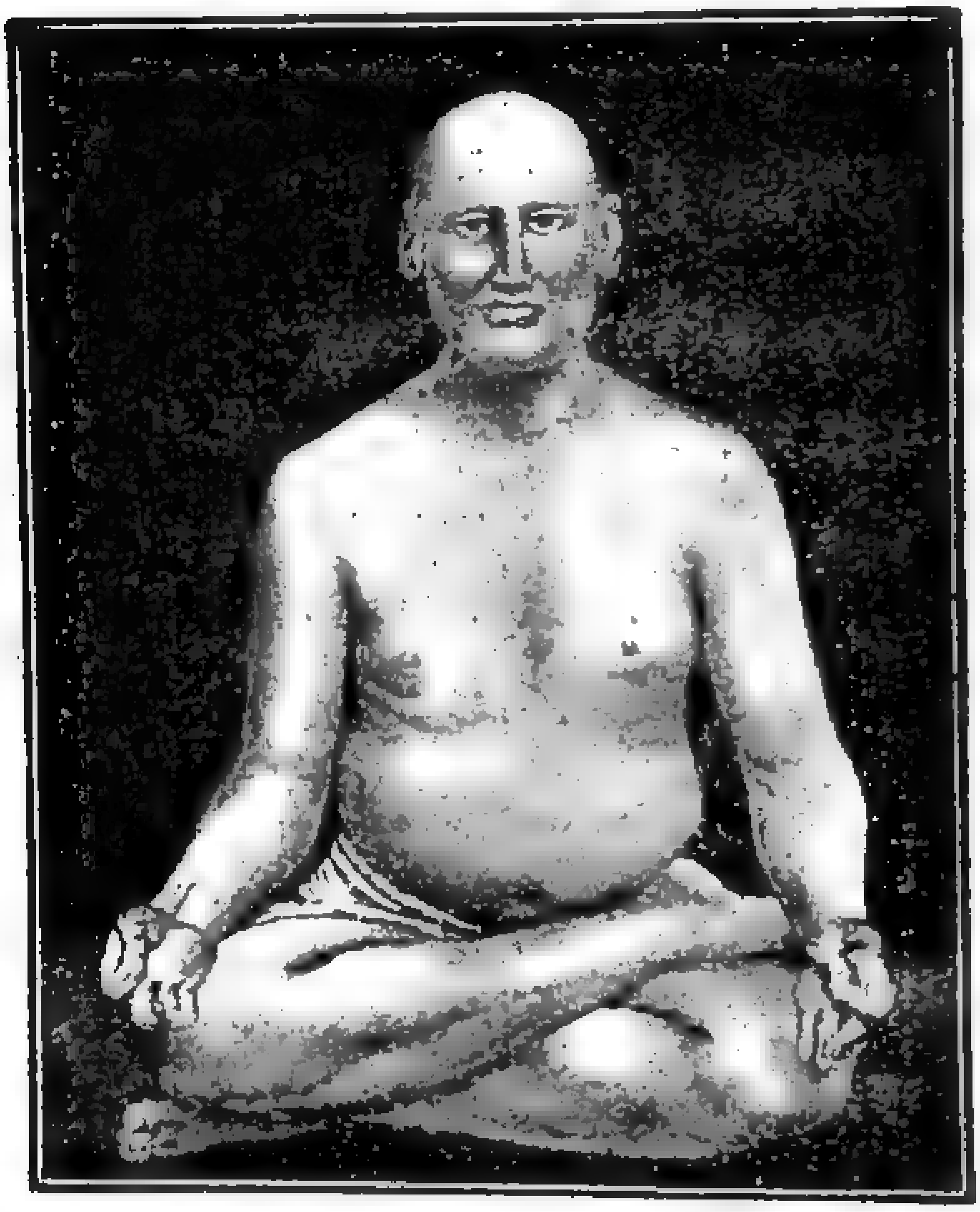


सी० आर० दास

धार्मिक—अँग्रेज़ों के शासन-काल में कई एक धार्मिक नेता भारतवर्ष में उत्पन्न हुए। स्वामी रामतीर्थ और स्वामी विवेकानन्द का नाम किसने नहीं सुना। इन लोगों ने चारों ओर घूम घूम कर अपने धर्म का प्रचार किया। स्वामी विवेकानन्द तो अमेरिका भी गये और वहाँ भी इन्होंने प्रचार किया। ये लोग

वेदान्ती थे। इनके विचारों का बड़ा असर पड़ा और आज इनके सिद्धान्तों को मानने वाले हर देश में मिलते हैं।

इसी समय स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आर्य्य-समाज की नींव डाली। ये प्राचीन वैदिक सिद्धान्तों में विश्वास करते थे। इन्होंने भी चारों ओर घूम घूम कर अपने धर्म का प्रचार किया। इनके सिद्धान्तों को मानने वाले भारत के कोने कोने में पाये जाते हैं। दूर देशों में भी जैसे इंगलैण्ड, अमेरिका आदि में इस मत के प्रचार के लिए आर्य्य-समाज स्थापित किया गया है।



स्वामी दयानन्द सरस्वती

सामाजिक—इसमें सन्देह नहीं कि पिछले कुछ वर्षों में समाज ने बड़ी उन्नति की है; फिर भी अभी समाज की दशा अत्यन्त शोचनीय है। सब से पहले समाज की बुराइयों को दूर करने की आवाज़ राजा राममोहनराय ने उठाई। यह उन्हीं के परिश्रम का फल था कि सती-प्रथा बन्द हो गई। उन्होंने

जातीय बन्धन को तोड़ने का भी बहुत कुछ उद्योग किया। उनका स्थापित किया हुआ ब्राह्मसमाज आज तक मौजूद है।

स्वामी दयानन्द ने भी समाज को सुधारने का बड़ा यत्न किया। ब्रह्मचर्य्य, विधवा विवाह आदि पर बड़ा जोर दिया। बाल-विवाह और जातीय बन्धन का विरोध किया। इसमें बहुत कुछ सफलता भी प्राप्त की। मिसेज़ बेसेन्ट ने भी अपनी "थियासोफिकल सोसाइटी" द्वारा भारतवासियों में भ्रातृभाव पैदा करने का प्रयत्न किया; फिर भी जातीय बन्धन भारतवासियों की उन्नति को आज तक रोके हुए है।



पं० मदन मोहन मालवीय

हाल ही में महात्मा गांधी ने भी अछूतोद्धार का बीड़ा उठाया है। उन्होंने थोड़े ही दिनों की कठिन तपस्या से वह काम कर दिखाया है जो सैकड़ों वर्षों में भी न हुआ था। हिन्दुओं के नेता परिडत मदनमोहन मालवीय जी भी इस काम को बड़े उत्साह से कर रहे हैं। ईश्वर इन लोगों के उद्योग में सफलता प्रदान करे।

मुसलमानों में धार्मिक तथा सामाजिक सुधार—मुसलमानों के सब से पहले नेता जिन्होंने धर्म और और समाज की बुराइयों को दूर करने का भरपूर प्रयत्न किया, बरेली के रहने वाले सय्यद अहमद थे। ये १८३१ ई० में सिक्खों से लड़ते हुए मारे गये। इनके बाद इनके चेले मौलवी करामत अली ने पूर्वी बंगाल में घूम घूम कर इनके विचारों का प्रचार किया। १८७० ई० के लगभग मौलवी चिराग़ अली ने सामाजिक बुराइयों को दूर करने का भरसक प्रयत्न किया। परन्तु इन सब लोगों को अधिक सफलता प्राप्त नहीं हुई। कारण यह था कि मुसलमानों के अन्दर धार्मिक कट्टरता और कौमी जोश कूट कूट कर भरा हुआ था। यदि देश और समय के अनुसार उनके आचार विचारों में कोई परिवर्तन करने का यत्न करता तो वे उस पर ही संदेह करने लग जाते थे।

मुसलमानों के सब से बड़े सुधारक सर सय्यद अहमद ख़ाँ कहे जा सकते हैं। राजा राम मोहन राय की तरह इनको पश्चिमी सभ्यता, साहित्य, कला और विज्ञान में विश्वास था। यह समझते थे कि यदि मुसलमानों को पश्चिमी शिक्षा मिलेगी तो उनके समाज में स्वयं ही सुधार हो जायेगा। इसी अभिप्राय से इन्होंने अलीगढ़ में एक कालेज स्थापित किया। इस कालेज के द्वारा मुसलमानों ने बड़ी उन्नति की है और यह इन्हीं के परिश्रम का फल था कि मुसलमान लोगों में भी राजनैतिक जागृति हो गई और वे भी सुधार की ओर बढ़ने लगे।

इसी समय में मुसलमानों में एक और भी बड़े नेता हुए जिन्होंने अपनी जाति के लोगों में जागृति उत्पन्न कर दी। इनका

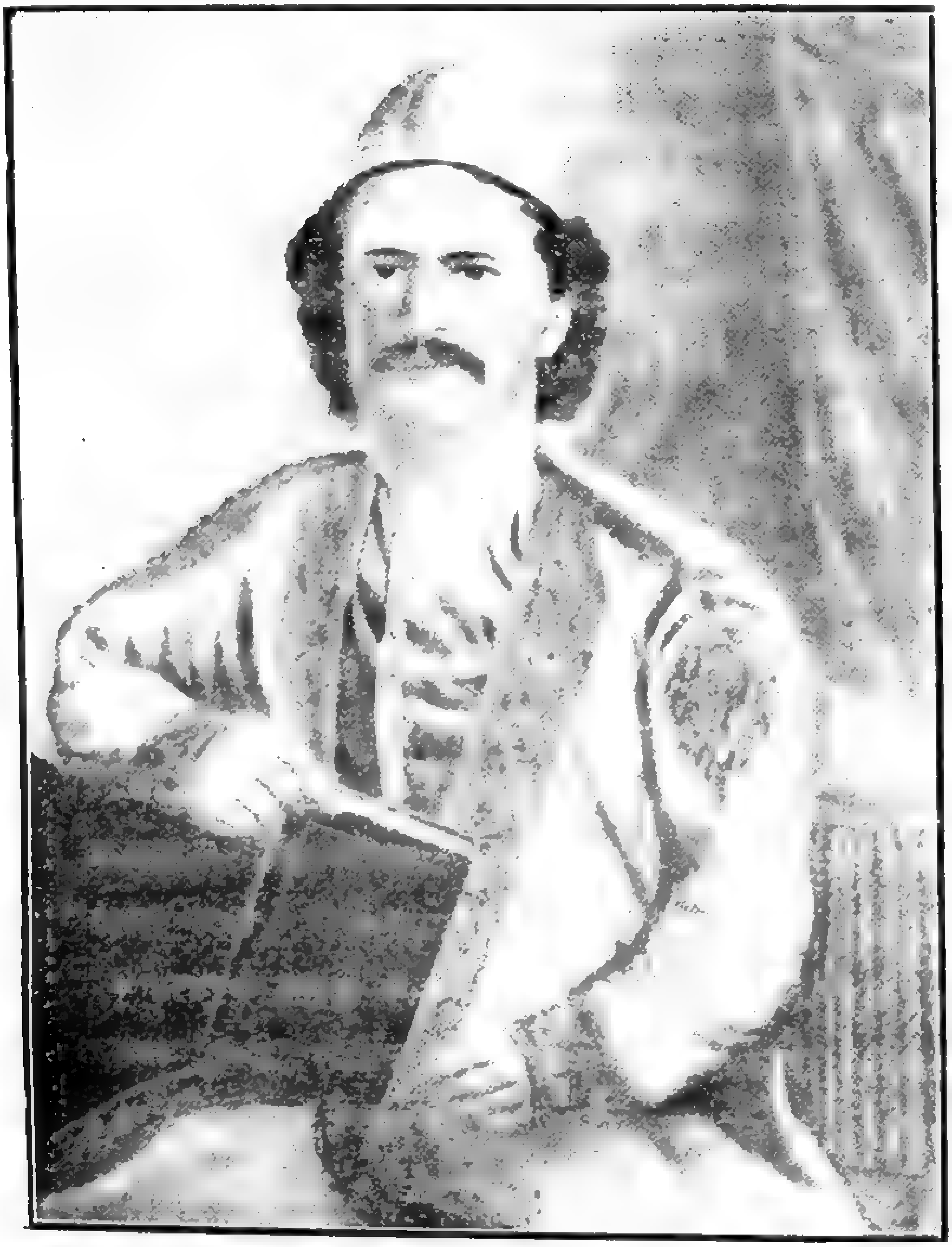
नाम मिर्ज़ा गुलाम अहमद क़ादियानी था । इनका कहना था कि मुसलमान लोग अपने धर्म को भूल कर नीचे गिर गये हैं। जब तक वे मन, वचन, कर्म से धर्म की सेवा न करेंगे उनका कल्याण न होगा। इनका विश्वास था कि सब धर्म ईश्वर के ही बनाये हुए हैं परन्तु इस्लाम धर्म सब से श्रेष्ठ है। इनके सिद्धान्तों को मानने वाले अब भी भारत वर्ष में और अधिकतर पंजाब में पाये जाते हैं। हाल ही में विलायत में भी इन्होंने अपना एक समाज स्थापित कर लिया है।

साहित्य, कला और विज्ञान—जिस देश में राजनैतिक

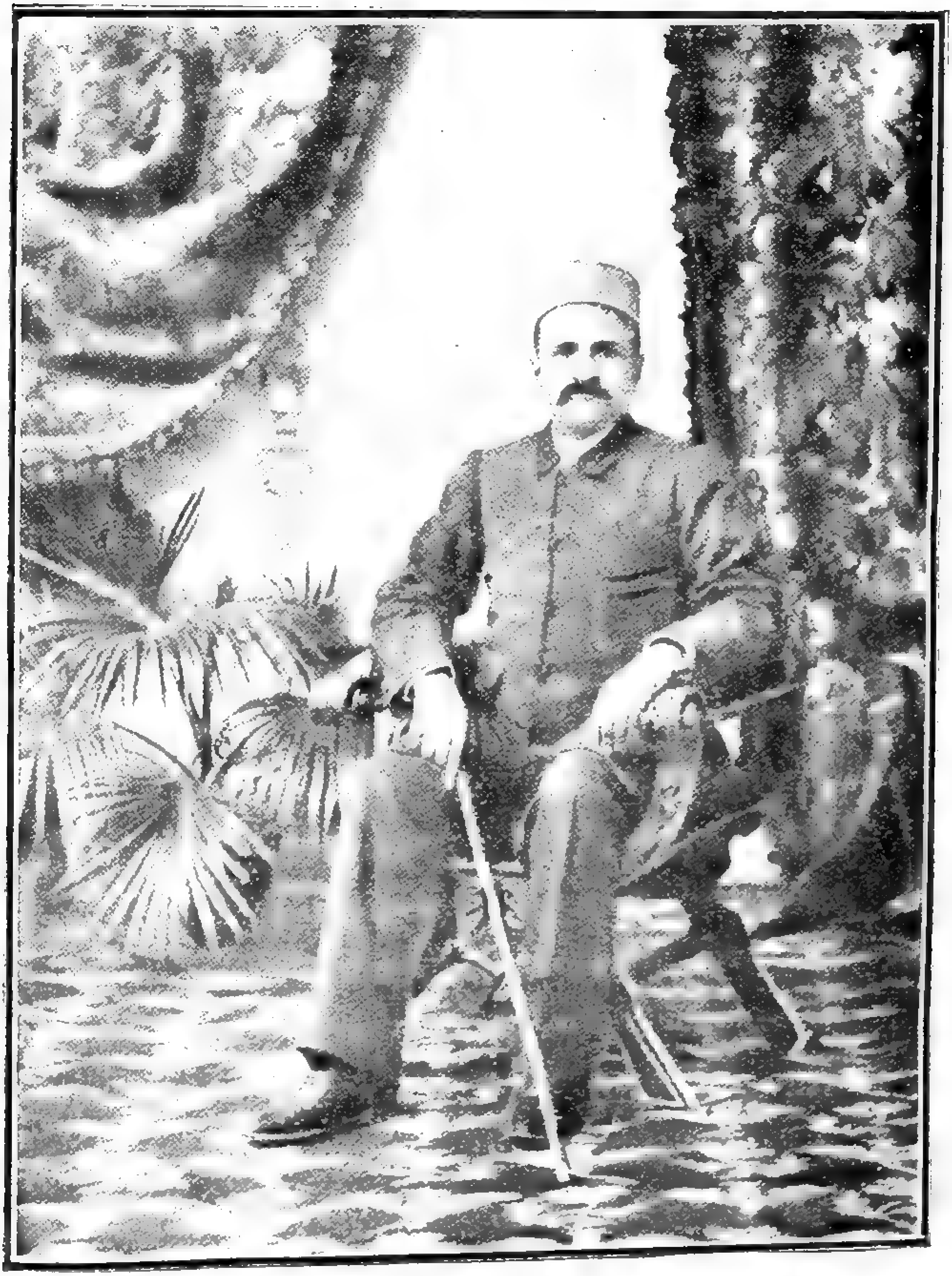


पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी

गड़बड़ी फैली हुई हो, समाज में अशान्ति हो, उस देश में साहित्य, कला और विज्ञान की उन्नति होना असम्भव है। फिर



भारतेंदु बाबू हरिश्चन्द्र



पं० श्रीधर पाठक

भी यह देख कर बड़ा आश्चर्य्य होता है कि इस समय में भारतवासियों ने इस ओर भी बहुत कुछ उन्नति की है।



बाबू जगन्नाथ दास रत्नाकर

साहित्य के क्षेत्र में, हिन्दी, उर्दू, बंगला, गुजराती, मराठी, तामिल,

तेलेगू, मलयालम् आदि भाषाओं की इस समय बड़ी उन्नति हुई। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि चन्द्रशेखर और पद्माकर इसी समय में



पं० बालकृष्ण भट्ट

हुए। इनकी मनोहर कवितायें आज तक बड़े चाव से पढ़ी जाती

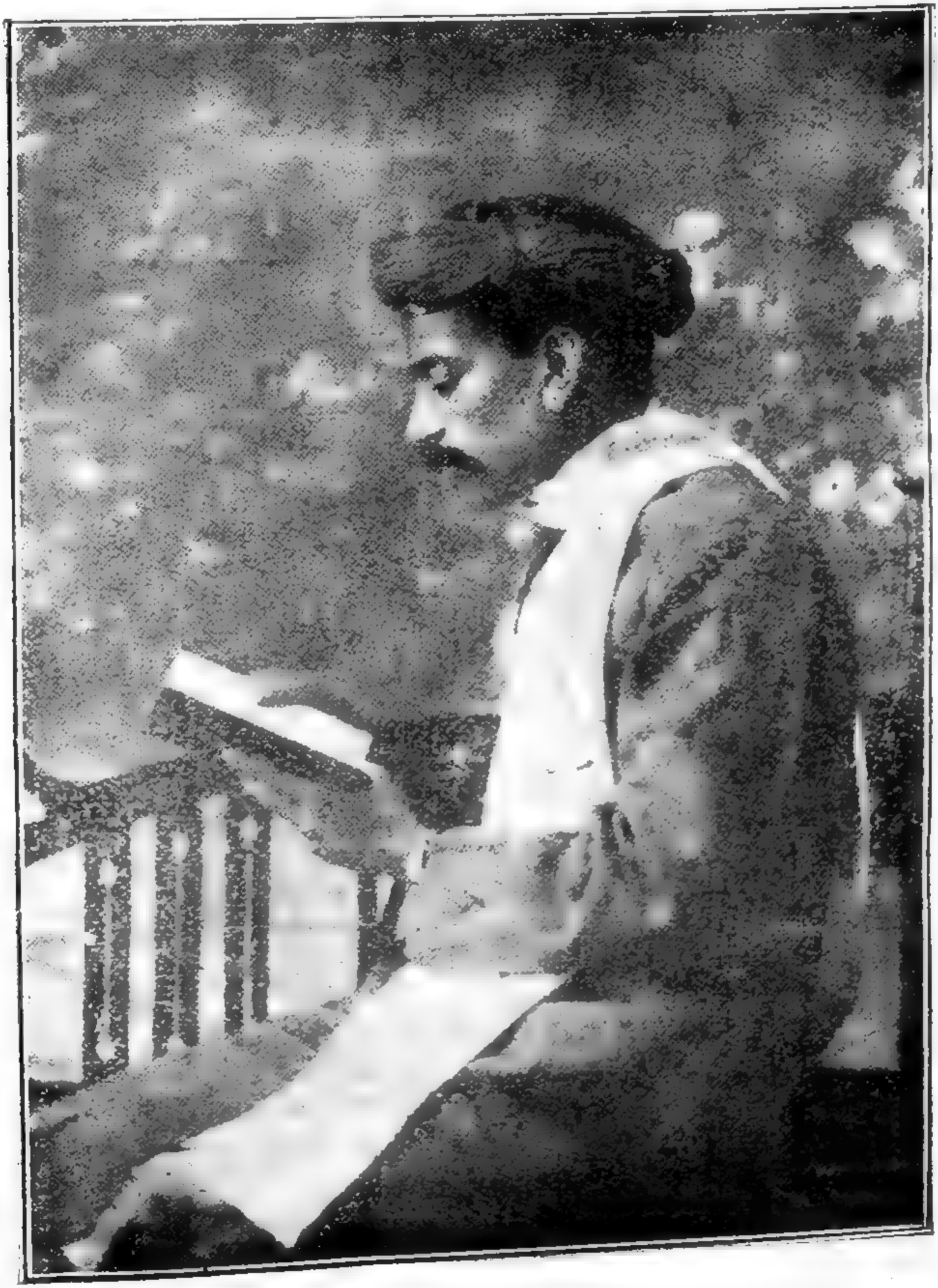
हैं। इनके अतिरिक्त राजा लक्ष्मण सिंह, भारतेन्दु बाबू हरिश्चन्द्र और पं० श्रीधर पाठक आदि ने हिन्दी भाषा की अच्छी उन्नति



पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय

की है। इनकी कविता तथा लेखनी अत्यन्त मोहक हैं। ब्रज भाषा के प्रसिद्ध कवि पं० सत्यनारायण, बाबू जगन्नाथ दास

रत्नाकर भी इसी समय में हुए। आधुनिक समय में कविता में पं० अयोध्यासिंह उपाध्याय, बाबू मैथिलीशरण गुप्त आदि अनेक



बाबू मैथिली शरण गुप्त



श्रीयुत प्रेमचन्द

प्रसिद्ध साहित्यकार हैं। गद्य के अच्छे लेखक स्वर्गीय पं० बाल कृष्ण भट्ट, पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी और श्री प्रेमचन्द जी हुए हैं।

इस समय में उर्दू भाषा का भी बड़ा उत्कर्ष हुआ। उर्दू के



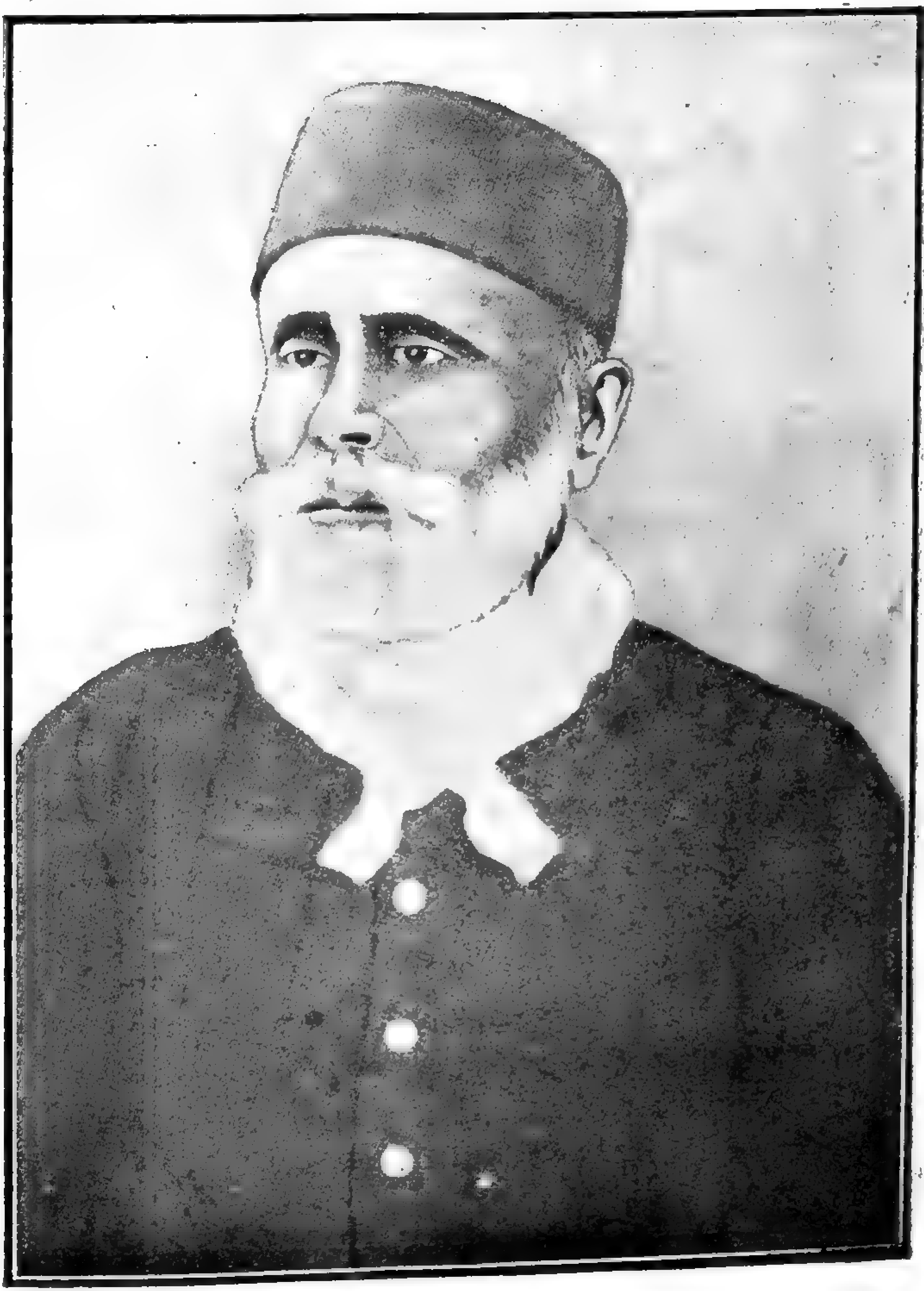
ग़ालिब

प्रसिद्ध कवि ग़ालिब और अनीस इसी समय में हुए। लखनऊ

के प्रसिद्ध लेखक पण्डित रतन नाथ सरशार ने भी इसी समय में



पं० रतननाथ सरशार



अल्ताफ़ हुसेन हाली



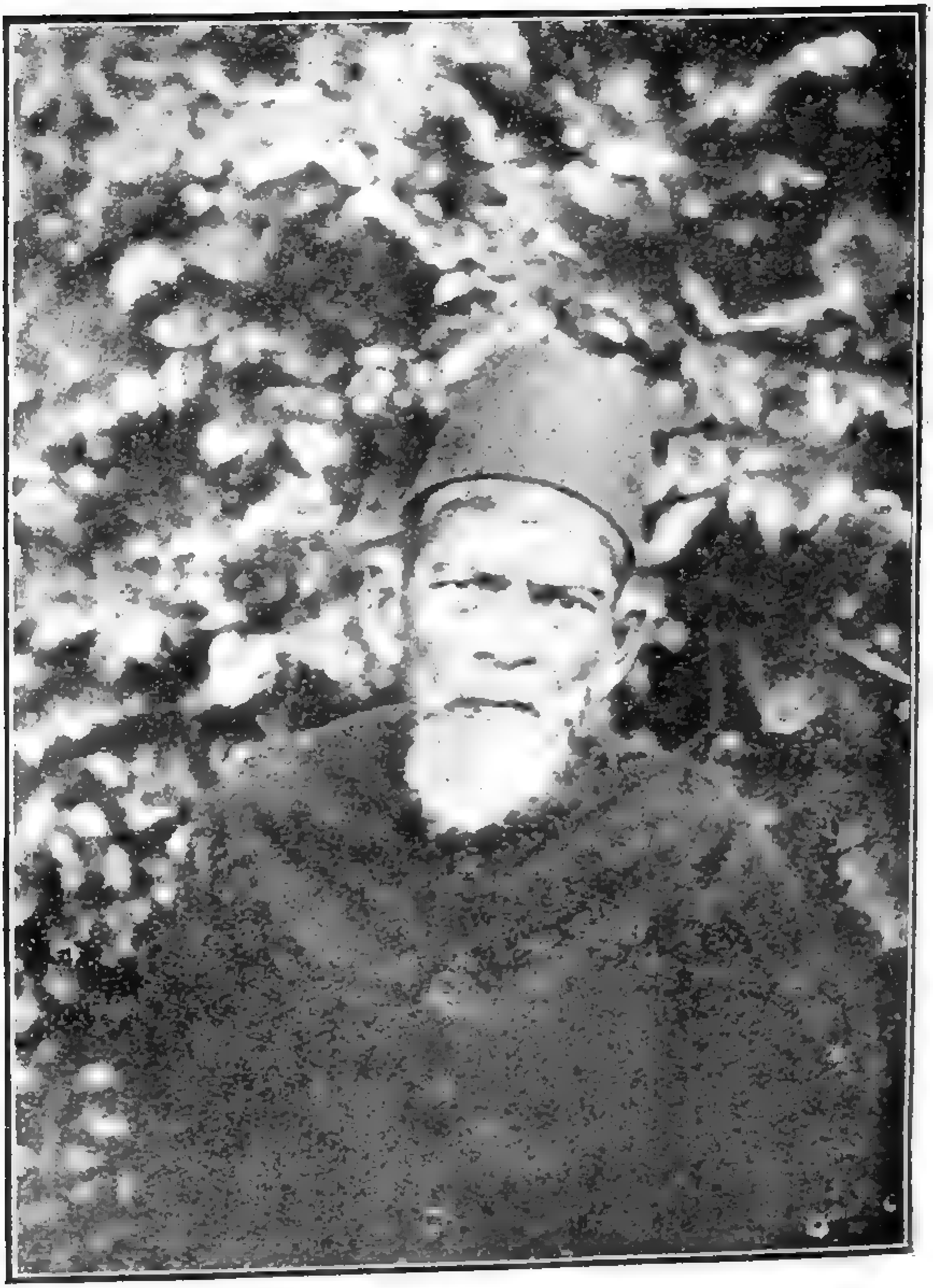
شمس العلما مولوی محمد حسین صاحب آزاد دہلوی



अब्दुल हलीम शरर

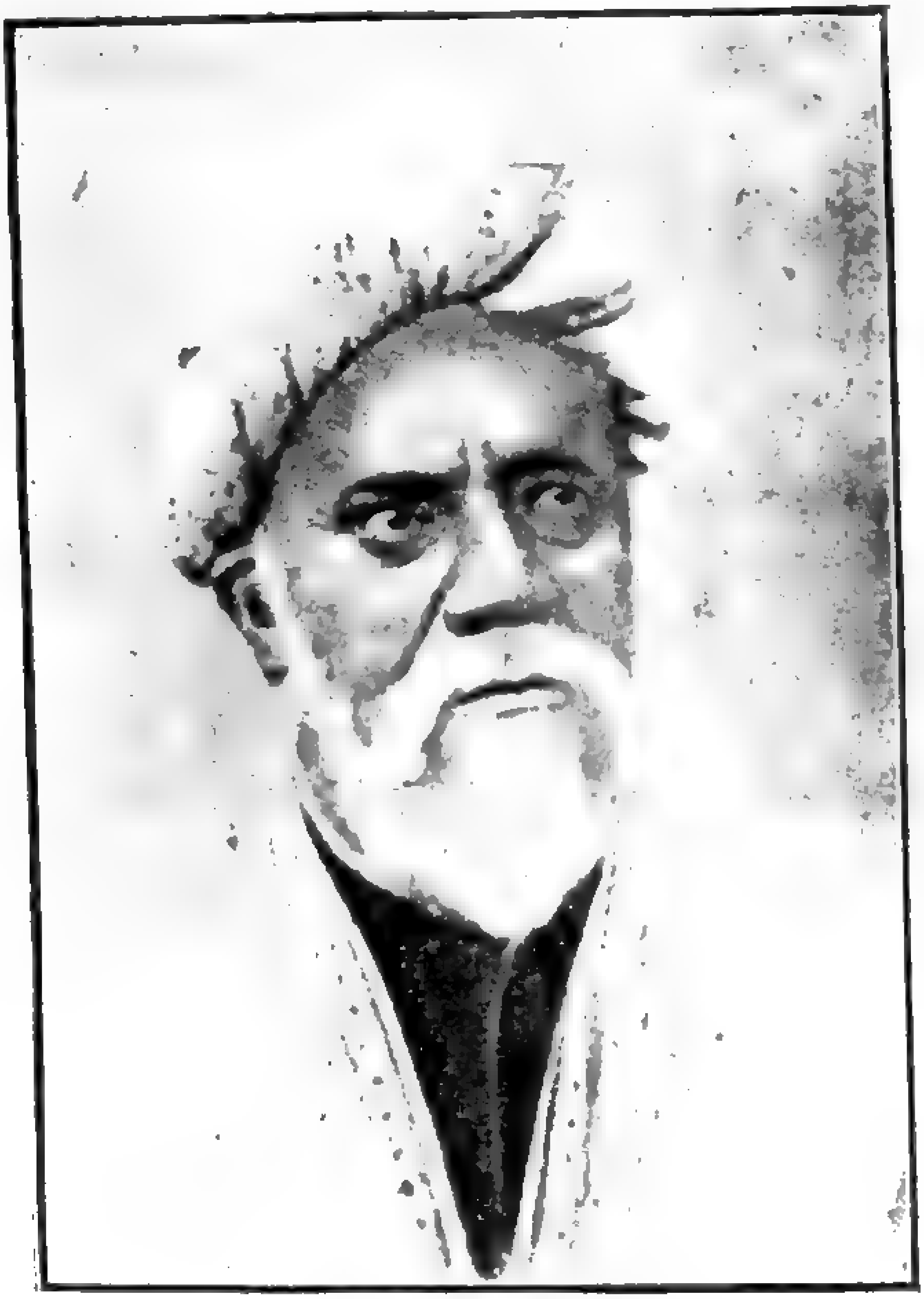


शिबिली नौमानी



सैयद अकबर हुसेन

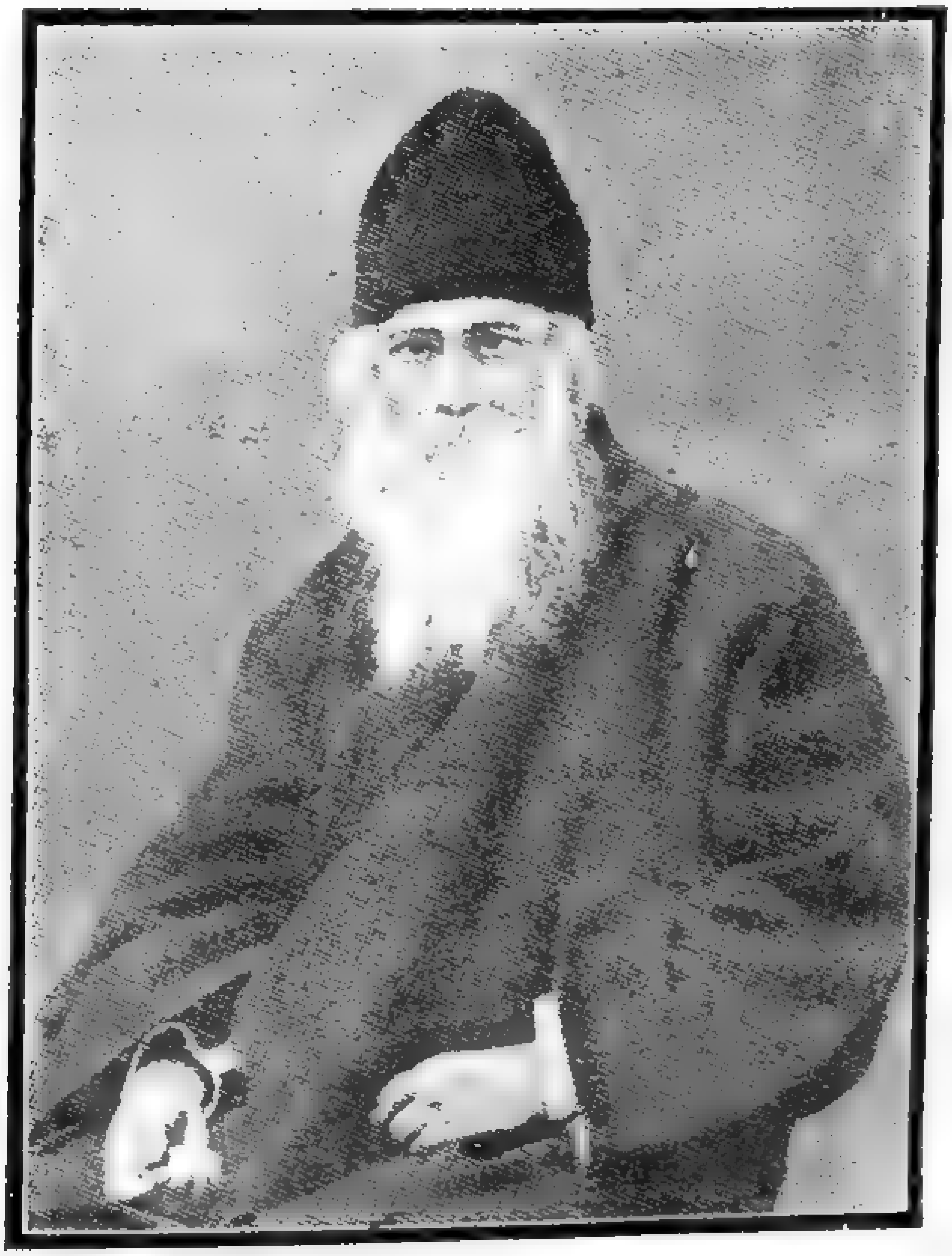
'फ़िसाने आज़ाद' लिखा। इनके अतिरिक्त अल्ताफ़ हुसेन हाली, मोहम्मद हुसेन आज़ाद, डाक्टर नज़ीर अहमद, मौलाना शिबली,



डाक्टर नज़ीर अहमद

मौलाना अब्दुल हलीम शरर, सैयद अकबर हुसेन, पण्डित बृजनरायन चकबस्त, फ़ानी, डाक्टर इक़बाल, आदि उर्दू साहित्य के प्रसिद्ध रत्न समझे जाते हैं।

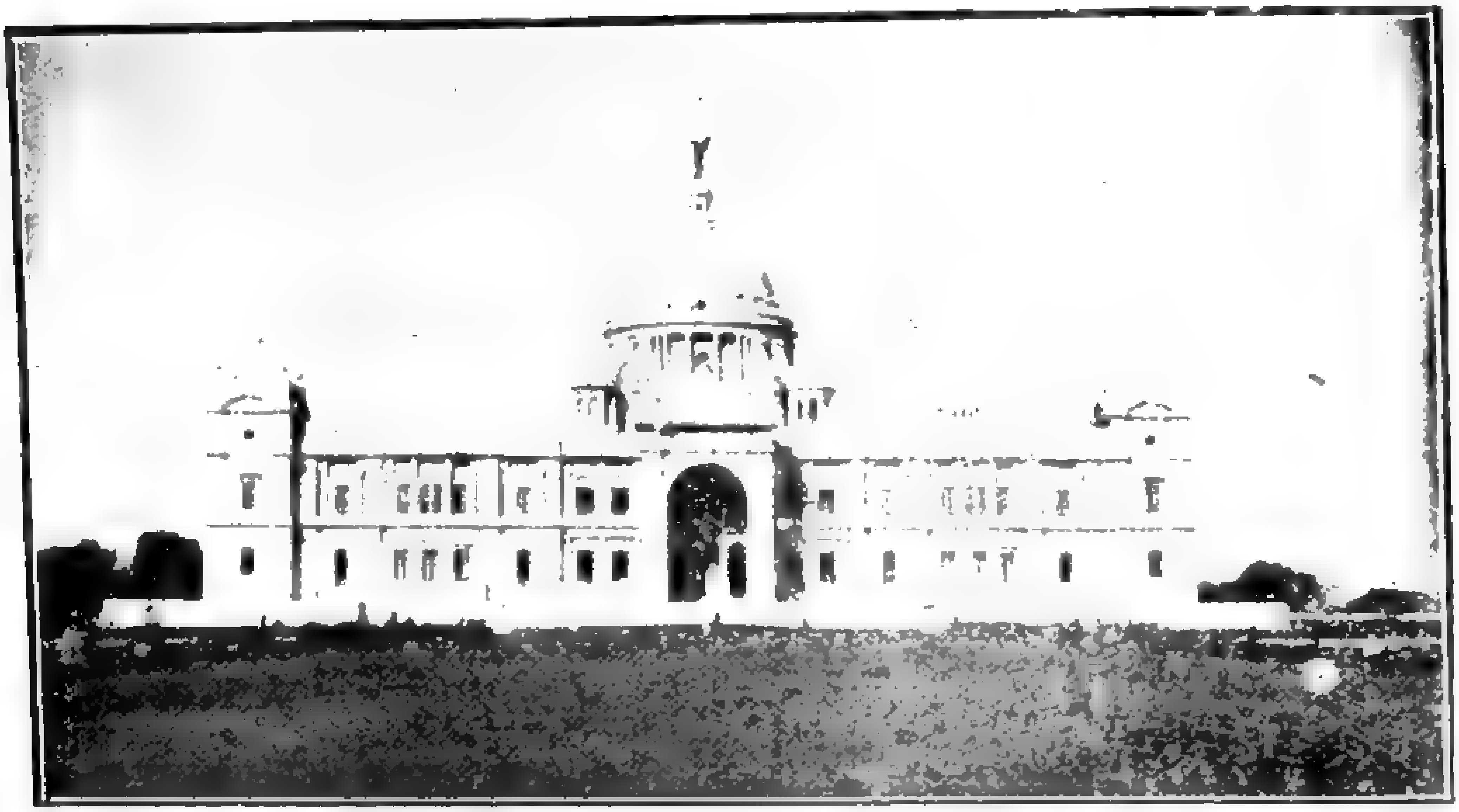
अंग्रेज़ों के समय में बंगला साहित्य ने जितनी उन्नति की है उतनी किसी भी भाषा ने नहीं की। बंगला भाषा के प्रसिद्ध लेखक ईश्वरचन्द्र विद्यासागर, बंकिम चन्द्र चटर्जी, द्विजेन्द्र लाल राय आदि इसी समय में हुए। आज भी बंगाल के प्रसिद्ध



रवीन्द्रनाथ टैगोर

कवि डाक्टर रवीन्द्र नाथ टैगोर संसार में भारतवर्ष का गौरव बढ़ा रहे हैं। इनकी कविता उत्कृष्ट है। इनको "नोबेल प्राइज़" भी मिल चुका है।

भारत की कला भी अँग्रेज़ों के शासन काल में धीरे धीरे उन्नति कर रही है। परन्तु इस पर योरोपीय कला का भी प्रभाव पड़ा है। वास्तु कला ने इस समय में कोई विशेष उन्नति नहीं की है। भारतीय कारीगरों को प्रोत्साहन भी नहीं मिलता। अधिकतर अँग्रेज़ी ढंग की इमारतों का रिवाज हो गया है। फिर भी

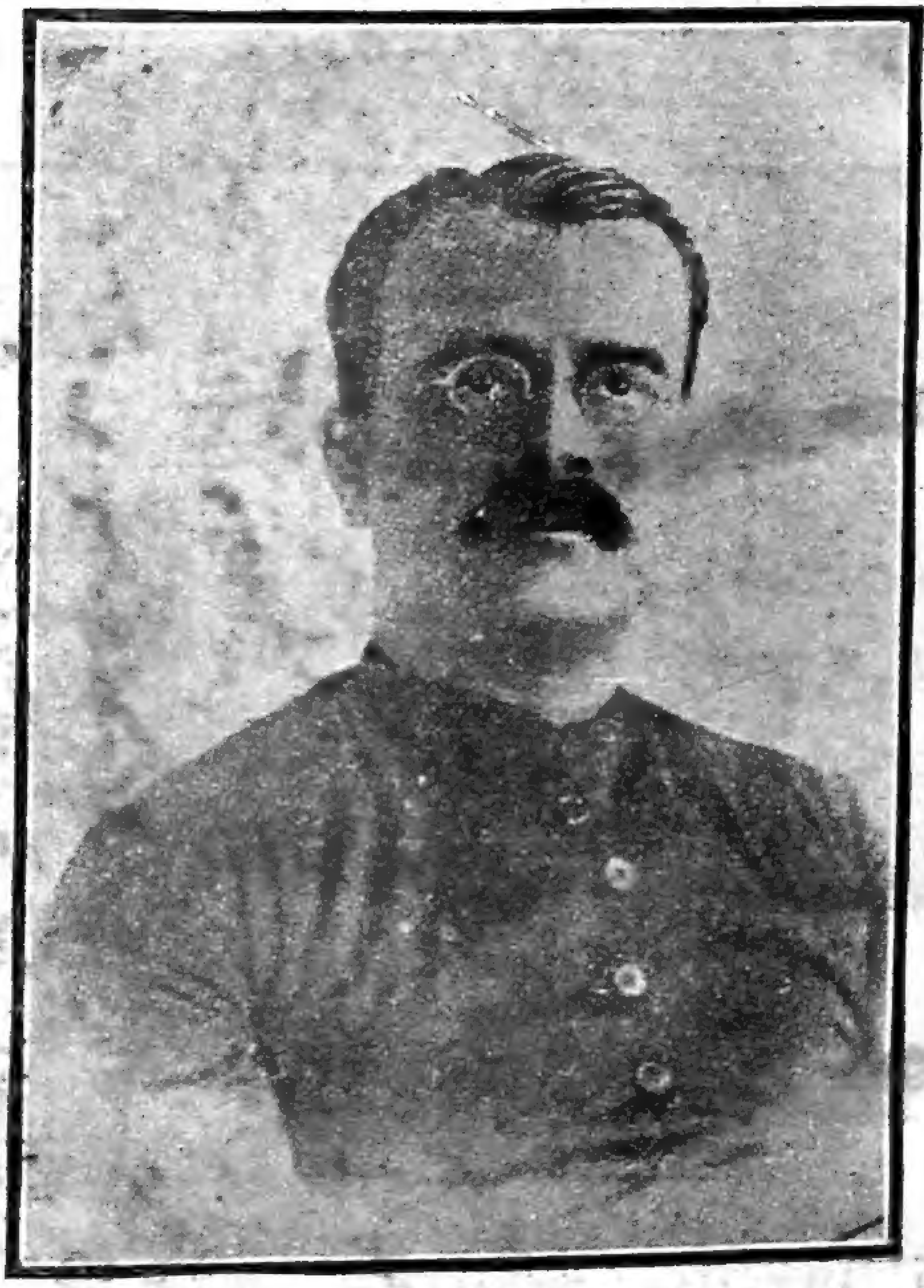


विक्टोरिया मेमोरियल

कलकत्ता के 'विक्टोरिया मेमोरियल' और नई दिल्ली के 'असेम्बली हाल' की कारीगरी सराहनीय है।

चित्र कला में भी बहुत कम उन्नति हुई है और इस पर भी योरोपीय कला का बहुत कुछ प्रभाव पड़ा है। भारतीय चित्रकार अँग्रेज़ों की नक़ल करने लग गये। फल यह हुआ कि

अपनी कला भी भूल गये। हाल ही में पुरानी चित्र कला को फिर से प्रोत्साहन दिया गया है। बंगाल में पुरानी चित्र कला को फिर से बढ़ाने वाले श्री अवनेन्द्र नाथ टैगोर थे। इनकी



पं० बृजनरायन चकबस्त

चित्रकारी निस्सन्देह सराहनीय है। बम्बई में भी चित्रकला का एक नया ही ढंग कायम हो गया है। इन लोगों की चित्रकारी

निराली है जिसमें कि चित्र कला के योरोपीय और भारतीय सिद्धान्तों का समन्वय पाया जाता है।

विज्ञान में भारतवासियों ने अपने आविष्कारों से संसार को चकित कर दिया है। सर जगदीशचन्द्र बसु, सर प्रफुल्लचन्द्र राय और सर सी० वी० रमन का संसार में आज बड़ा आदर होता है। उन्होंने अपने आविष्कारों से यह सिद्ध कर दिया है कि भारतवासी संसार की किसी जाति से कम नहीं हैं।



जगदीशचन्द्र बसु

सारांश—पाश्चात्य सभ्यता के संसर्ग से भारतवर्ष में एक नये युग का प्रादुर्भाव हुआ है। इस युग में भारत दिन दूनी रात चौगुनी उन्नति कर रहा है। ज्यों ज्यों शिक्षा बढ़ती जायगी भारत का भाग्य उदय होता जायगा। किसी दिन भारत भी उच्चता के शिखर पर पहुँच कर संसार को शिक्षा देने योग्य हो जायगा।

ईश्वर वह दिन जल्दी लाये जब स्वतन्त्र होकर भारत के निवासी संसार की सभ्य जातियों में उच्चपद प्राप्त करें।



डाक्टर इक़बाल

प्रश्न

१—ब्रिटिश शासन-काल में साहित्य, कला कौशल आदि में क्या उन्नति हुई है? सक्षेप में लिखो।

२—अँग्रेज़ों के समय में कौन कौन धार्मिक नेता भारतवर्ष में हुए हैं? उन्होंने देश की क्या उन्नति की?


भारतवर्ष - रेलें और मुख्य नगर
अ फ ग़ा नि स्ता न
ति ब्ब त
पं जा ब
रा ज पू ता ना
सि न्ध
म ध्य भा र त
उ ड़ी सा
है द रा बा द
मै सू र
भू टा न
आ सा म
ब्र ह्मा
श्या म
लं का
अ र ब सा ग र
बं गा ल की खा ड़ी
कर्क रेखा
पेशावर
रावलपिंडी
श्रीनगर
लाहौर
मुलतान
नैनीताल
दिल्ली
जयपुर
अजमेर
ग्वालियर
दरभंगा
भागलपुर
अहमदाबाद
इन्दौर
भूपाल
सूरत
नागपुर
औरंगाबाद
बम्बई
पूना
सिकन्दराबाद
हैदराबाद
पुरी
गोआ
मद्रास
कालीकट
त्रिचनापली
कोलम्बो
माण्डले
मोलमीन
लकाद्वीप
मालद्वीप
अण्डमन द्वीप समूह
निकोबार द्वीप समूह
ब्रह्मपुत्र नदी